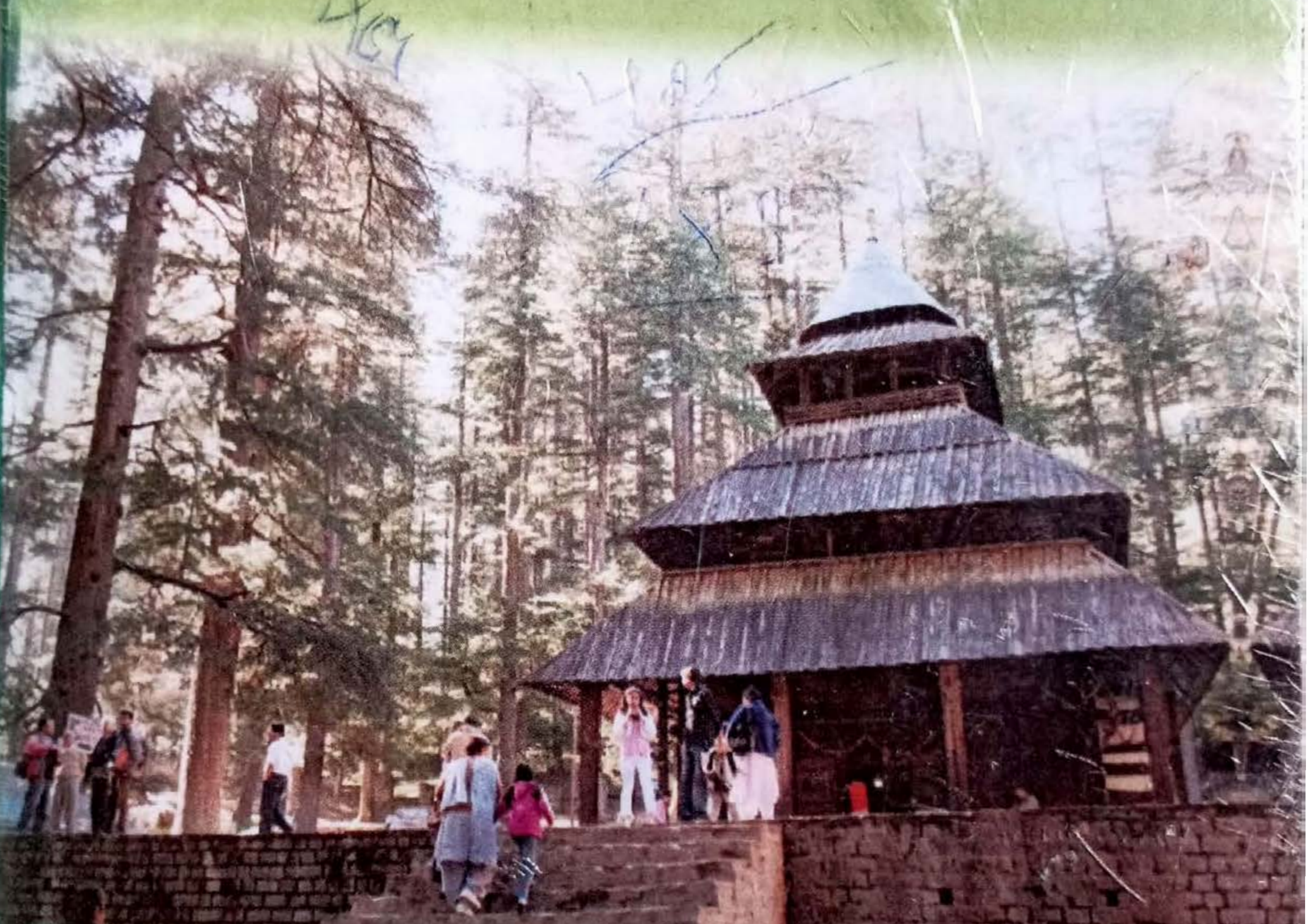
कुल्लू का इतिहास
एवम्
संस्कृति



सत्यपाल भटनागर

कुल्लू का इतिहास

एवम्

संस्कृति

शिक्षा निदेशक हिमाचल प्रदेश पत्र संख्या
शिक्षा ए.जी. (8)(3) 1/82 दिनांक 15–6–98)
द्वारा
हिमाचल के सब पुस्तकालयों के लिये स्वीकृत

दूसरा संस्करण
(संशोधित तथा विस्तृत)

लेखक : सत्यपाल भटनागर
सेवा निवृत प्राचार्य

अनुपम प्रकाशन
100, अखाड़ा बाजार, कुल्लू, हि.प्र.

प्रकाशक : अनुपम प्रकाशन
100, अखाड़ा बाजार, कुल्लू

लेखक : सत्यपाल भटनागर

लेजर कम्पोजिंग : भटनागर फोटोस्टेट, कुल्लू (हि०प्र०):

मुद्रक : गुप्ता आफॅसेट प्रिटर्ज़,
कुल्लू (हि०प्र०)

मुल्य : 150 /– रूपये

दूसरा संस्करण : 2007 (500 प्रतियां)

-: क्या-क्या / कहां-कहां :-

क्र. विषय सूची **पृष्ठ संख्या**

1. प्राक्कथन

कुल्लू भूमि से सम्बन्धित होने के कारण मुझे सदा इसके इतिहास जानने की जिज्ञासा रही। परन्तु कुल्लू इतिहास के बारे में जानकारी पहले मिली ही नहीं। जब मिली तो उसे टुकड़ों में और टूटी हुई कड़ियों में पाया। यह ऐसी जलधारा की तरह प्रतीत हुई जो बहते — बहते अचानक लुप्त हो जाती है और फिर आगे जाकर चशमें के रुप में फूट पड़ती है। कुल्लू इतिहास के बारे में पुस्तकें न होने के बराबर है। कारण सामग्री का उपलब्ध न होना। श्री लाल चन्द प्रार्थी ने "कुलूत देशा की कहानी" नामक पुस्तक लिखी। परन्तु ऐतिहासिक दृषिट से इस पुस्तक का अधिक महत्व नहीं है।

अतः मैंने स्वयं कुल्लू की ऐतिहासिक सामग्री इकट्ठा कर पुस्तक लिखने का निर्णय किया। मेरे कुछ सहयोगियों ने मेरा साहस बढ़ाया और सामग्री भी उपलब्ध करवाई। इनमें पुरोहित चन्द्रशेखर, ठाकुर खूब राम कराड़सू तथा प्रो. नानक चन्द शर्मा विशेष हैं। ठाकुर मोहर सिंह "सीस" (कार्यालय, ज़िला शिक्षा अधिकारी, कुल्लू) ने निशुल्क टंकण शैली एवं टंकण तकनीक आदि कार्य निभाने का आशवासन देकर मेरा कार्य और भी आसान कर दिया। मैं इन सबका आभार व्यक्त करता हूँ।

कुल्लू का इतिहास अति प्राचीन है। यहां का राजवंश संसार के उन कुछ राजवंशों में से एक है जिसका इतना लम्बा इतिहास हो। अपने समृद्ध समय में कुल्लू राज्य लगभग 10,000 वर्ग मील तक फैला हुआ था। इसमें लाहुल स्पिति, बड़ा भंगाल और छोटा भंगाल तथा सतलुज पार के क्षेत्र सम्मिलित थे। कुल्लू की उतनी ही गौरवमयी संस्कृति रही है। इस क्षेत्र से कई ऋषियों ने नाता जोड़ा। यह हिमाचल की ही नहीं, अपितु भारत की प्राचीनतम सभ्यता का क्रीड़ा स्थल होने का गर्व कर सकती है। समय—समय पर यहां आक्रमण होते रहे परन्तु फिर भी इसने अपनी विशिषट संस्कृति बचाये रखी। इसकी अपनी अनूठी परम्परायें हैं। इसके मलाणा क्षेत्र में संसार के प्राचीनतम लोकतन्त्र की झलक मिलती है। शताब्दियां बीतने पर भी इसमें कोई अन्तर नहीं आया। प्राकृतिक सौंदर्य के बीच पलने वाले कुल्लू निवासी स्वयं सदा नाच, गाने और फूलों के शौकीन रहे हैं। स्मृद्धि, शिक्षा, आधुनिकता भी इस शौक में कमी न ला सकी। मैंने पुस्तक में इन पहलुओं को भी सामने लाने का प्रयास किया है।

मुझे आशा है कि यह पुस्तक अपने इतिहास और संस्कृति को नई पीढ़ी तक पहुंचाने तथा सेतु का कार्य निभाने में सफल होगी।

"महाशय" सत्य पाल भटनागर

पाठकों से निवेदन

कुल्लू इतिहास सम्बन्धी यदि कोई जानकारी या सामग्री आप के पास हो तो कृपया उपलब्ध करायें ताकि अगले संस्करण में उसे भी पुस्तक में सम्मिलित किया जा सके।

"लेखक"

2. प्रस्तावना

अमरीका के राष्ट्रपति तथा राजनितिज्ञ अब्राहम लिंकन ने एक बार कहा था — 'You can not build future by forgetting the past' अर्थात अतीत को भुला कर तुम भविष्य को नहीं बना सकते। और प्रसिद्ध दार्शनिक बर्के ने कहा है— 'People will not look forward to posterity who never look backward to their ancestors', अर्थात जो लोग पीछे मुड़ कर अपने पूर्वजों को नहीं देखते वे आगे की संतति (की भलाई) को भी नहीं देख पाएंगें। इन दो तथा विश्व के अनेक महान विद्वानों के मतानुसार जब तक मनुष्य अपने अतीत को भली भान्ति नहीं जान लेता तब तक वह भविष्य के उज्जवल सपनों को साकार नहीं बना सकता और भूत अथवा अतीत की जानकारी का एक मात्र साधन इतिहास है।

इतिहास से अभिप्राय मात्र राजाओं, बादशाहों या सम्राटों के विजयों और पराजयों के विवरण से नहीं है। उसमें समस्त सामाजिक और राष्ट्रीय जीवन का अध्ययन समाविष्ट है। भारत का स्वतन्त्रता से पूर्व का इतिहास प्रमुखतः अंग्रेजों द्वारा अथवा अंग्रेजों के दृष्टिकोण से देखा और लिखा इतिहास रहा है। उसमें भारतीय समाज को हीन भावना से देखना तथा उन कमजोरियों को जानना प्रमुख उद्देश्य रहा है। जिनसे भारतीय समाज पराजय की ओर अग्रसर होता रहा है। अंग्रेजों के लिए भारत का काबिज रहने हेतु ऐसी परिस्थितियों और अध्ययनों का ज्ञान आवश्यक था। तथापि, जो भी तथ्य रहा हो भविष्य के अध्ययन के लिए उस इतिहास की पूर्णतः अनदेखी नही की जा सकती।

वर्तमान हिमाचल प्रदेश से सम्बन्धित क्षेत्र का इतिहास जे. हेचीसन और जे. वोगल की पुस्तकें "हिस्ट्री ऑफ पंजाब हिल स्टैटस तथा विभिन्न गज़ेटियरज में बिखरा पड़ा हैजिसे समंजित किए जाने की आवश्यकता अनुभव की जा रही है।

कुल्लू के इतिहास से सम्बन्धित प्राचीनतम अभिलेख एक सिक्का है जो सर ए. कन्निघम को मिला था और जिसे उसने अपनी पुस्तक "कौइन्ज ऑफ एनशेंट इण्डिया खण्ड 14, प्लेट चार, पृ. 67'' पर विस्तृत उल्लेख के साथ उद्घृत किया गया है। परन्तु इसकी सही जांच और परख स्वीडन के विद्वान डॉ. ए. बी. बर्गनी ने की थी (जर्नल ऑफ दी रॉयल एश्याटिक सोसायटी, 1900, पृ. 415—421) बाद में पॉ. रायसन और डॉ. हीरा नन्द शास्त्री ने (आर्कियोलोजिकल सर्वे रिपोर्ट, 1907—1908, पृ. 2647265) इस सिक्के पर विशेष अध्ययन किया और हेचीसन तथा वोगल ने इसे स्वीकारा तथा अपनी पुस्तक में उसे प्रतिष्ठित स्थान दिया।

उक्त सिक्के में उत्कीरित शब्दावली "राज्य कालूतस्य वीरयशस्य" के आधार पर विश्व भर के पूर्वोक्त एवं अन्य विद्वानों ने एकमत से यह स्वीकार किया हैकि "कोलूत" शब्द वर्तमान "कुल्लू" क्षेत्र के लिए आया है। वीरयश यहां का सम्राट था तथा यह सिक्का ईसा की पहली अथवा दूसरी सदी के सम्राट वीरयश का

है स्पष्ट हैकिं जब अन्तर–राष्ट्रीय स्तर पर यह मान लिया गया कि वर्तमान कुल्लू का प्राचीन नाम कोलूत या कुलूत था और उसके आधार पर प्रथम सदी ईसवी से लेकर कुल्लू का इतिहास लिखा गया, तो विद्वानों और साहित्याकारों के लिए यह स्पष्ट आधार सिद्ध हो गया कि प्रथम सदी से पीछे का इतिहास खोज निकाला जाए।

परन्तु 1907–08 से लेकर 1974–75 तक यह शोध कार्य किसी ने नहीं किया और जब यह उपक्रम उस विद्वान ने किया जिसे हम लाल चन्द प्रार्थी चांद कुलवी के नाम से जानते हैं। स्वर्गीय प्रार्थी ने कुलूत अर्थात कुल्लू का संदर्भ मार्कण्डेय पुराण, विष्णु पुराण, वृहन्तसंहिता, महाभारत और रामायण में ढूंढा, उन संदर्भों को व्यवस्थित किया तथा कुल्लू के इतिहास को ईसा पूर्व शताब्दि से पौराणिक तथा महाभारत एवं रामायण काल तक क्रमबद्ध किया। यही नहीं उन्होंने वेदों में उल्लिखित "उषा के शक्कट" की घटना को अर्जीकीय अर्थात व्यास के उपरी क्षेत्र से जोड़ कर तथा मनु के जलप्रलय के सदंर्भ को मनाली से तर्कसंगत सम्बद्ध करके कुल्लू के इतिहास को वैदिक कालीन इतिहास तक जा पहुंचाया। उनका यह उपक्रम तथा कुल्लूत देश की कहानी ग्रन्थ चिरस्मरणीय रहेगा।

स्वर्गीय प्रार्थी का कहना था कि मैंने कुल्लू के इतिहास को आदिकाल से लेकर ईसा की प्रथम सदी तक लाकर खड़ा किया हैऔर इससे इस ओर का लेखन कार्य अब आसान है। परन्तु हम सभी यह मानते हैं कि यह कार्य इतना सहज नहीं है हां, प्रिंसीपल सत्यपाल महाशय ने वर्तमान पुस्तक के माध्यम से इसे निष्चय ही सरल और सफल किया है। श्री महाषय इतिहास के सिद्धस्त विद्वान तो है ही, उन्होंने स्नातकोतर उपाधि इतिहास में ही प्राप्त की है। साथ ही यह एक लम्बे समय तक अध्ययन–अध्यापन व्यवसाय में सम्बद्ध रहे हैं और इस व्यवसाय से इन्होंने भरपूर लाभ उठाया है। सामग्री के अध्ययन से स्पष्ट होता है कि यह एक देरीना योजना रही है और इन्होंने इसकी सम्पन्नता के लिए बहुत परिश्रम और संघर्ष किया है। बतौर प्रिसींपल और मुख्याध्यापक के इन्हें विभिन्न विशिष्ट हस्तलेखों और पुराने साहित्य के अध्ययन का सुअवसर मिला है तथा इन्हें अनेक स्थानीय विद्वानों और बुजूर्गों के साथ सम्पर्क रहा है जिनसे इन्हे समय–समय पर अपेक्षित सूचनाएं और सामग्री प्राप्त होती रही है।

इतिहास जैसे विशिष्ट विषय पर लिखना बिना उत्कृष्ट स्रोत सामग्री के सम्भव नहीं है। यह सौभाग्य की बात है कि श्री महाशय को अन्य पुस्तकों और सामग्री के अतिरिक्त दो दुर्लभ हस्त लेख प्राप्त हुये हैं। – 1. हरदयाल का कुल्लू का हस्तलिखित इतिहास तथा 2. नाथूराम सुपरिटेण्डेण्ट का कुल्लू का हस्तलिखित इतिहास। इनमें हरदयाल राजा दलीप सिंह (1875–1888) के समय तैहसीलदार और दीवान था तथा इनकी पुस्तक का अनेक रचनाओं में नाम आया है, परन्तु यह आज तक किसी रचनाकार को प्राप्त नहीं हुई है। यह प्रसन्नता की बात है कि वर्तमान पुस्तक के विद्वान लेखक को यह उपलब्ध प्रतिष्ठित हस्तग्रन्थ प्राप्त हुआ। दूसरे ग्रन्थ के लेखक नाथूराम के बारे में स्पष्ट जानकारी इस पुस्तक के अध्ययन से

सामग्री स्रोत की प्रमाणिकता तथा मौलिकता पर सन्देह की गुंजाइश नहीं है और पुस्तक में निश्चय ही अत्यन्त, शोधपूर्ण दृष्टिकोण और तर्कसंगत विवरण ने कुल्लू के इतिहास के संदर्भ में कुछ महत्वपूर्ण और दिलचस्प तथ्य प्रस्तुत किए है जिसे इन्होंने बड़े ही सुव्यवस्थित रुप में संजोया है। राजाओं के विजयों–पराजयों, शासन व्यवस्था, पड़ोसी राजाओं के साथ सम्बन्ध और प्रजा की स्थितियों की बड़े गंभीर रुप से चर्चा हुई है। लेखक ने राजा द्विज पाल, राजा प्रताप सिंह (1559–1584) , राजा कल्याण सिंह, राजा हरि सिंह तथा राजा रणवीर सिंह के बारे में प्रमाणिक और संवागपूर्ण जानकारी उपलब्ध कराई है। जबकि "हिस्ट्री ऑफ पंजाब हिल स्टेटस" में इनके मात्र नाम गिनाए गए है। इसके अतिरिक्त सिद्ध सिंह, बहादुर सिंह, मान सिंह, जय सिंह प्रताप सिंह (1825–57) और ठाकुर सिंह के सम्बन्ध में और अधिक तथ्यात्मक विवरण प्रस्तुत हुयें है। इनमें भी मानसिंह के बन्दोबस्त और प्रताप सिंह के स्वतन्त्रता संग्राम के प्रति योगदान विशेष रुप से उल्लेखनीय हैं।

यह एक सर्वमान्य तथ्य है कि जहां लिखित सामग्री उपलब्ध न हो वहां जनश्रुति और लोक विश्वास इतिहास के महत्वपूर्ण स्रोत होते हैं। यह प्रशंसा की बात है कि श्री महाशय ने अनेक जनश्रुतियों और धारणाओं के द्वारा अपने कथन को पुष्ठ किया है तथा इन जनश्रुतियों और कहावतों का खुल कर प्रयोग किया है। उदाहणार्थ :

कौलिये – कौलिये,
गौहरु, बौंदलू मूंए जौलिए।
घराकड़ू मूंए आपे,
टीटी मेहता मुआं राणी मारने रे पापे।।

उपरोक्त लोकोक्ति राजा सिद्ध सिंह और राणा भोसल के काल की घटनाओं से सम्बन्धित है। तब व्यास के वायें किनारे ठाकुरों (पिती ठाकुरों) का बड़ा दबदबा था। उन्हें परास्त करना आसान न था। सिद्ध सिंह ने उनमें ईर्ष्या द्वेष और आपसी फूट डाल कर उन्हें जीता। गाहर, बन्दल और काईस के ठाकुर इसी चाल से नष्ट किए गए। भोसल राणा के वजीर टीटा मेहता ने दगावाजी से राणी को कूहल में दफना दिया था कि राणी की बलि से कुहल और खेतों में पानी आयेगा। इस कुकर्म के कारण टीटा मेहता का सर्वनाश हो गया था। वास्तव में कुल्लू के इतिहास से सम्बन्धित इस तरह की अनेक अनुश्रुतियां और परम्पराएं प्रचलित हैं और लेखक ने उसका भरपूर लाभ उठाया है तथा इनसे सम्बन्धित तथ्य अधिक विश्वसनीय और मनोरंजक बने है।

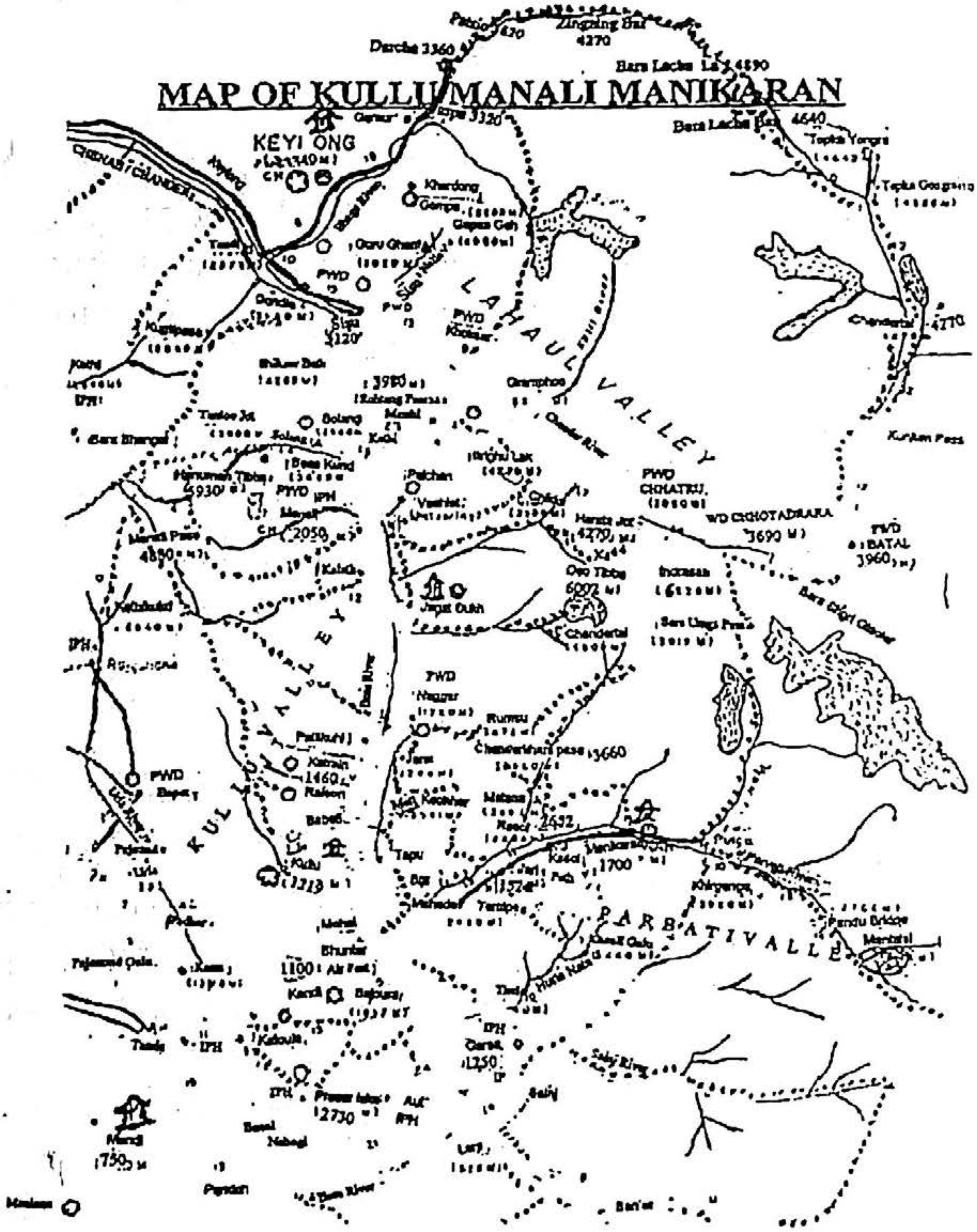
"हिस्ट्री ऑफ पंजाब हिल स्टेट्स" पहली बार 1933 में प्रकाशित हुई थी तथा चम्बा और बिलासपुर आदि रियासतों का इतिहास 1921 तक इसमें सम्मिलित हुआ है,परन्तु कुल्लू का इतिहास के राजा मान सिंह के केवल सामान्य परिचय के साथ 1869 में तुरन्त समाप्त हुआ है। वर्तमान पुस्तक के विद्वान लेखक ने इस कमी को पूरा किया है और कुल्लू के इतिहास को अद्यतन प्रस्तुत किया है जिसके लिए ये बधाई के पात्र हैं। यही नहीं, इन्होंने पुस्तक के ऐतिहासिक खण्ड केवल

इतिहास तक सीमित नहीं रखा है, अपितु शासन प्रणाली, सैनिक प्रबन्ध, राजस्व प्रणाली, न्याय पद्धति, स्वतन्त्रता संघर्ष आदि शीर्षकों के अधीन विशिष्ट सामग्री जुटा कर कोई भी प्रमुख विषय अछूता नही छोड़ा है। पुराने समय में कोट और गढ़ युद्ध सम्बन्धी अत्यन्त सामरिक महत्व के स्थान हुआ करते थे। पुस्तक में इन पर बड़ी दिलचस्प चर्चा हुई है।

पुस्तक की एक और विशिष्टता कुल्लू की समृद्ध सांस्कृतिक धरोहर है जिस पर लेखक ने उत्कृष्ट विवेचन प्रस्तुत किया है। चित्रकला, भाषा, साहित्य, धर्म, मेले, मन्दिर, लोक–नाट्य, नृत्य, सामाजिक जीवन, मुखौटे आदि शीर्षकों के अर्न्तगत कुल्लू की सांस्कृतिक पृष्ठभूमि पर विशिष्ठ सामग्री उपलब्ध हुई है।यह सामग्री इस क्षेत्र में काम करने वाले छात्रों और शोधकर्ताओं के लिए विशेष रुप से लाभदायक होगी।इस प्रकार यह पुस्तक इतिहास के साथ–साथ सामाजिक तथा सांस्कृतिक दृष्टि से भी अत्यधिक महत्वपूर्ण है और इसकी अपनी महता है। हिमाचल प्रदेश के इतिहास से सम्बन्धित पुस्तकें बहुत कम उपलब्ध होती हैं। वर्तमान पुस्तक इस क्षेत्र में एक अनूठी देन है। आशा है कि साहित्य जगत में इसका भरपूर स्वागत होगा।

(मौलूराम ठाकुर)
सेवानिवृत उप–निदेशक (भाषा एवं संस्कृति विभाग)
देवप्रस्थ भवन, ढालपुर, कुल्लू

3. मानचित्र कुल्लू



LEGEND

HABITATION		RIVER	
ROAD		LAKE	
ON FOOT		TEMPLE	

4. पाठकों की राय

प्रिय मित्र सत्यपाल जी,

सप्रेम नमस्ते।

चिरकाल के पश्चात सेवा में पत्र लिखने का शुभ अवसर मिला है। मैंने आपकी लिखी हुई पुस्तक कुल्लू का इतिहास पढ़ी। आप को शुरू से ही लिखने का शौक था। आपने पुस्तक लिखने मे बड़ी मेहनत की है। उत्तम पुस्तक है। आप बधाई के पात्र हैं। मेरी शुभ कामनायें आप के साथ है। भगवान आप को इन शुभ कार्यों के लिये शक्ति दें।

आपका मित्र
;सोनम रामद्ध
कनिष्ठ अभियंता (सेवा निवृत)
गांव कूटा, डा. बड़ाग्रा तह व जिला कुल्लू

2. आदरणीय श्री सत्यपाल जी,

सादर नमस्कार।

आप द्वारा लिखित कुल्लू का इतिहास एवं संस्कृति नामक पुस्तक एक शोध कार्य हैं। पुस्तक में आपने कुल्लू के इतिहास, संस्कृति एवं अर्थव्यवस्था पर गहन अध्ययन कर समाज को एक सौगात दी है। इस परिश्रम पूर्ण कार्य के लिये मैं आपको बहुत बहुत शुभकामनायें एवं हार्दिक बधाई देता हूं। मेरी प्रभू से यही प्रार्थना है कि आपकी द्रुत लेखनी इसी तरह हिन्दी के पाठकों की जिज्ञासा पूर्ण करती रहे।

पुस्तक का महत्व उसमें लिखे रिफरेंस से नही होती। अतः आप द्वारा स्वयं तैयार किए गए शोध से होती है। आपने जो कार्य किया है वो आपकी शोध पूरक उपज है जिस पर आपको मैं पुनः बधाई देता हूं।

शुभाकांक्षी
नागेन्द्र नेगी
बलीभद्रा भवन ब्रो,
द्वारा नगीना होटल रामपूर बूशैहर जिला शिमला।

3. 3 May; 2000

My Dear Mr.Bhatnagar,

Greetings!

Some how, I have come across your book in Kullu (in Hindi).I have to compliment you on writing and bringing up such a reference document. through its contents seen briefly, I find that you have taken pains to collect useful material for Kullu people, to read preserve and cherish . what about its sale?

Have you read my book on "Kullu Himalayan abode of the Divine"? I am not well versed in Hindi, so unable to offer my comments in detail. keep it up.

Writing you all the best and wih kindest regards,

Yours Sincerely,
Dile Ram
Ex M.L.A

4. Dear Worthy Mahasha ji, Dated 18.12.96

No praise is too high for the first so detailed work attempted and produced by you in the shape of the book titled "Kullu ka Itihas Avum Sanskriti". I have gone through the contents thoroughly. For a person attempting a subject beyond his sphere is tremendous difficult. Yet you have accomplished this historical feat for which I heartily congratulate you.

With regards

Yours ever
Chet Ram Thakur(Rtd.)
Distt Panchayat Officer
V&PO Nagar Distt. Kullu

5. जिला की भौगोलिक जानकारी

स्थिति

कुल्लू जिला उत्तर पूर्व से लाहुल स्पिति तथा चम्बा जिला, पूर्व तथा दक्षिण पूर्व में किन्नौर तथा शिमला जिला से तथा दक्षिण पश्चिम में कांगड़ा तथा मण्डी जिला से घिरा हुआ है। कुल्लू के पश्चिम में बड़ा भंगाल श्रृंखला है जो इसे कांगड़ा से पृथक करती है। दक्षिण में धौलाधार पर्वत है जो बाह्य हिमालय का भाग है। उत्तर पूर्व में मध्य हिमालय की पर्वत श्रृंखला है जो इसे लाहुल घाटी से पृथक करती है। सबसे ऊँची चोटियां इन्द्रासन 6220 मीटर तथा देऊ टिब्बा 6001 मीटर है। यह उत्तरी गोलार्ध में 30—20 अक्षांश तथा पूर्व में 76—59 से 77—5 डिगरी रेखांश में स्थित है। कुल्लू 1962 तक कांगड़ा जिला का उपमण्डल था। 1963 में यह जिला बना। इस समय इसमें कुल्लू बन्जार तथा आनी उपमण्डल और निरमण्ड तथा मनाली तहसील एवं सैंज उप तहसील हैं। पांच विकास खण्ड कुल्लू, नगर, बंजार, आनी तथा निरमण्ड विकास की दृष्टि से बनाये गये हैं।

क्षेत्रफल

सर्वेयार जनरल के अनुसार जिला का क्षेत्रफल 5503 वर्ग कि. मी. है। यह हिमाचल प्रदेश के कुल क्षेत्र का 9.76 प्रतिशत भाग है। आकार की दृष्टि से प्रदेश के जिलों में कुल्लू का स्थान चतुर्थ है।

घाटियां

कुल्लू की प्रमुख घाटी व्यास नदी के साथ उत्तर से दक्षिण की ओर फैली है। यह संसार की सुन्दरतम घाटियों में से एक है। इसके अतिरिक्त पार्वती, गड़सा, फोजल नाल, लग, सैंज, तीर्थन, गुशैणी, कुर्पन तथा आनी घाटियां कुल्लू जिला में हैं। घाटियां 650 से 6000 मी. की ऊंचाई लिये हुये है।

दर्रे (जोत)

मानतलाई ; सुमोद्व जोत

मानतलाई जोत स्पिति तथा मणीकर्ण को जोड़ता है। ऊंचाई 16000 फीट (5225 मी.) है। रास्ता कठिन है। अनुमान है, मुहम्मद तुगलक की एक लाख सेना ने इसी रास्ते से तिब्बत तथा लद्दाख (जिसे कुल्लू के लोग छोटा चीन कहते थे) पर आक्रमण किया था। इस रास्ते से अधिक आवागमन नहीं

होता। रास्ता कठिन तथा हिम खण्डों से भरा हुआ है। नाले अधिक है। इससे सीधे पिन घाटी में प्रवेश पाया जा सकता है।

हामटा जोत

स्पिति तथा कुल्लू के बीच स्थित है। ऊंचाई 4268 मीटर (4000 फीट) है। मनाली से 23 कि. मी. दूर है। मई से सितम्बर तक रास्ता खुला रहता हैं स्पिति के ठाकुर इसी जोत से कुल्लू आते जाते रहे हैं। पुराने समय का स्पिति के लिए सबसे महत्वपूर्ण रास्ता रहा है।

मनाली जोत

इसकी ऊंचाई 4200 मीटर है। मनाली से 8 कि. मी. दूर है। बड़ा भंगाल तथा मनाली को जोड़ता है। कांगड़ा से व्यापार का पुराना मार्ग हैं। जून से अक्तूबर तक खुला रहता है। रानी सुई मार्ग भी इसे ही कहते हैं। किसी रानी ने यहां से गुजरते हुए बच्चे को जन्म दिया जिसने बडे होकर कुल्लू तथा कांगड़ा दोनों पर राज्य किया।

चन्द्रखनी जोत

12000 फीट ऊंचा है। नगर से 6 कि. मी. दूर है। आसान चढ़ाई है। खच्चर रास्ता है। मलाणा तथा नगर घाटी को मिलाता है।

सरी जोत

15108 फीट ऊंचा है। कुल्लू तथा बड़ा भंगाल के क्षेत्र के बीच है। सरवरी के उद्‌गम स्थल के निकट है। यहां से मण्डी क्षेत्र भी पास है। राजा मान सिंह इसी क्षेत्र के रास्ते भंगाल की रक्षा के लिए गया था।

भूभू जोत

9480 फीट ऊंचा है। पुराना रास्ता है। काला नमक गुमा से इसी जोत से लाते थे। अब भी भेड़ बकरी का रास्ता है। मोटर चलने से पहले डाक इसी रास्ते से लाई तथा ले जाई जाती थी।

दुलची या कण्ढी जोत

मुरक्राफ्ट इसी रास्ते 1820 ई. में आया था। यही एक जोत है जो सारा साल खुला रहता है और इस पर बर्फ बहुत कम पड़ती हैं। इसे कण्ढी जोत भी कहते है। इसकी ऊंचाई 6750 फीट (2788 मीटर) है। पुराना व्यापारिक रास्ता है। अब पक्का बस का रास्ता है तथा बस सेवा उपलब्ध है। मण्डी तथा कांगड़ा राजाओं ने मिल कर इसी रास्ते से आक्रमण किया था।

बजौरा (कुल्लू) तथा मण्डी को मिलाता है। बजौरा से मण्डी इसी रास्ते 58 कि. मी. है। सड़क का निर्माण 1881 ई. में डब्लयू. परकिस ने किया था।

रोहतांग जोत

ऐसा अनुमान है कि इसका पुराना नाम भृगुतुंग था। इसकी ऊंचाई 13400 फीट (4934 मीटर) है। लाहुल तथा कुल्लू घाटी को जोड़ता है। कश्मीर तथा लद्दाख के रास्ते भी यहां से गुजरते है। यहां से ट्रक तथा बस चलने के लिए पक्की सड़क बनी है। व्यास नदी का उद्गम स्थल यही है। तेज हवायें चलती है। बर्फ के कारण केवल छः मास खुला रहता है।

जलोड़ी जोत

3135 मीटर या 10000 फीट ऊंचा है। आनी तथा बन्जार घाटियों के बीच स्थित है। मोटर सड़क बनी हैं। जोत पर दृश्य अति सुन्दर है। सर्दियों में बस सर्विस बन्द हो जाती है। क्योंकि रास्ता हिमाच्छादित हो जाता है।

बशलेऊ जोत

3150 मीटर ऊंचा बशलेऊ जोत निरमण्ड तथा गोशैणी घाटी के बीच है। चढ़ाई बड़ी सीधी है। खच्चर रास्ता है। सर्दियों में कठिन जोत है तथा काफी समय बन्द रहता है।

फांगची जोत

सैंज घाटी तथा गड़सा घाटी को जोड़ता है। दूसरा रास्ता दोनों घाटियों के बीच मलाणा से भी जाता है।

नदियां

कुल्लू जिला की प्रमुख नदी व्यास है। यह 3978 मीटर ऊंचाई पर स्थित व्यास रिखी झील से निकलती है। भून्तर में इसके साथ पार्वती नदी मिल जाती है और यह एक बड़ी नदी का रुप धारण करती है। लारजी तक इसका मार्ग दक्षिण की ओर है। उसके पश्चात यह पश्चिम की ओर मुड़ जाती है। इसकी सहायक नदियां सोलंग, मनालसु, फोजल, अलीणी, छाकी, सरवरी, पार्वती, सैंज, तीर्थन आदि हैं। व्यास नदी बजौरा से 2 कि. मी. दूर झिड़ी स्थान पर मण्डी जिला क्षेत्र में प्रवेश करती है। आउटर सिराज की नदियां आनी तथा कुर्पन सतलुज नदी से मिलती हैं व्यास नदी में प्रदेश का 27.6 प्रतिशत पानी आता है।

गुफायें

बाग द्वारा गुफा

हाम्टा से सूरतु जाते समय बाग द्वारा गुफायें आती हैं। ये प्राकृतिक गुफायें है। सुरतू से भनारा 6 कि.मी. दूर है।

खेगसु गुफा

लूहरी से एक मील दूर यह गुफा स्थित है। दन्त कथा अनुसार पांडव अज्ञात बास में यहां रहे। पास ही महामाया मन्दिर है।

देऊ ढांक गुफा

निरमण्ड से दक्षिण ओर तीन कि. मी. दूर यह गुफा है। जिसमें शिव लिंग स्थापित है। जल प्राकृतिक रुप में टपकता है। गुफा की ऊंचाई 6 फुट के लगभग है। आस–पास वृक्ष है। आश्रम का आभास होता है।

अर्जुन गुफा

भनारा जाते हुये अर्जुन गुफा है। यह भी प्राकृतिक गुफा है। इस गुफा में कृष्ण जी की मूर्ति स्थापित है। जनश्रुति अनुसार श्री अर्जुन ने ब्रह्म अस्त्र प्राप्ति के लिए यहां तपस्या की थी। इस गुफा को मुरम्मत की आवश्यकता है।

झीलें

कुल्लू घाटी में कई झीलें है। यह सभी बर्फ के पानी से बनी हैं तथा काफी ऊंचाईयों पर स्थित है। इन झीलों का पानी प्रायः अति निर्मल होता है। प्रमुख झीलें नीचे दी जाती है:

भृगु सर

यह छोटी झील हैं। इसके किनारे भृगु ऋषि की तपस्थली थी। यह मनाली से दस कि. मी. दूर है। रास्ता विशिष्ट हो कर जाता है और सीधी चढ़ाई है। अन्तिम चार मील चढ़ाई का रास्ता हैं। आधे रास्ते में एक छोटा मैदान और चश्मा आता है।

दशौहर सर

यह झील मनाली से 25 कि. मी. और रोहतांग से 6 किलो मीटर दूर है। ऐसी धारणा है कि इसमें नहाने से चरम रोग दूर हो जाते हैं। इसके साथ कई दन्त कथायें जुड़ी हैं। यह 4200 मीटर ऊंचाई पर स्थित है।

सरीताल (डाहणा) सर

यह सरी जोत पर स्थित हैं इसकी ऊंचाई 14000 फीट है। इसके निकट से सरवरी नदी निकलती है। यह लग घाटी के अन्तिम छोर पर है जिसके दूसरी ओर मण्डी तथा बड़ा भंगाल के क्षेत्र आरम्भ होते हैं। यहां का दृश्य बड़ा मोहक है। रास्ता त्यून (अन्तिम गॉव घाटी का) से हो कर जात है। बस सेवा स्मालंग तक उपलब्ध है। झील का घेरा लगभग एक कि.मी. है।

सिरयोल सर

इसे श्रेयजल सर भी पुकारा जाता है। इसका पानी अति निर्मल है। यह जलोड़ी जोत के दक्षिण पूर्व में थोड़ी दूरी पर स्थित है। ऊंचाई 3135 मीटर या 10000 फीट है। जलोड़ी जोत तक मोटर में जाते हैं। इसलिए यहां पहुंचना अति सुगम है। यह सर नाग शक्ति का प्रतीक है।झील देवी बूढ़ी नागिन को समर्पित है।

व्यास रिखी झील

इसकी ऊंचाई 3540 मीटर है। यह पावन झील हैं स्थान प्राकृतिक परिदृश्यों से भरपुर है। सोलंग नाला से 14 कि. मी. दूर तथा रोहतांग से 8 कि. मी. दूर है। इसके किनारे व्यास ऋषि ध्यान करते थे तथा कुण्ड में स्नान करते थे। ऐसी जन धारणा है। जल का स्रोत हिम नद है जिसका अन्तिम छोर झील में होता है।

मानतलाई झील

यह काफी बड़ी झील है परन्तु कम गहरी है। यह पहाड़ी के टूटने से भरती जा रही है। इसकी ऊंचाई 16000 फीट है। स्पिति तथा मणीकर्ण घाटी की सीमा पर स्थित है। वरशैणी तक बस जाती हैं और इस के आगे पैदल रास्ता है और पहुंचने के लिए तीन दिन का रास्ता है। एक दिन खीर गंगा तक, दूसरे दिन पांडु पुल तथा तीसरे दिन मानतलाई रास्ते में पटराघाट आता है जहां बड़े–बड़े पत्थर बिखरे पड़े हैं। पांडु पुल में नदी चट्टानों के नीचे से गुजरती है। भेड़ बकरी का रास्ता है। जल स्रोत हिम खण्ड तथा हिमनद है।

दयोहरी झील

यह सैंज माटी में हैं। मिट्टी से भरती जा रही है। जल के उपर काई की परत जमी रहती है।

हंसा झील

ये पास–पास दो झीले हैं। हंसों के जोड़े के समान इन्हें माना गया है। इन में से केवल एक झील में नहाते हैं। दूसरे में नहाना वर्जित है। यह

गुशैणी (बन्जार) से लगभग 5 कि. मी. की दूरी पर स्थित है। तीर्थन नदी यहां से निकली है। तीर्थ से निकलने पर नदी तीर्थन कहलाई। 2003 ई. ये दोनो झीलें सूख गईं। क्योंकि यहां का हिमनद पिघल गया और बाढ़ से झीलों में मिट्टी पत्थर भर गया।

नागणी सौर

यह खोखन गांव से 5 कि. मी. की दूरी पर है। इसी के पास अन्य झील पोलडू सौर है। नागणी झील काफी बड़ी है तथा स्थानीय लोग इसे अति पवित्र मानते हैं। यहां का दृश्य अति अनुपम है।

नयना सर

यह बाहरी सिराज कुर्पन घाटी की झील है। 4500 मी. की ऊँचाई सिरी खण्ड के निकट स्थित है। यह जाओं से 35 कि. मी. दूर है। हवा चलने से इस में लहरें उठती हैं जिन्हें शिव लिंग रूप मान कर श्रद्धालु नत मस्तिक हो जाते हैं।

राहला प्रपात

मनाली से 15 कि. मी. दूरी पर राहला जल प्रपात स्थित है। जहां घोड़ों तथा मोटर द्वारा पंहूचा जा सकता है। व्यास नदी 50 मीटर का जल प्रपात बनाती हुई नीचे गिरती हैं

हिमनद

(1) पार्वती हिमनद : पार्वती नदी का स्रोत है। हिमनद 1.5 कि. मी. लम्बा है।

(2) दुधन हिमनद : यह अलीणी नदी का स्रोत है। यह 1.5 कि. मी. लम्बा है।

गरम पानी के चश्में

जिला में कई स्थानों पर गर्म पानी के चश्में हैं। पार्वती घाटी में गर्म जल स्रोत अधिक संख्या में है। मुख्य क्षेत्र मणीकर्ण है। इसके दोनों ओर कसोल से ब्रह्म गंगा नदी तक तीन कि. मी. में कई गर्म जल स्रोत है। गरम पानी चट्टानों के नीचे से निकलता है। भारी दबाव के कारण पानी ऊपर आता है। कुछ जल स्रोतो का तापमान क्वथनांक से भी ऊपर होता है। जिन में भोजन पक जाता है। चावल पकाने के लिए इन्हें कपड़े में बांध कर उबलते हुये पानी के चश्में में डाल देते हैं। 20 मिनट में चावल पक जाते हैं। दाल बर्तनों में पकाई जाती है। जिन्हें गले तक डुबोते हैं तथा उपर थोड़ा भार रख

दिया जाता है। चपाती बना कर पानी में डाल दी जाये तो पकने पर उपर आ जाती है। इसका स्वाद पुडिंग की तरह होता है। इस पानी में गन्धक नहीं है। इसिलिये इसमें कोई गन्ध नहीं आती। इस पानी में स्नान करने से गठिया तथा पेट की गैस की बिमारी से लाभ मिलता है।

खीर गंगा

मणीकर्ण से 20 कि. मी. दूर स्थित है। मणीकर्ण से आगे बरशैणी तक अब बस सेवा उपलब्ध है। इसके आगे अपने वाहन से जा सकते है। गन्धक के कारण पानी गरम है तथा चिकना भी है। गन्धक के कण किनारों तथा तल के साथ चिपके रहते है जिस कारण जल श्वेत दीखता है। सम्भवतः खीर गंगा नाम इसी कारण से पड़ा। पानी का स्रोत भी बहुत बड़ा है। जंगल का रास्ता कुछ कठिन है। इस स्थान पर शिव पुत्र कार्तिकय ने तपस्या की थी। भूख तथा प्यास से अपने पुत्र को सुरक्षित रखने के लिये शिव पार्वती ने यह पानी दिया। यहां एक सराय यात्रियों के लिये बना दी गई है। लंगर का प्रबन्ध भी है।

बशिष्ठ

ब्यास नदी के वायें किनारे पर स्थित है। मनाली से 6 कि. मी. दूर है। जीप कार का रास्ता है। गरम जल कड़ी चट्टानों के नीचे से निकलता है। पानी से गन्धक की बू आती है। नहाने के चशमे् का तापमान अधिक है। तालाब में पानी का तापमान 111 डिगरी फार्नहाईट है।

क्लाथ

मनाली से 4 कि. मी. कुल्लू की ओर सड़क के निकट है और ब्यास नदी की दाई ओर है। क्लाथ स्रोत का पानी न अधिक गर्म है और न अधिक ठण्डा है। तापमान नहाने के अनुकूल हैं। सड़क के किनारे एवं निकट होने के कारण सारा दिन नहाने वालों का तांता सा बना रहता है। इस जल में लोहे की मात्रा अधिक है। पेट की गैस और गठिया के लिये गुणकारी है।

बेहना

बाहरी सिराज में सतलुज के किनारे लूहरी के निकट, आनी–लूहरी सड़क पर स्थित है। गुनगुना पानी है। स्रोत के नीचे नहाया जा सकता है।

सड़के

कुल्लू देहली से सड़क द्वारा जुड़ा हुआ है। जिसकी लम्बाई 522 कि. मी. है। अम्बाला, चण्डीगढ़, रोपड़, कीर्तपुर, बिलासपुर, मण्डी मुख्य

स्थान रास्ते में आते हैं। चण्डीगढ़ की दूरी कुल्लू से 270 कि.मी. है। यह राष्ट्रीय मार्ग 21 है। बिलासपुर में शिमला मार्ग स्वतन्त्रता के बाद की उपलब्धियां हैं। कुल्लू पठानकोट सड़क 290 कि.मी. लम्बी है। बैजनाथ से कुल्लू सड़क 1868 ई. में बन गई थी परन्तु 1925 ई. में कुल्लू मण्डी बस योग्य सड़क बनी। यही सड़क मनाली से आगे लाहुल तथा लेह को जाती है। कुल्लू मनाली के बीच ब्यास के दोनों ओर मोटर सड़के हैं। इसके अतिरिक्त हर आंचल से जिला मुख्यालय को जोड़ती सड़कें हैं। मण्डी से बजौरा कटौला के रास्ते 58 मील है।

सुरंगें

लारजी सुरंग

यह जानना अति रोचक रहेगा कि निकट भविष्य में कुल्लू में प्रवेश सुरंगों द्वारा ही होगा। यदि आप मण्डी की ओर से आ रहे हैं तो आप लारजी सुरंग पार करते हैं। यह सुरंग 2000 ई. में आधी बन गई थी और वाहन इसका प्रयोग करने लग पड़े थे परन्तु पूर्ण सुरंग 2006 में लोकार्पित की गई। यह सुरंग 2.83 कि.मी. लम्बी है। यह आऊट स्थान से ही आरम्भ हो जाती है। पर्यटन के लिये यह भी एक आकर्षण है। यह सुरंग लारजी डैम के कारण बनाई गई है।

रोहतांग सुरंग

रोहतांग दर्रा शर्द ॠतु में हिम के कारण बन्द हो जाता है। यही एक मात्र रास्ता है। जो लाहुल और कुल्लू को जोड़ता है। इस प्रकार लाहुल 15 नवम्बर से 5 मई तक शेष संसार से कट जाता है। यह रास्ता सामरिक दृष्टि से भी बड़ा महत्वशाली है क्योंकि रोहतांग पार कर लद्दाख तथा काश्मीर के किश्तवाड़ क्षेत्र को सड़कों द्वारा पहुंचा जा सकता है। अत: 8.84 कि.मी. सुरंग बनाने की योजना है जिस पर प्रारम्भिक अनुमान से 13000 करोड़ रूपये खर्च आयेगा। यह पांच साल में बन कर तैयार होगी। इससे 46 किमी. की दूरी कम होगी। यह सुरंग सोलंग घाटी से आरम्भ होगी।

भूमि

कुल्लू क्षेत्र की भूमि उपजाऊ है। मिट्टी रेतीली और चिकनी है। 1000 मी. से 3000 मी. तक की भूमि कृषि योग्य है।

जलवायु

जिला की जलवायु ठण्डी तथा शुष्क है। इसमें मुख्य तीन ॠतुएं हैं।

1. शर्द ऋतु अक्तूबर से फरवरी तक।
2. गीष्म ऋतु मार्च से जून तक।
3. बर्षा ऋतु जुलाई से सितम्बर तक।

दिसम्बर तथा जनवरी में हिमपात होता है। इन महीनों में जिला के अधिक भाग बर्फ से ढके रहते हैं। बर्षा का मध्यमान 80 सै. मी. हैं।

वनस्पति

जिला में चीड़, कैल, देवदार, रई, तोस, फर तथा अखरोट के वन पाये जाते है। इसके अतिरिक्त वनों में धूप, कडू, कुटकी, अतीश, सालमपंजा, रतन जोत, जटामांसी, मीठा पतीस, चिरायता, डायसकोरिया (जिसे शिंगर्नी–मिंगनी कहते हैं।), गुछियां, वन ककड़ी, सर्प गन्धी, राम जवाने, चोरा, कशमल(रसौंत) वाच इत्यादि जड़ी बूटियां पाई जाती है। वनफशा तथा खुंब भी काफी मात्रा में मिलती है।

उपज

फसलें

बर्ष में प्रायः दो फसलें उगाई जाती है। सर्दियों में गेहूं, जौ और गर्मियों में मक्की, चौलाई आलू तथा दालें बोई जाती है। जहां पानी उपलब्ध है वहां गर्मियों में चावल भी होता है। कुल कृषि भूमि 64973 हैक्टेयर है जिसमें सिंचित भूमि अर्थात 2878 हैक्टेयर है। मक्की 16485 हैक्टेयर में, धान 1546 हैक्टेयर में, जौ 3790 हैक्टेयर में तथा दालें 3481 हैक्टेयर में उगाई जाती हैं। यह आंकड़े 2005 ई. के हैं।

फल

फल खुरमानी, सेब, पलम, नाशपाती, बादाम तथा अखरोट उगाये जाते हैं। सेब, पलम तथा नाशपाती के प्रचुर मात्रा में बाग है। फल भारत की सभी मण्डियों को भेजा जाता है। बागबानी के अधीन 21459 हैक्टेयर भूमि है। 21459 हैक्टेयर में सेब, गुठलीदार फल 3793 हैक्टेयर में सूखे फल तथा नींबू उगाया जाता हैं

सब्जियां

1000 मीटर से निचले इलाकों में टमाटर, मटर, मिर्च, मूली, शलगम, गाजर, गोभी उगाये जाते हैं। ऊंचे स्थानों पर (8000 फीट तक) मटर की खेती की जाती है। जिसकी मण्डियों में बहुत अधिक मांग है। कीवि नया फल भी उगाया जाता है।

मछली

जी. सी. एल. हावेल द्वारा कुल्लू में 1909 में ब्राउन मछली कुल्लू की नदियों में डलवाई। इसके लिए एक फार्म पतली कूहल में खोला गया। यह मछली पार्वती, सैंज, तीर्थन तथा ब्यास नदियों में मिलती है। इसमें एक ही कांटा होता है। इसलिये बड़े चाव से खाई जाती है। औट से आगे पानी के तापमान बढ़ने के कारण यह मछली नदी में नहीं मिलती। जी. सी. हावेल कुल्लू में 1907 से 1914 ई. तक उपायुक्त थे। उन्होंने काश्मीर से ट्राउट मछली मंगवाई थी। सर्वप्रथम छाकी नाला (कोईशी कुहल) में फार्म बनाया गया था। बाद में पतली कूहल तथा बिहाल में फार्म बनाये गये। 1973 में ट्राउट विकास पर विशेष ध्यान दिया। ब्रूडर टेंकों में सुधार तथा ऐंगलिंग हटों की आवश्यकता है।

पक्षी

वनों में चकोर, मोनाल, बर्फानी मुर्गे, जंगली मुर्गा, बर्फानी कबूतर, करड़ी (मादा मोनाल), जिजूराणा, खखश, बोदण (स्त्री जिजूराणा) आदि पक्षी मिलते हैं।

पालतु पशु

जिला में गाय, बैल, भेड़, बकरी, घोड़ा, खच्चर, कुता आदि पालतू पशु है कुल पालतु पशु 328301 है।

जंगली पशु

जंगलों में काला भालू, बन्दर, घुरल, लंगूर, तंदरोल, यॉटू, थार, सिराऊ, बर्फानी चीता, लाल भालू, कस्तूरी मृर्ग, कारथ एवं इसकी बकरी, तेंदुये आदि पाये जाते हैं। कभी कुल्लू में जंगली जानवर इतने अधिक थे कि कलवर्ट लिखता है कि ढालपुर में उसने एक रात भालू और चीते की लड़ाई देखी। मनाली में भी भालू चीते उसने देखे।

पक्षी बिहार तथा वन्य प्राणी स्थल

मनाली, काईस, खोखन कनावर (रुपी) में स्थित है। एक विस्तृत राष्ट्रीय पार्क 600 है. भूमि पर स्थापित की गई है। यह सैंज से गोशैणी घाटी से आगे तक फैला है। यह पश्चिमी हिमालय के वन्य प्राणियों की शरण स्थली होगी। इसमें दोनों बर्फानी और साधारण बाघ, सिराऊ, घोरड़, कक्कड़, लंगूर, बन्दर होंगे। पक्षियों में बर्फानी मुर्गा तथा तीतर, मोनाल, कोकलास, जूजूराणा तथा सेहा आदि अन्य सुन्दर पंखों के पक्षियों की यह शरण स्थली है। 1992–93 की गणना के अनुसार वन्य जीवों की संख्या घटी है। जो

चिन्ता का विषय है। सरो तथा भालू विशेष रुप से घटे है। यह संसार की सर्व श्रेष्ट पार्क विशेषज्ञों द्वारा मानी गई हैं। इस पार्क की ऊंचाई 1500 मी. से 6140 मी.है।

जनसंख्या

कुल्लू का 43 प्रतिशत क्षेत्र आबाद है। आबाद क्षेत्र 550 वर्ग कि. मी. के लगभग है। कुल जनसंख्या 381571 है जिसमें 198015 पुरुष तथा 183555 स्त्रियां 2001 की जनगणना के अनुसार है। नगर पालिकायों में 30093 लोग रहते हैं। तथा ग्रामीण जनसंख्या 351478 है। 1000 पुरुषों पर स्त्रियों की संख्या 927 है। कुल घर 46495 है। साक्षरता 73.36 प्रतिशत है। यह हिमाचल प्रदेश की जनसंख्या का 6.25 प्रतिशत है। 1875 ई. में जनसंख्या कुल 1100 थी। जनसंख्या घनत्व 69 प्रतिशत प्रति वर्ग कि. मी. है। जनसंख्या वृद्धि दर 25.6 प्रतिशत है।

ग्राम पंचायत तथा नगर परिष्द

कुल 204 ग्राम पंचायते हैं। कुल्लू, भून्तर, बन्जार तथा मनाली में नगर परिष्द हैं।

सोलंग ढलानें

यह एशिया की सर्वोतम स्की ढलान है। ऊँचाई 8000 फीट है। मनाली से 13 कि. मी. दूर बोही धार की ओट में है।

खनिज

सर्वेक्षण विभाग की रिपोर्ट के अनुसार कुल्लू में तांबा, लोहा, अयस्क, सिक्का, कोबाल्ट, अभ्रक, कलई, पाईराईट के भण्डार है। पार्वती घाटी में छिंजरा के स्थान पर युरेनियम निकाला जाता था। इस स्थान के निकट ही बिल्लौर पत्थर मिलता हैं। चूना पत्थर के विशाल भण्डार भी कुल्लू में है।

फर्श तथा छत में प्रयोग आने वाले पत्थर के स्लेट हुरला, गड़सा, मणीकर्ण, लगघाटी, सैंज आदि में निकाले जाते हैं। मणीकर्ण से 4 कि. मी. दूर चांदी की खान भी है। परन्तु व्यापारिक स्तर पर निकालना लाभप्रद नहीं। चांदी में तन्यशीलता नहीं। हथौड़ा मारने से चांदी टुकड़े–टुकड़े हो जाती है। चांदी में सीसा अधिक है।

बिल्लौर पत्थर मुगल सम्राटों को भेजा जाता रहा है। डिब्बी बोकरी तथा शाट में कई रंग के बिल्लौर मिलते हैं। चांदी राजाओं के जमाने से निकाली जाती रही। भूईन कायथों ने जब राजा का रिकार्ड जलाया तो चांदी के निकालने एव पिघलाने का सूत्र भी जल गया। वे उस सुत्र को जानते थे।

1870 ई. में अंग्रेजी सरकार ने भी चांदी निकालने का प्रयास किया परन्तु अधिक मूल्य आने के कारण कार्य छोड़ दिया गया। 1860 ई. में मणीकर्ण चांदी का माल लाहौर में प्रदर्शित हुआ था। देवता जगथंम वरशैणी तथा नैयना देवी मणीकर्ण के चांदी के गहने इसी खान से निकली चांदी से बने हैं। सिक्खों के आक्रमण के समय इन खानों को बन्द कर दिया गया। शमशी के पास नदी से सोना निकाला जाता था तथा 15 रुपये तोला की दर से बेचा जाता था। कलवर्ट ने चांदी निकालने में अपना सर्वस्व खो दिया। (उसे हाम्टा के निकट दुर्लभ मणियां मिली थी)। स्थानीय कारीगर कलिगीर इस चांदी को बनाता था। कुंधी रूआड़ का धारलु लुहार इसका विशेषज्ञ था। इसे बनाने में काथी लकड़ी का प्रयोग करते थे।

6. कुल्लू का इतिहास

लेखन के प्रयास

1. यों तो हेवान्सांग, मूरक्राफ्ट आदि कुछ यात्रियों ने कुल्लू के बारे में कुछ संक्षिप्त विवरण दिया परन्तु गम्भीरता से कुल्लू इतिहास लिखने का पहला प्रयास कैप्टन हारकूट ने किया जो तीन बर्ष तक कुल्लू के उपायुक्त रहे। उन्होंने अपनी पुस्तक हिमालय डिस्ट्रीक्ट कुल्लू लाहौल एण्ड स्पिति 1870 ई. को लन्दन में प्रकाशित किया। इन्होंने कुल्लू राजाओं की वंशावली भी दी। इससे पूर्व 1868 ई. में श्री जेम्ज लायल ने भी वंशावली प्रकाशित की थी। परन्तु वह सिद्ध सिंह से आरम्भ की गई थी जो 1500 ई. से आरम्भ होती है, जबकि पाल वंश प्रथम या द्वितीय शताब्दी से चला आ रहा था। श्री जेम्ज लायाल कांगड़ा जिला के सेटलमैंट अधिकारी थे।

2. इसके पश्चात डॉ. हीरा नन्द शास्त्री ने 1907—08 में भारत के पुरातत्व विभाग के लिये एक बार्षिक रिपोर्ट तैयार की जिसमें कुल्लू के बारे में बड़े महत्वशाली तथ्य दिये।

3. 1933 में जे. हेचिसन तथा जे. वोगल ने एक पुस्तक "हिस्ट्री ऑफ पंजाब हिल स्टेटस" प्रकाशित की। जिसमें कुल्लू इतिहास का विस्तार से वर्णन किया है। उन्होंने सारी ऐतिहासिक उपलब्ध सामग्री का प्रयोग किया। कैप्टन हारकूट से उनके पास अनछपी सामग्री को भी प्राप्त किया। सारे तथ्यों की समीक्षा कर क्रमबद्ध किया और छपवाया। इस पुस्तक को पुनः हिमाचल भाषा एवं संस्कृति विभाग ने 1982 ई. में छपवाया ताकि इसकी उपलब्धता अधिक हो।

4. श्री दीवान हरदयाल 1875—1888 तक राये दलीप सिंह के कोर्ट आफ वार्डस रहे। अधिकारी के रुप में उनकी पदवी तहसीलंदार की थी। उन्होंने इतिहास की सामग्री इकट्ठी की और कुल्लू राजाओं का इतिहास लिखा। यह इतिहास भंगमणी पाल से आरम्भ हो कर राये ज्ञान सिंह तक लिखा।परन्तु उसमें शांगरी रियासत के बारे जानकारी बहुत कम दी। शांगरी राज्य कुल्लू से पृथक होते हुये भी कुल्लू के इतिहास से जुड़ा है। श्री हरदयाल द्वारा लिखा इतिहास छपी पुस्तक उपलब्ध नहीं। परन्तु बहुत से व्यक्तियों ने इसकी प्रतियां अपने पास रखीं है। श्री लाल चन्द प्रार्थी अपनी पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" में इसका वर्णन करते हैं, और एक प्रति रखने का दावा करते हैं।

5. श्री लाल चन्द प्रार्थी ने 1971 में एक पुस्तक "कुलूत देश की कहानी" नाम से प्रकाशित की। इसमें उन्होंने प्रागेतिहासिक काल से कुल्लू की कड़ियां जोड़ने का प्रयास किया। श्री यशवन्त सिंह परमार ने यह ठीक ही

टिप्पणी की है कि प्रार्थी ने कुल्लू को केन्द्र मान कर सारे भारत की कहानी कहने का प्रयास किया है। लेखक स्वयं भी मानता है कि यह कुल्लू की कहानी कम और शोध पत्र अधिक है। इसी पुस्तक में लेखक ने एक अन्य पुस्तक छापने का संकेत दिया था। परन्तु वह दूसरी पुस्तक अपने जीवन में पाठकों तक न पहूंचा सके।

ऐतिहासिक सामग्री का अभाव

1. कुल्लू का इतिहास तथ्यों के आभाव में अटकलों, अनुमानों, जनश्रुतियों और कल्पना पर आधारित है। कुल्लू इतिहास लेखन में पुरालेखों, यात्रा– संस्मरणों, अभिलेखों आदि का प्रयोग किया गया है। लिखित इतिहास की कमी को, कड़ियां जोड़–जोड़ कर पूर्ण करने का प्रयास किया गया है।वे कड़ियां चलती–चलती रुकती प्रतीत होती हैं।जिन्हें जनश्रुतियों, उपख्यानों तथा कथानक के सहारे आगे बढाने का प्रयास किया गया है। पड़ोसी राज्यों के इतिहास नें भी कई ऐतिहासिक गुत्थियों को सुलझाने में सहायता की है परन्तु फिर भी इस भूखण्ड की अनेक ऐतिहासिक कड़ियां धूमिल है। कहीं परम्पराओं का भी सहारा लेना पड़ता है।

2. इस भू भाग पर पाल वंश ने 1500 बर्ष तक शासन किया। इस वंश के उत्थान पतन की कहानी को प्राचीन कुल्लू से पुथक नहीं किया जा सकता। परन्तु कुल्लू राज परिवार से कुल्लू इतिहास सम्बन्धी कोई सामग्री प्राप्त नहीं होती। राजाओं से सम्बन्धित उपख्यान तथा कथानक मिलते हैं जिनका प्रयोग ऐतिहासिक सामग्री के रुप में किया गया है। परन्तु उपख्यान और कथानक में भी मिलावट हो गई है।वे संदेह युक्त तथा अविश्सवसनीय हो गये हैं।

3. कुल्लू इतिहास लेखन के अधिकतर प्रयास अंग्रेजो द्वारा किये गयं। उनके पास उस समय साधन भी थे और रुचि भी थी। इस बात का खेद बना ही रहता है कि हमारा इतिहास उन द्वारा लिखा गया जिनका इस प्रदेश से सम्बन्ध अति सीमित अवधि तक रहा। उनके संकल्न से हमारे इतिहास का ज्ञान वर्धन होता है।

4. ऐतिहासिक सामग्री की अनुपलब्धता का कारण यह भी हो सकता है कि शताब्दियों तक यहां के लोग युद्ध आदि में व्यस्त रहे तथा इतिहास तथा साहित्य की ओर ध्यान न दे सके। शिक्षा की ओर भी अंग्रेजों से पूर्व किसी ने ध्यान न दिया जिस कारण भी इतिहास के प्रति उनमें रुचि उत्पन्न नहीं हुई। मेरी जानकारी में एक तथ्य और भी सामने आया है। जिसका वर्णन करना मैं आवश्यक समझता हूं। कुल्लू के मन्दिरों में भोज पत्रों की बहुत बड़ी

बहियां होती थीं। आकार के कारण इन्हें ढोल बहियां कहा जाता था। इन बहियों में इतिहास लिखा होता था। भोजपत्र समय के साथ नष्ट होता गया। अनपढ़ता के कारण इन बहियों के महत्व को न समझा गया तथा इन की सुरक्षा के लिए कुछ न किया गया। इस प्रकार यह ऐतिहासिक स्रोत भी लुप्त हो गया। एक ढोल बही की लबाई छः से आठ फीट तक हुआ करती थी।

7. मानव विकास का पालना कुल्लू

ऋग्वेद की ऋचा 10/30/4 के अनुसार "बुरी तरह जीर्ण उषा का रथ विपाशा के किनारे गिरा और वह पश्चिमी देशों की ओर चली गई" विद्वानों ने ऋचा का यह अर्थ निकाला है कि सृष्टि की रचना व्यास नदी के किनारे हुई। यह वैज्ञानिक धारणा है कि आदि मानव का निवास वहीं रहा जहां जल था। संसार की सभी सभ्यताओं का विकास भी नदी घाटियों में हुआ और यह प्रबल सम्भावना है कि कुल्लू से ही मानवता का विकास हुआ हो जिसकी ओर संकेत उपरोक्त ऋचा करती है। इस बात की पुष्टि "शतपथ ब्राह्मण" के आठवें अध्याय में वर्णित एक घटना "मनु की बाढ़" से होती है जिसे महाभारत और मतस्य पुराण में भी दोहराया गया है। इस कहानी के अनुसार मानव समाज एक बड़े तुफान के पश्चात अस्तित्व में आया। इस बड़े तुफान को मनु की बाढ़ कहा गया है। कहानी इस प्रकार है:–

"एक दिन मनु के हाथ धोते हुए पानी की अजुंलि भरी कि जल के साथ हाथ में एक छोटी सी मछली आ गई। मछली ने मनु से कहा कि वह उसे बचाये क्योंकि बड़ी मछलियां उसे खा जायेंगी। यदि उसे बचाया तो वह उसे बड़े भय से बचायेगी। मनु ने मछली की बात मान ली और पालन आरम्भ किया। बर्तन उसके लिए छोटा हो गया क्योंकि समय के साथ उसका आकार बढ़ गया। उसे तालाब में डाला। समय आया कि तालाब भी छोटा पड़ गया। तब मछली ने मनु से कहा कि उसे समुद्र में डाल दे। जल प्लावन होगा जिसमें कुछ न बचेगा। इसलिए एक बड़ी नाव बनवा लो। जब पानी पूरी तेजी से बढ़ना आरम्भ हो जाये तो उस नाव में चढ़ जाना। सप्त ऋषियों को भी अपने साथ रख लेना तथा नाव को मेरे सींग से एक रस्से के साथ बांध देना। मनु ने मछली की बात मान ली। नियत समय पर पानी चढ़ना आरम्भ हो गया। मनु सप्त ऋषियों के साथ नाव में सवार हो गये। मछली नाव को सुरक्षित स्थान को ले गई। पानी उतरना आरम्भ हुआ। सप्त ऋषि हिमालय में तप करने चले गये। मनु वहीं ठहर गये। तप से श्रद्धा नाम स्त्री प्रकट हुई जिससे मनु की भेट हुई। इनकी सन्तान मानव कहलाई।"

"मन्वालय" (मनु + आलय) से मनाली बना है जिसका अर्थ मनु का घर है। सारे भारत में मनु का मन्दिर कुल्लू में ही हैं। मनाली गांव के पास बहती नदी का नाम मनालसु है। ब्यास के दूसरी ओर एक गांव अलेऊ है। जिसका सम्बन्ध मनु की पुत्री "इला" से जोड़ते है। इला मनु की पथ प्रदर्शिका भी रहीं। अलेऊ में भी सृष्टि नारायण का मन्दिर है। छन्दोग्य उपनिषद में भी श्रद्धा और मनु का वर्णन है। श्रद्धा को ही कामयानी कहा गया क्योंकि यह कामगोत्र की पुत्री थी। मनु ने मानव का पथ प्रदर्शन किया। मनु ने आदर्श

शासन प्रणाली स्थापित करने के नियम मनु स्मृति में दिये। वर्ण व्यवस्था दी। मनाली मनु मन्दिर में मनु की अष्ट धातु की मूर्ति विद्यमान है।

इस भू भाग के विद्वानों का अनुमान है कि प्रलय के पश्चात सर्वप्रथम इन्द्रकील पर्वत जल से बाहर आया। इसी पर्वत के शिखर से मनु ने किश्ती टिकाई और वे यहीं उतरे। इन्द्रकील पर्वत से वे हेमकूट (हाम्टा) आये और फिर मनाली पहुंचे। कालान्तर में, देऊ टिब्बा, देवताओं का दुर्ग था। रूमसु, नालग, भृगु तुंग, गिरवा, कोठी आदि पहली बस्तियां थीं। इसके पश्चात बस्तियां अन्य घाटियों में बसीं। इन्द्र का सिंहासन (जगती पाट) देऊ टिब्बा से नगर लाया गया। मनु स्मृति की रचना भी मनाली में हुई।

आर्यों का मूल स्थान कुल्लू

1. उपरोक्त सभी प्रमाण संकेत करते हैं कि सृष्टि की रचना इसी भू भाग में हुई। प्रागतिहासिक काल का इतिहास आर्यों से आरम्भ होता है। आर्यों का मूल स्थान सप्त सिन्धु माना गया है। बाबू अविनाश चन्द्र दास तो सप्त सिन्धु को सृष्टि रचना का क्षेत्र मानते हैं। वेदों में कहीं संकेत नही मिलता कि आर्य बाहर से आये। सात नदियां, जिनकी सप्त सिन्धु के लिए पहचान की गई, में आर्जीकीय (व्यास) भी है।

2. आर्य जब कोई नया स्थान बसाते थे तो राजा के स्थान ऋषि मार्ग दर्शक का काम करते थे। नये स्थान तथा नगर का नाम प्रसिद्ध ऋषियों, राजाओं या कुलों के नाम पर रखते थे। ऋषि वहां अपना आश्रम स्थापित करते थे तथा वैदिक धर्म तथा संस्कृति का प्रचार करते थे। जिन ऋषियों ने कुल्लू में आश्रम स्थापित किये हैं वे थे, व्यास, वशिष्ठ, कपिल, मारकण्डेय, परशुराम, भृगु, जमदग्नि, गौतम, नारद, दरवासा, श्रृंगी आदि।

3. ऋग्वैदिक आर्यों का सबसे प्रिय पान सोमरस था। जो सोमलता बूटी से तैयार किया जाता था। ऋषियों में गौतम अनुसार सोमलता ऊंचे पर्वतों पर होती थी। विपाशा की उपत्यका सोम के लिए प्रसिद्ध थी। इस उपत्यका की पहचान कुल्लू से ही की जाती हैं।

4. खशों को आर्यों की पूर्व शाखा माना गया है। खश जाति तथा संस्कृति का यहां विद्यमान होना तथा कुल्लू की भाषा संस्कृत निष्ट होनी भी ऐसे प्रमाण है जो इस प्रदेश को आर्यों का मूल प्रदेश होने का समर्थन करते हैं। अतः ये सभी प्रमाण कुल्लू इतिहास की प्राचीनता सिद्ध करते है। तथ्यों का सही मूल्याकंन होने पर यह भू भाग हिमाचल की ही नही भारत की प्राचीनतम सभ्यता का क्रीड़ा स्थल होने का गर्व पा सकता है।

8. कुल्लू का नामकरण (विभिन्न सिद्धांत)

मक्कड़ से मकड़सा

कुल्लू किसी समय मकड़सा या मकड़ाह भी कहलाया। यहां की देव भारथा (निज़गाथा) में अधिकतर मकड़सा या मकड़ाह नाम ही इस क्षेत्र की पहचान था। भारथा सृष्टि रचना से आरम्भ होकर, सारे घटनाक्रम की पुर्नावृति करते हुए, वर्तमान में समाप्त होती है। भारथा का आरम्भ इस प्रकार किया जाता है:

फुड़ी उठदी फुड़ी वेशदी आसे हेरी, आसे जुग हेरे ।
आसे तैह तैंढे सी, होर ऐण्डे रौहणा ।।

(हमने प्रलय आरम्भ होती और शान्त होती देखी । हमने युग बदलते देखे, हम जैसे थे, वैसे ही है और ऐसे ही रहना)।

इस प्रकार देवता स्वयं शाश्वत होने की घोषणा करता है। देव भारथों में जब भी इस क्षेत्र का वर्णन आता है इसे मकड़सा या मकड़ाह कहा जाता है।

कहते हैं कि इस क्षेत्र में पांडवों के साथ विदुर भी आया था। उसने भोटंत (भोट प्रदेश) के स्वामी हडिम्ब की बेटी सुदंगी से विवाह किया। उसके दो पुत्र मक्कड़ और भोट हुए जिनकी शिक्षा दीक्षा व्यास ऋषि के आश्रम में हुई। एक बार जंगल में भूख से त्रस्त होकर भोट ने जंगली गाय को मार उसका मांस भक्षण किया। परन्तु मक्कड़ ने ऐसा नही किया। भोट का जाति बहिष्कार किया गया और वह रोहतांग पार चला गया और भोट राज्य स्थापित किया। परन्तु मक्कड़ कुल्लू में ही रहा और उसके नाम के कारण यह क्षेत्र मकड़सा कहलाया। मकड़सा रोहतांग के दक्षिण भाग में स्थित छोटा सा राज्य था। इस क्षेत्र पर टुण्डी राक्षस का राज्य था। लोग उसके आतंक से त्रस्त थे। उन्होंने उसे रोहतांग के पार जाने के लिये बाधित किया। उसने एक स्त्री से विवाह कर कुल्लू राज्य छोड़ देने का वचन दिया। उसके जाने के पश्चात मक्कड़ को यह राज्य सौंपा गया और इस क्षेत्र का नाम मकड़सा पड़ा। फागली पर्व में टुण्डी राक्षस (आतंकी) के कुल्लू क्षेत्र छोड़ देने की घटना अभी भी दोहराई जाती है।

(i) - भूरी सिंह संग्राहलय चम्बा में 1775 ई. का एक सन्धि पत्र है जिसके अनुसार मण्डी, कांगड़ा तथा चम्बा के राजाओं ने इकट्ठे होकर मकड़सा (कुल्लू) के राज्य पर आक्रमण करने का निश्चय किया। विजय प्राप्ति के पश्चात तीनों राजाओं ने भंगाल का राज्य जो उस समय मकड़सा के

आधीन था आपस में बांट लेने का निश्चय किया। यह प्रमाणित करता है कि पड़ोसी राज्यों में भी कुल्लू मकड़सा नाम से जाना जाता था।

(ii) लेखक तथा अनुवादक भी कुल्लू के लिए मकड़सा नाम प्रयोग करते थे। टांकरी की एक पुस्तक "कृषण चरित्र सुरंग —रोहणी" के आरम्भ में इस प्रकार विवरण है :

"श्री रघुनाथ जी दे राजे मंझे, मकड़सा स्थाने, परौली
दी वजीरी पिछे, मनाली कोठारी मंझे, श्री ब्यास गंगा कण्ढे,
श्री त्रिलोक नाथ जी दा आसरा, वशिष्ठ कपिल मुनि जी
दे प्रदछिने गौतम ऋषि छेत्रे, बुरूआ नगरी मध्ये, श्री विष्णु
पुज्यारी कृष्ण चलित्र पांडू वरते, सुरग रोहिणी कथा पढ़ने
सुनने निमित लिखाई, जगत सुख राठी देटू दी बही, भक्त
खिन्दुये दे जातके कदीम रत्न दासे कथा आरम्भ:—"

इन सभी तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि कुल्लू मक्कड़सा नाम से भी प्रसिद्ध था।

मक्कराहड़ या मगरसा

(i) हुरला (गड़सा घाटी) के निकट ब्यास नदी के वायें किनारे पर अब भी एक स्थान "मक्कराहड़" के नाम से जाना जाता है। कुछ विद्वान "गड़सा" को मक्कड़सा का बिगड़ा रुप मानते हैं। मक्कड़सा को प्रसिद्धि राजा बहादुर सिंह और उसके उतराधिकारियों द्वारा अपना आवास बनाये जाने के कारण मिली। राजा बहादुर सिंह को कोठी कोट कण्ढी, भलाण तथा सैंज के ठाकुरों और राणाओं को अपने अधीन करने के लिए एक लम्बी लड़ाई लड़नी पड़ी और सम्भवत: इसी कारण से उसे यहां अपना आवास बनाना पड़ा। यह स्थान सैनिकों को आदेश देने तथा सम्पर्क रखने के लिए युद्ध क्षेत्र के निकट था। यहां से राजधानी नग्गर से भी सुगमता से सम्पर्क बनाया रखा जा सकता था। राजा बहादुर सिंह के मक्कड़सा में बसने के बारे में कुल्लू की एक कहावत को यहां उद्धृत करना उचित होगा।

राणा ठाकुर मारिये केरू भुड़सा।
मक्कड़ाहर वौसिये राज बणु मकड़सा।।

(राणाओं और ठाकुरों को मार कर चूर—चूर कर दिया, मकराहड़ में राजा के रहने से राज्य मक्कड़सा बना)।

राजा बहादुर सिंह ने पुराने मकड़सा को ही पुन: बसाया। इस राजा की मृत्यु भी यहीं हुई। राजा बहादुर सिंह के उतराधिकारी पर्वत सिंह तथा

कल्याण सिंह भी मकड़सा में ही रहे। बहादुर सिंह के मकड़सा आवास की पुष्टि तिनन (गोंधला) लाहुल के इतिहास ने भी की है जिसके अनुसार राजा बहादुर सिंह मकड़सा में रहता था। मकड़सा बुनन भाषा का शब्द है जिसका अर्थ है "मक्कड़ का स्थान"। तिब्बती भाषा में भी मक्कडसैं का अर्थ मक्कड़ की भूमि है।

(ii) कुछ विद्वान मानते हैं कि तिब्बती भाषाा में सैनिक गढ़ों को मगरसा कहा जाता है। यहां गढ़ होने से स्थान मगरसा कहलाया जो बाद में मकड़सा और फिर गड़सा में बदल गया।

(iii) मूरक्राफ्ट एक अंग्रेज यात्री जो 1820इे में कुल्लू से गुजरा, ने भी ब्यास के दूसरे छोर मक्कराहड़ में राज प्रसादों को देखा था। हचिसन तथा वोगल अनुसार एक अंग्रेज अधिकारी ने दलाशनी के पुल बनाने में इन खण्डहरों का प्रयोग किया। पुल भी बाढ़ में बह गया जिससे सभी अवशेष सदा के लिए समाप्त हो गये। एक जनश्रुति अनुसार दयार से मकराहड़ तक इतने भवन थे कि छतों से कूदती हुई बिल्ली ब्यास में पानी पीने जाती थी।

कुलित से कुल्लू

ऋग वेद काल में रावी, सतलुज और व्यास के मध्य पहाड़ी क्षेत्र में भरतगणों के राजा दिवोदास का राज्य था। यह आर्यों की एक शाखा का मुख्य था। इन्हीं पहाड़ियों में 100 दुर्गों का स्वामी कोल नरेश कोलितर शम्बर वृहत पर्वत पर रहता था जो 40 वर्ष तक आर्यों से लड़ा और अन्त में मारा गया। आर्यों ने एक किले को छोड़ शेष सभी दुर्ग नष्ट कर दिये। कुछ विद्वानों ने कोलितर शम्बर को किरात जाति से सम्बन्धित किया है। परन्तु यह बात प्रमाणित नहीं है कि कुलितर (कोल इतर) का अर्थ कोलों के अन्य राज्यों का स्वामी, है। कुल्लू क्षेत्र को इसी कारण से कुलित कहा गया और इसी का बिगड़ा रूप कुल्लूं है। कुल्लू के मूल निवासियों की एक जाति कोली है। इनकी कुल्लू में संख्या 30 प्रतिशत है। निरमण्ड बूढ़ी दीवाली में कोलियों और खशों में संघर्ष इसी लड़ाई की पुनरावृति माना जाता है।

कुलिन्दा से कुल्लू

ऐसा अनुमान है कि इस क्षेत्र में कोलियों पर कनैतों ने विजय पाई और इस क्षेत्र को कन्नैत प्रदेश में बदला। इन कुन्नैतों को कुछ विद्वानों ने कुनिन्दों के वंशज माना है। कुनिन्द एक जाति थी। कुनिन्द जाति को कुलिन्द

नाम से भी जाना जाता है। कुछ एक का विचार है कि कुलिन्दों का क्षेत्र कुल्लू कहलाया।

कुलान्त पीठ से कुल्लू

कैप्टन हारकूट जो कुल्लू के उपायुक्त रहे ने कुलान्त पीठ महात्मय मणीकर्ण के पंडितों के पास देख कर अपनी पुस्तक " हिमालयन डिस्ट्रीकटस ऑफ कुल्लू, लाहुल एण्ड स्पिति" में लिखा है कि कुलान्त पीठ होने के कारण इस क्षेत्र का नाम कुल्लू पड़ा। श्रीमती पिनलेप चैटवुड ने इस विचार का न केवल समर्थन किया अपितु पुस्तक का नाम भी इसी आधार पर " कुल्लू दी एण्ड ऑफ दी हेविटेबल वर्ल्ड" रखा। उसके अनुसार रोहतांग दर्रे पर खड़े हो कर लाहुल की ओर देखने से मीलों जीवन का कोई चिन्ह दिखाई नहीं देता। न बस्ती है, और न कोई प्राकृतिक उपज, जैसे रहने योग्य संसार का अन्तिम छोर कुल्लू है। यह महात्मय ब्रम्हाण्ड पुराण का एक भाग माना जाता है। परन्तु यह बात संदिग्धपूर्ण है। गीता प्रैस द्वारा प्रकाशित ब्रम्हाण्ड पुराण में कुलान्त पीठ नाम का कोई अध्याय नहीं है। कुछ विद्वानों ने यह तथ्य ढूंढ निकाला कि 56 पीठों में कुलान्त पीठ भी था जिसकी सीमायें चौहार पीठ तथा जालन्धर पीठ से लगती थीं। इस महात्मय की प्रतियां अब उपलब्ध है और जुलाई, 1988 के सोमसी पत्रिका में भी प्रकाशित हो चुका है। भाषा शास्त्रियों के अनुसार कुलान्त पीठ से कुल्लू शब्द का उद्भव होना साधारणतय: भाषा विज्ञान के नियमों पर पूरा नहीं उतरता।

कुलूत से कुल्लू

1. सर्वमान्य विचार है कि इस प्रदेश को नाम कुलूत शब्द से मिला है जिससे बोलते समय "त" अनुचरित हो गया और बाद में उस अनुसार लिखे भी जाने लगा।

2. बारह मीहर ने वृहत सहिंता में लिखा है कि कुलूत एक जाति थी जो ब्यास नदी के उतरी भाग में रहती थी।

3. महाभारत के सभापर्व (7/5/16) में अर्जुन की उतर-पश्चिम दिग्विजय के सिलसिले में कुलूत तथा त्रिगर्त गणों का वर्णन है। कुलूत के शासक वृहत पर्वतेशवर ने अपने नगर से बाहर आकर बड़ी सेना से अर्जुन का सामना किया। वृहत पर्वतेशवर अर्जुन के विक्रम का सामना न कर सका और उसने रत्न देकर पांडवों के साथ सन्धि कर ली। महाभारत के कर्ण पर्व के बारहवें अध्याय में 25 से 45वें श्लोक कुलूत नरेश क्षेम धूर्ती का विवरण

आता है जो युद्ध में मारा गया। क्षेम धूर्ती को कलूतों का यश बढ़ाने वाला लिखा है। अत: महाभारत के समय कुल्लू का नाम कुलूत था।

4. जनरल कुनिघंम ने अपनी पुस्तक " काइन्ज आफ एनीशयन्ट इण्डिया" (प्राचीन भारत के सिक्के) में एक सिक्के का वर्णन किया है। यह सिक्का ब्रहमी लिपि में है तथा एक शब्द "राणा" खरोशटी का है। विद्वान इसे प्रथम या द्वितीय शताब्दी का मानते हैं। यह सिक्का कलूत के राजा "वीरयश" से सम्वन्धित है। इस पर ब्रहमी में लिखा है "राजा कोलूतस्य वीरयशस्य"। इससे स्पष्ट है कि प्रथम शताब्दी में कुल्लू का नाम कुलूत था।

5. हर्ष काल में भारत आये चीनी यात्री हेवनसांग ने अपनी पुस्तक सी. यू. की में लिखा है कि दूसरी शताब्दी में कुलूतों का स्वतन्त्र राज्य था। उसने कुल्लू के स्थान पर की–लू–तो लिखा है। इस भू–भाग का महत्व इस बात से पता लग जाता है कि वह यात्री यहां आया और उसने कई बातों के बारे में प्रकाश डाला।

6. तीसरी शताब्दी में कुलूत ने अपनी पड़ोसी गणतन्त्र कुनिन्दस पर विजय पाई थी। कुलूत का नाम विष्णू पुराण तथा मारकण्डेय पुराण में भी आया है।

9. कुलूत एक समृद्ध एवं सशक्त राज्य

समृद्ध राज्य

परमेशवरी लाल गुप्ता ने अपनी पुस्तक "न्यूमिजमैटिक हिस्ट्री आफ हिमाचल प्रदेश" के पृष्ट 10—11 पर मार्शल को "टेक्सला में मिले ग्यारह तांबे के सिक्कों का वर्णन किया है। इनमें छः सिक्के राजा वीरयश के तथा अन्य सत्य मित्र, विजय मित्र, आर्य आदि के हैं। सिक्के चौकोर हैं जिनके एक ओर इन्द्र ध्वजा है, जिस के दाहिनी ओर स्वास्तिक का चिन्ह है। किनारे पर ब्रहमी लिपि में लिखा है " राजनः कलूतस्यः विजय मित्रस्यः" सिक्कों के दूसरी ओर एक चक्र के मध्य चार नन्दी पद है जिस के नीचे कमल तथा सांड बने हैं। इस ओर खरोशटी में लिखा है "राजनः कलूत्सा विजय मितसा" ये सभी सिक्के ब्रिटिश म्यूजियम में रखे हुये हैं। कनिघम का बहुत चर्चित वरियस का सिक्का भी लाहौर से परे टेक्सला क्षेत्र के आस पास मिला था। इस आधार पर कुछ विद्वान यह मानते हैं कि कुलूतों का मूल राज्य गांधार क्षेत्र में था। आक्रमणकारियों के दबाव के कारण वे हिमाचल की ओर चले आये और यहां कलूत राज्य की स्थापना की।

इन सिक्कों के अतिरिक्त कोई ऐसा अन्य प्रमाण नहीं जो इस बात की पुष्टि करे कि कुलूतों का मूल राज्य गांधार में था। इस सम्भावना को नकारा नहीं जा सकता कि ये सिक्के व्यापार के कारण भी उस क्षेत्र में पहुंच सकते थे। दूसरी ओर सभी साहित्यक उल्लेख तथा ऐतिहासिक प्रमाण कुल्लू के इस भू—भाग को ही कुलूत प्रदेश सिद्ध करते हैं।

ये सिक्के इस तथ्य को भी पुष्ट करते हैं कि कुल्लू भू—भाग में कभी एक समृद्ध तथा सशक्त राज्य रहा होगा, जहां के व्यापारी गांधार प्रदेश तक व्यापार करने जाया करते थे तथा इस राज्य की मुद्राओं को दूसरे राज्यों में भी स्वीकारा जाता था। कुनिहार (कांगड़ा) तथा लद्दाख के शिलालेख भी कलूतों के विशाल राज्य की ओर संकेत करते हैं। इस राज्य के वरियस, विजय मित्र, सत्य मित्र आर्य आदि राजा हुये। सम्भतः कुनिहार (धन्यारा) शिलालेख में वर्णित कृष्ण यश भी उपयुक्त राजाओं के वंश की कोई कड़ी होगी। अनुमान है कि इन राजाओं ने प्रथम शताब्दी से पूर्व इस भू—भाग पर राज्य किया था।

सशक्त राज्य

कलूतों ने तीसरी शताब्दी में अपनी पड़ोसी कुनीन्दस जनपद को हराया था जिनकी सीमा सतलुज तक थी। इस प्रकार कुलूत देश की सीमा तीसरी शताब्दी में सतलुज के दूसरे छोर पर भी थी।

मौर्यों के ह्रास के पश्चात शक्ति कुशानों और शकों के हाथ में आई, जिन्होंने कलूतों को भी शक्तिहीन किया। परन्तु कुलूत निवासी संघर्ष करते रहे और कुशानों तथा शकों की समाप्ति में इन्होंने महत्वशाली भूमिका निभाई।

गुप्त वंश के उत्थान पर यह जनपद भी उनके अधीन रहा। हर्ष के अधीन भी इस जनपद के रहने के प्रमाण मिलते हैं। परन्तु ऐतिहासिक तथ्यों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि यह प्रदेश चाहे मौर्यों के अधीन रहा हो या हर्ष के, इस सारे समय में कलूत जनपद को आन्तरिक स्वतन्त्रता मिली हुई थीं। समय के साथ कलूत जनतन्त्र समाप्त हो गया और इसके स्थान पर राणों और ठाकुरों का युग आया। जिनका राज्य दो तीन गांव तक सीमीत होता था और यह प्रदेश छोटे–छोटे टुकड़ों में बंटा रहा, जब तक कि केन्द्रीय शक्ति का प्रार्दुभाव न हुआ।

साहित्य में कुलूतों का वर्णन

संस्कृत साहित्य में कुलूत भू–भाग का बार–बार वर्णन आया है। हिमाचल के अन्य किसी भाग को यह श्रेय प्राप्त नहीं।

1. पांचवीं/छठी शताब्दी में लिखित नाटक मुद्राराक्षस जिसे विशाखादत ने लिखा है, पॉच राजाओं को पर्वतेश्वर के लड़के मलेच्छ राजा मलय को साथी बताया है। जिन्होंने चन्द्रगुप्त का विरोध किया। इन पांच राजाओं में एक कुलूत देश का राजा चित वर्मा था। सम्राट चन्द्रगुप्त भारत में तीसरी शताब्दी में हुआ।

2. सातवीं शताब्दी में लिखित कादम्बरी नाटक में बाणभट्ट ने बताया है कि कुलूत राजा की कन्या पत्र लेखा को कलूत विजय के पश्चात उज्जैणी के राजा तारापीड अपने साथ ले गया तथा उसे अपने लड़के चन्द्रपीड की दासी के रुप में दिया।

3. पाणीनी के अष्टाध्यायी में यवादिगण में मण्डमति (मण्डी), सुकुट (सुकेत) के साथ कुलूत (कुल्लू) का उल्लेख भी मिलता है।

4. 1. बारहवीं शताब्दी में कल्हण द्वारा लिखित इतिहास राजतरंगणि में कुलूत का वर्णन दो बार आता है। छटी शताब्दी में चोल नरेश रति सैन ने अपनी बेटी " रानारम्भा" को अपने मित्र कलूत राजा के पास भेजा। जहां उसे मिलने के लिये काश्मीर का राजा रत्नादित्य आया।

दूसरा वर्णन इस प्रकार है :–

2. काश्मीर नरेश " जैन – उल – आवदीन" (1420–1470) ने गुगा देश (ऊपरी कुल्लू तथा ऊपरी मणीकर्ण जिसे कनावर भी

कहते है) पर आक्रमण किया तथा अपनी वीरता से कुलूत की राजधानी (नगर) की शान को लूटा।

इन प्रमाणों के आधार पर कहा जा सकता है कि प्रथम से पन्द्रहवीं शताब्दी तक कुल्लू का नाम कलूत था।

ऐतिहासिक प्रमाण

1. चम्बा में दो ताम्रपत्र मिले है जिन्हें राजा सोम वर्मा और अस्त वर्मा ने 1066 ई. में लिखवाया था। एक के अनुसार राजा साहिल वर्मण ने त्रिगर्त (कांगड़ा) तथा कुलूत के राजाओं से मिलकर (काश्मीर) दुर्गर (जम्मू) तथा समा तक (वैलोर या वसौली) की सेनाओं को हराया और उनके सांझा आक्रमण को पछाड़ा।

दूसरे ताम्रपत्र में चम्बा के राजा साहिल वर्मण ने कुल्लू के राजा का "कुलूतेश्वर:स्वकुल्यं"अर्थात- अपने कुल का कुलूत देश का स्वामी वर्णित किया है। इन सब साक्ष्य के आधार पर कहा जा सकता है कि कुल्लू का प्राचीन नाम कुलूत था और कुल्लू प्राचीन नाम का संक्षेप है। यह बात भी विचारणीय है कि कुल्लू की राजधानियाँ बदलती रहीं परन्तु राज्य का नाम प्रमुख स्थान से ऊपर रहा जिसके पीछे एक पूर्ण इतिहास है।

कुल्लू की बदलती सीमायें

कुलान्त पीठ में सीमा वर्णन

कुलान्त पीठ महात्मय का ऐतिहासिक महत्व तो नहीं है परन्तु इस भू–भाग का पौराणिक शैली में वर्णन सरस व सुन्दर है। इसके सात खण्ड है तथा इसे ब्रह्माण्ड पुराण का एक भाग माना जाता है। कुलान्त पीठ में सीमा वर्णन इस प्रकार है:–

"जालन्धरस्य वैशान्ये हेम कूटस्य दक्षिणे। दशा योजन विसतीर्ण योजनत्रय विस्तृतम उतरे व्यास तीर्थश्च दक्षिण बन्धुको गिरि: विपाशा पश्चिमै भागै, पूर्व पशु पति स्वयम्"– अर्थात कुलान्त पीठ जालन्धर के पूर्वोतर में तथा हेम कूट (हाम्टा) के दक्षिण में फैली है। इसकी दस योजन लम्बाई तथा तीन योजन चौड़ाई है। (90 गुना 20 मील , एक योजन बराबर 9 मील) इसके उतर में पवित्र व्यास तीर्थ है। दक्षिण में बन्धुक पर्वत है। व्यास नदी इसके पश्चिम मुख में बहती है। पूर्व में पशु पति शिव स्वयं निवास करते है।

इसके आगे अन्य श्लोंकों में इस भू भाग की प्रमुख देवी शवरी, प्रधान पर्वत इन्द्रालिक (इन्द्रकील) प्रधान तीर्थ व्यास तथा पार्वती का संगम (जिया) बताया है। यह भू भाग वही है जहां शिव ने शवर रुप धारण कर अर्जुन से युद्ध किया था।

उपरोक्त शलोकानुसार व्यास तीर्थ से बंजौरा तक के क्षेत्र कुलान्त पीठ में आते हैं।

शिला लेख के आधार पर सीमा

कनिघंम द्वारा वर्णित पहली या दूसरी शताब्दी के सिक्कों के अनुसार कुल्लू का राजा वरियश था। धर्मशाला के निकट कुनिहार में एक शिलालेख कृष्ण वंश के नाम से है जिनके बारे ऐतिहासिक जानकारी नहीं। ऐसी भी सम्भावना है कि ये दोनों एक ही वंश के हों तथा इन का राज्य कुल्लू कांगड़ा तक फैला हो। क्योंकि यह शिलालेख भी खरोशटी और ब्रह्मी में हैं। जैसा कि सिक्का है, ऐसा ही इन दो भाषाओं में एक लद्दाख में शिलालेख है। यह भी सम्भव हो सकता है लद्दाख से कांगड़ा तक कुलूत नरेश का राज्य रहा हों।

हेवन्सांग द्वारा सीमा वर्णन

हर्ष काल में हेवन्सांग चीनी यात्री (629 ई. से 645 ई.) ने भी कुल्लू की सीमाओं की जानकारी अपनी पुस्तक सी. यू. की में दी है। उस अनुसार की–लू–तो (कुलूत) जालन्धर के उतर में 700 ली 117 मील (एक मील बराबर 6ली) दूर है। यह दूरी जालन्धर से ठीक बैठती है। उस अनुसार अशोक महान ने एक स्तूप कुल्लू के मध्य तथागत (बुद्ध) के अपने शिष्यों सहित वहां आगमन की स्मृति में बनवाया गया। इस स्तूप के कोई अवशेष कुल्लू में नहीं है। परन्तू इससे यह स्पष्ट है कि अशोक के राज्य की सीमायें कुल्लू तक फैली थीं। हेवन्सांग 635 ई. में कुल्लू आया था।

तीसरी शताब्दी में कुल्लू की सीमा सतलुज के पार तक थी क्योकि कलूतों कुनिन्दस को हराया था। जिनकी सीमा सतलुज तक थी।

राजतन्त्रा अधीन सीमा

जालन्धर के राजाओं ने ठाकुरों और राणों को अपने अधीन कर एक ऐसे राज्य की नींव रखी जिसका 1500 बर्ष तक इस क्षेत्र पर प्रभुत्व रहा। इन राजाओं के स्मृद्ध काल में उतर में इसकी सीमायें लद्दाख, से पूर्व में तिब्बत से दक्षिण में, सतलुज तथा पश्चिम में मण्डी, सुकेत, बड़ा भंगाल तथा चम्बा से लगती थी। एक समय सतलुज के पार कुमारसैन, शांगरी तथा रामपुर बुशैहर के कुछ भाग इसमें सम्मिलित थे। राजा मान सिंह के समय इस राज्य

का क्षेत्रफल 6607 वर्ग मील था और अधिक से अधिक यह 10000 वर्ग मील बढ़कर हो गया था। कुल्लू, चम्बा, मण्डी, सुकेत तथा बुशैहर के अधीन रहा। 1840 ई. में अन्तिम कुल्लू राजा को गद्दी से सिक्खों ने उतारा।

जिला की वर्तमान सीमा

1846 ई. में कुल्लू अंग्रेजों की प्रभुसता में आया और इसे शिमला जिला में रखा गया। थोड़े समय के पश्चात इसे कांगड़ा जिला में लाहुल स्पिति के साथ रखा और कुल्लू को एक उपमण्डल बनाया गया। 1960 ई में लाहुल स्पिति पृथक जिला बन गया। शेष कुल्लू का वर्तमान स्वरुप रह गया जो 1963 ई में जिला बना।

वर्तमान में कुल्लू जिला की सीमायें उतर पूर्व में चम्बा तथा लाहुल स्पिति पूर्व में किनौर, दक्षिण पूर्व में शिमला, दक्षिण पश्चिम में मण्डी तथा पश्चिम में कांगड़ा से मिलती है।

10. राणा और ठाकुरों का शासन

कुल्लू केन्द्रीय शक्ति के उदय होने से पूर्व छोटे—छोटे टुकड़ों में बंटा था। यह टुकड़े दो तीन गांव तक सीमित होते थे जिन पर ठाकुर या राणा का वर्चस्व होता था। राणा तथा ठाकुर का आवास उस क्षेत्र के किसी ऊंचे स्थान पर गढ़ के रूप होता था। उचें स्थान पर गढ़ों के बनाने के कुछ विशेष लाभ थे। वहां से शत्रु आता हुआ दूर से ही नजर आ जाता था। यदि शस्त्र न भी हों तो भी पत्थर लूढ़का कर या मार कर मुकाबला किया जा सकता था। उस समय तीर कमान, भाला, बरछा, तलबार इत्यादि शस्त्र प्रयोग में आते थें। उन गांवों में रहने वाले ही इन ठाकुरों राणों की प्रजा होती थी। उनका जीवन इनकी दया पर आश्रित था। इन राणों और ठाकुरों का शासन बड़ा कठोर होता था। वे अपनी प्रजा पर मनमाने अत्याचार करते थे। वे प्रजा से "कर" उगाहते थे। अपनें खेतों में भी उन्हीं से काम लेते थे। युद्ध के समय योद्धों के रुप में काम लेते थे। ये ठाकुर और राणें आपस में लड़ते रहते थे। इसलिये इनके राज्यों की सीमायें घटती बढ़ती रहती थी। जब राज्य विस्तार होता था तो ये राणे ठाकुर अपने को राजा भी घोषित कर लेते थे। ये किसी उच्च शक्ति का स्थाई अधिपत्य भी परिस्थिति अनुसार स्वीकार लेते थे। परन्तु केन्द्रीय शक्ति क्षीण होने पर पुन: स्वतन्त्रता की घोषणा कर लेते थे। देश निकाला तथा ऊंचे स्थान से गिरा कर मौत की सजा दी जाती थी। परन्तु यदि कोई फिर भी बच जाये तो उसे क्षमा कर दिया जाता था। अपने समय में ठाकुर ही कानून था। न्याय उसी की इच्छा पर निर्भर होता था, क्योंकि सर्वोच्च न्यायालय भी वही था।

ठाकुर तथा राणे

कुछ इतिहासकारों ने माना है कि राणा योद्धा वर्ग से थे तथा मैदानों से आये थे। परन्तु ठाकुरों को कनैतों तथा खशों के वंशज माना गया है। कुछ विद्वान राणा तथा ठाकुर शब्दों का उद्‌भव संस्कृत से मानते हैं। उनके अनुसार राणा "राजनका" का तद्‌भव रुप है तथा संस्कृत में ठाकुर का अर्थ स्वामी होता है। क्योंकि उस समय वे अपने क्षेत्र के सर्वे सर्वा होते थे, तभी इन्हें ठाकुर पुकारा गया।

राहुल सांस्कृत्यायन अनुसार ठाकुर तिब्बती शब्द ठकरस से निकला है। इसका अर्थ श्वेत रक्त है जो सता के पर्यायवाची है। ठाकुर इसी का अपभ्रंश हैं। विद्वानों का अनुमान है कि ठाकुर और राणे एक ही समय विद्यमान थे। हेचिसन तथा वोगल अनुसार पहले ठाकुरों का अधिपत्य हुआ और राणे बाद में सत्ता में आये थे। कुल्लू में राणे कम और ठाकुर अधिक

थे। कुल्लू के कुछ राणों और ठाकुरों के क्षेत्र बुरुआ, गजां, बड़ागढ़, रुमसु, पारशा, गाहर, काईस, बन्दल, छियोंर, चौंग, कनावर, हरकण्डी, कोटकण्डी, भोसा, तंदी (भलाण), शांहशर, तलाड़ा, बनोगी, नुहांडा, बरामगढ़, चैहणी, सरची, धोल, हिंमरी, रघुपुर, सिरीगढ़, दयार, डेथवा, नारायणगढ़ इत्यादि थे।

काईस कोठी में आठ ठाकुर थे। इनमें से एक ठाकुर कुर लाल नगर के राणा रामपाल से मिल गया। इन्हों ने अन्य सात को समाप्त कर दिया। राउगी, कोटाआगे तथा दौल में किले थे। नन्दसूरजन कोटा आगे का ठाकुर था। यहां का ठाकुर फागु भी हुआ है। बन्दल का ठाकुर बोगी था। जो बड़ोगी गढ़ में रहता था। यह सिद्ध सिंह के हाथों मारा गया। उसके वंशज ठग और कन्दरोड़ू हैं जो बन्दल और दैनीधार (खराहल) में रहते हैं। काईस कोठी में अन्य ठाकुर थे लन्याल, रगयाल, वसम, कसौली आदि। शालंग के ठाकुर का गढ़ नाला के पार था। राजाओं ने बाद में इसे थाना के रूप में प्रयोग किया।राणों और ठाकुरों के बीच किसी बड़े युद्ध के बारे में जानकारी नहीं। हलाण (नगर) में चार ठाकुर थे। हिमसू, धराशू, कोटगु तथा कुणधू ठाकुर। ठाकुरों ने अपनी वंश परम्परा जीवित रखने के लिए गर्ग ऋषि से वर मांगा। खड़याल 60 ठाकुर तथा धूराल 12 ठाकुर थे। हाम्टा क्षेत्र में सात गांव थे जिन पर गिरदा तथा मिरदा ठाकुरों का राज था। हलाण क्षेत्र में कुणगु ठाकुर तथा नगवानी ठाकुर हुए।

पिती ठाकुर

उळंचे स्थानों में रहने वाले ठाकुर तिब्बत के थे जिन्हें कुल्लू वाले "पित्ती ठाकुर" पुकारते थे। उन्हें तिब्बत में "जो" पुकारा जाता था। पिती शब्द से यह धारणा बनती है कि ये स्पिति प्रदेश के थे। परन्तु स्पिति कभी इतना दृढ़ न हुआ कि वहां के निवासी इतनी दूर आकर आक्रमण करते।वहां इतनी जनसंख्या कभी नहीं रही। पित्ती शब्द पश्चिम तिब्बत के उन आक्रमणकारियों के लिये प्रयोग किया गया है जो स्पिति के रास्ते आये। इनका वर्णन 12वीं से 16वीं शताब्दी में आया है।वे अपने व्यापारिक रास्तों के आस पास सुरक्षा के लिए बसे थे, जहां उन्हें अनुकूल जलवायु भी प्राप्त थी। इस रास्ता की सुरक्षा पर तिब्बत के पश्चिमी भाग की खाद्य आपूर्ति निर्भर थी। रुमसु आदि पर पित्ती ठाकुरों का राज था। ये बड़े निर्दयी थे। छाकी नाले के उपर भनारा में भी पित्ती ठाकुर ही रहते थे।

11. पाल वंश

पालवंश के राजाओं की सूची :

नोट

पालवंश के राजाओं की सूची तुलनात्मक अध्ययन के पश्चात तैयार की गई है। कई राजाओं के एक से अधिक मिलते–जुलते नाम मिले जो दिये जा रहे हैं:–

1.	विहंगमणी / भंगमणिपाल	2.	पच्छपाल
3.	विहंगपाल	4.	दूरहीनपाल / हीनपाल
5.	स्वर्गपाल	6.	शक्तिपाल
7.	महिन्द्रपाल / महिधरपाल	8.	ओमपाल
9.	अन्तपाल / अनन्तपाल	10.	राजेन्द्रपाल
11.	विसादपाल / विसरापाल	12.	विशुद्धपाल / यशोद्धापाल
13.	उत्तमपाल	14.	ध्वजापाल / द्विजपाल
15.	चक्र पाल	16.	कर्णपाल
17.	सूरजपाल	18.	रच्छपाल / रक्षपाल
19.	रुद्रपाल	20.	हमीरपाल
21.	प्रसिद्धपाल	22.	हरिचन्द्रपाल
23.	सुभटपाल	24.	सोमपाल
25.	संसारपाल / संसारचन्द्रपाल(600–650ए.डी.)		
26.	भोगपाल		
27.	विभयपाल	28.	महीपाल
29.	ब्रह्म पाल	30.	गणेशपाल
31.	यज्ञपाल	32.	गम्भीरपाल
33.	भूमिपाल	34.	दतेशरपाल (680–700)
35.	अमरपाल	36.	सीतलपाल / शीलपाल
37.	जड़ीशर पाल / बड़ीशर पाल		
38.	प्रकाशपाल		
39	अजयपाल / अजीतशरपाल / अजमेरपाल		
40.	अचम्भापाल	41.	तप्तेश्वरपाल / तपेशवरपाल
42.	नपेशरपाल / पुनेशरपाल / मुनीशरपाल		
43.	परमपाल	44.	नगेन्द्रपाल
45.	नारदपाल	46.	नरोतमपाल
47.	शीशपाल	48.	सूखपपाल

49.	भूपाल / भवपाल(880–900)		
50.	ज्ञानरुद्रपाल		
51.	अनिरुद्धपाल	52.	हेतपाल
53.	श्रीपाल	54.	सूरतपाल / सूरपाल
55.	हशीरपाल	56.	सन्तोखपाल(1)
57.	तेगपाल	58.	उचितपाल (1125–50)
59.	चन्द्रपाल	60.	सिकन्द्रपाल
61.	तरसपाल / सरसपाल	62.	सहदेवपाल
63.	महादेवपाल		
64.	निरतीपाल / तिरतीपाल / कीर्तिपाल		
65.	वैनपाल	66.	अतीतपाल
67.	हस्तपाल	68.	ससीपाल / सहीपाल
59.	गम्भीरपाल	70.	निशुद्धपाल / निशुदनपाल
71.	नरेन्द्रपाल	72.	सन्तोषपाल(1)
73.	नन्दपाल	74.	धातरीपाल / धृतिपाल
75.	इन्द्रपाल	76.	महीचक्रपाल
77.	रत्नपाल	78.	जयधरपाल
79.	खरालपाल	80.	हंसपाल
81.	अगस्तपाल	82.	मदनपाल
83.	बुद्धपाल	84.	उधर्नपाल (1418–1428)
85.	कैलाशपाल / कश्यप पाल (1429–50)		

कैलाशपाल कुल्लू छोड़कर चला गया अतः 50 बर्ष तक कोई कुल्लू का राजा न था।

पालवंश के शासन से पूर्व कुल्लू की स्थिति

पाल वंश के शासन से पूर्व सारे कुल्लू पर छोटे–छोटे राणाओं और ठाकुरों का राज्य था। ये आपस में लड़ते रहते थे तथा इनका शासन बड़ा क्रूर था। जगतसुख के आस पास पित्ती ठाकुरों का आतंक था। वे तिब्बत से थे और अत्याचारी थे। लोग उनसे बहुत दुखी थे तथा छुटकारा चाहते थे। लोगों पर देवता तथा ब्राह्मणों का विशेष प्रभाव था। उनके परामर्श और भविष्य वाणियों पर लोगों का अटूट विश्वास था।

12. पाल वंश के राजा और घटनाएं

विहंगमणिपाल

विहगं मणिपाल ने पाल वंश की नींव कुल्लू में रखी। इनका मूल स्थान प्रयाग (इलाहाबाद) था। उनका इलाहाबाद छोड़ने बारे कारणों का निश्चत पता नहीं चलता। वह वहां से अल्मोड़ा, बद्रीनाथ की पहाड़ियों की ओर गये। कुछ समय अपने को संगठित किया ओर मायापूरी हरिद्वार को विजयकर राज करने लगे। विहंग मणिपाल के सात भाई थे। एक प्रकरण के अनुसार सौतेली माता द्वारा राज सिंहासन हथियाने के लिये एक सशक्त षड़यंत्र रचा। जिसकी जानकारी राज पुरोहित को लगी। उसने राजमाता को इस बारे जानकारी दी। विहंग मणिपाल रानी, बेटे, पच्छपाल तथा पुरोहित उदयराम के साथ कुल्लू की और निकल आया। अन्य विचार है कि भीषण अकाल का सामना न कर पाने के कारण वह कुल्लू की ओर सपरिवार चला आया। रास्ते में राज पुरोहित इनके आबास तथा भोजन का प्रबन्ध करता रहा। वह सर्व प्रथम मणिकर्ण घाटी गया परन्तु वहां पांव न जमा सका। वहां से नस्त (वर्तमान जगतसुख) चला आया और छापे राम नाम के एक कुम्हार के घर रहा। यहां की परिस्थितियां उसने अपने अनुकूल पाई और उपयुक्त अवसर की प्रतीक्षा करने लगा।

एक दिन राजा जगत सुख के निकट जयधार में एक पत्थर पर लेटा था। जयधार क्लाथ पुल के सामने है। पास से गुजरते हुये, उस क्षेत्र के प्रसिद्ध ज्योतिषी ज्वाला की नजर राजा के पद्म रेखा पर पड़ी। वह समुद्रक शास्त्र का भी ज्ञाता था। उसने रेखा देख उसके राजा बनने की भविष्य वाणी की। यह बात लोगों में फैल गई। ज्वाला इसके पश्चात त्रिलोक नाथ की यात्रा पर चला गया परन्तु इस भविष्यवाणी ने विहंगमणिपाल को राजा स्वीकारे जाने का रास्ता प्रशस्त किया। जयधार पर ग्राम देवताओं ने और राजा ने एक दूसरे को वचन दिये। देवताओं ने राजा को गद्दी बनाये रखने और राजा ने उनकी चाकरी का वचन दिया देवता अब भी कई बार कुल्लू राजा को यह कह इस वचन की याद दिलाते हैं "जयधारा रा वचन"। उसने देवी हिडिम्बा जिसका उस क्षेत्र में बड़ी मानता थी, का संघर्ष से पूर्व आशीर्वाद प्राप्त किया। बसनारा (भनारा) जो जगतसुख से 1.5 कि.मी. दूर चढ़ाई पर स्थित है। यहां मेला चचौहली लगता है। इस अवसर पर लोग यहां बड़ी संख्या में इकट्ठे हुये। वे पित्ती ठाकुरों के आतंक से तंग आ चुके थे। उन्होंने विहंगमणिपाल के अधीन संघर्ष आरम्भ किया।

वह स्वयं शवरी देवी के मन्दिर शुरु गांव से संघर्ष का नेतृत्व करता रहा और अपने उद्देश्य में सफल हुआ। लोगों ने उसे राजा स्वीकारा। उसने

जगतसुख को अपनी राजधानी बनाया और अन्य ठाकुरों और राणों के विरुद्ध अपना संघर्ष जारी रखा। जगतसुख के आस पास के अन्य राणों और ठाकुरों को जीतकर पाल वंश के राज्य की नींव सुदृढ़ की। ज्वाला प्रसाद त्रिलोकनाथ की यात्रा से जब वापिस लौटा तो जगतसुख में दो नालों के मध्य सींचित भूमि देकर राजा ने उसे पुरस्कृत किया। ज्वाला प्रसाद के वंशज पलझोटू अभी भी कुल्लू में रहते हैं।

पालवंश के कुल 85 राजा हुये जिन्होंने 1500 बर्ष से अधिक समय तक कुल्लू पर राज्य किया। यह सूर्यवंशी राजपूत थे। इनका गोत्र कशयप, शाखा मध्यान्दनी तथा इष्टदेव नर सिंह था। पालवंश की नींव प्रथम शताब्दी के अन्त या द्वितीय शताब्दी के आरम्भ में पड़ी।

पच्छपाल

विहंगमणिपाल के दो पुत्र पच्छपाल और नरेन्द्रपाल थे। पच्छपाल बड़ा था, राजा बना। उसने भी राणों और ठाकुरों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा। उसने गोजरा और बुरुआ के ठाकुरों को जीता। बुरुआ की लड़ाई में नरेन्द्रपाल और बुरुआ का ठाकुर मारा गया। इसके अतिरिक्त गुमर नाम का ठाकुर भी मारा गया जिससे प्रतीत होता है कि बुरुआ में ठाकुरों ने संगठित होकर युद्ध किया था। जीते हुये ठाकुरो से पच्छपाल ने कर लेना आरम्भ किया।

पच्छपाल के पश्चात ये क्रमबार ये राजा बने: **विहंगपाल, हीनपाल, स्वर्गपाल**। तीनों राजाओं के कार्यों के बारे में कोई जानकारी नहीं। परिस्थितियों के आधार पर यह निष्कर्ष निकाला जा सकता है कि उन्हें भी निरन्तर संघर्ष करना पड़ा होगा।

शक्तिपाल

स्वर्गपाल के दो रानियां थी, जिनके पुत्रों का जन्म एक ही समय में हुआ था। पिता की मृत्यु पर दोनों पुत्रों शक्तिपाल और जनकपाल ने राज्य पर अपना अधिकार जताया। राज्य को दो भागों में बांट देने का निश्चय किया गया। परन्तु राज पुरोहित ने इसका विरोध किया और शक्तिपाल को बड़ी रानी का पुत्र होने के कारण राजा बनाने के लिए कहा। जिसे सभी ने माना और शक्तिपाल का राज तिलक हुआ। इसके आगे के राजाओं में भिन्न—भिन्न नाम मिलते हैं। प्रत्येक लेखक की वंशावली में भिन्नता है। तुलनात्मक अध्ययन के आधार पर अगले राजाओं के क्रम से नाम इस प्रकार है: **महिन्द्रपाल (महिधर पाल), ओमपाल, अनन्तपाल, राजेन्द्र पाल।**

राजेन्द्रपाल

अगला राजा राजेन्द्रपाल हुआ। उस समय गज़ां क्षेत्र का राणा सूरत चन्द था। गज़ां जगतसुख तथा नगर के मध्य है। राणा की एक मात्र सन्तान उसकी बेटी सरुप सुन्दरी थी। सूरतचन्द की मृत्यु के बाद वह सिहासंन पर बैठी। उसके सिंहासन आरोहण के तुरन्त बाद राजेन्द्रपाल ने उसे अधीनता स्वीकार करने और कर देने के लिए कहा। सरुप सुन्दरी बड़ी बहादुर और निडर थी। उसने दोनों बातें मानने से इन्कार किया। राजा ने अपने पुत्रों के अधीन उसके विरुद्ध सेना भेजी। राजा के ग्यारह पुत्र इस लड़ाई में मारे गये और विजय के आसार दिखाई नहीं दे रहे थे। राजा ने अपने 12वें पुत्र को सन्धि पत्र देकर सरुप सुन्दरी के दरबार में भेजा। परन्तु उसने पत्र देने से पूर्व रानी को अभिनन्दन न किया। जिससे वह जान गई कि वह राजा का पुत्र है। उसने उसे तुरन्त बन्दी बना लिया, और राजा के सामने उसे अपनी बहू बनाने का प्रस्ताव रखा। जिसे राजा ने तुरन्त स्वीकार कर लिया। बन्दीगृह से राजपुत्र को मुक्त कर विवाह बन्धन में बांध लिया। इस प्रकार गज़ां का क्षेत्र राजेन्द्रपाल के राज्य में सम्मिलित हुआ। यह युद्ध एक बर्ष तक चला। इसलिये क्षेत्र का कोठी का नाम भी बरसाई पड़ा।

विसदपाल या विसरापाल

राजेन्द्रपाल की मृत्यु पर विसदपाल राजा बना। उसने अपने पिता की तरह अपनी सीमायें बढ़ाने का कार्य जारी रखा। उसने नगर के राणा कुरम चन्द्र पर आक्रमण किया। राणा हार कर भाग गया। वह चार साल छुप कर युद्ध की तैयारी करता रहा और फिर युद्ध क्षेत्र में उतरा परन्तु फिर हारा और युद्ध में ही मारा गया। उसके पुत्र ने कर देना माना और अधीनता स्वीकार कर ली।

विशोधापाल या यशोधपाल

इस राजा ने "नगर" क्षेत्र को अपने राज्य में सम्मिलित किया। इसे नगर इतना भाया कि इसने नगर को राजधानी बनाने का निश्चय किया। नगर में निर्माण कार्य आरम्भ कर दिया गया परन्तु राजा का आवास "नस्त" में ही रहा।

त्रिपुरा सुन्दरी के मन्दिर का निर्माण

नगर में मेरुशैली का त्रिपुरा सुन्दरी का मन्दिर का निर्माण भी इसी राजा ने करवाया था। जनश्रुति अनुसार राजा को स्वपन में स्थान दिखाई दिया। उस स्थान पर जाकर देखा कि मकड़ी ने अपनी जाले से मन्दिर का निर्माण

किया है। राजा ने वैसे मन्दिर का उसी स्थान पर निर्माण करवाया तथा मूर्ति की स्थापना की।

उत्तमपाल

इस समय तक ब्यास नदी के बायें छोर के अधिकतर क्षेत्र को पाल राजाओं ने जीत लिया था। राज्य को सुदृढ़ करने और जीते हुये प्रदेश का प्रभुत्व रखने के लिये राजा उत्तम पाल ने नगर को राजधानी और आवास बनाया।

द्विजपाल या ध्वजापाल

इस राजा के समय रुमसू के ठाकुर के साथ युद्ध हुआ। यह पिती ठाकुरों का वंशज था। इसके पास सात मंजिल का गढ़ था। युद्ध में रुमसु का ठाकुर मारा गया। उसके क्षेत्र को भी राज्य में मिला लिया गया। अब पिती ठाकुरों का प्रभुत्व हाम्टा दर्रा के निकट और ऊंचे क्षेत्रों पर रहा, जहां से तिब्बत को रास्ता जाता था। इन रास्तों की सुरक्षा उनके लिए आवश्यक थी क्योंकि इसी रास्ते उन द्वारा अन्न या अन्य वस्तुएं तिब्बत ले जाई जाती थीं।

इसके पश्चात दो राजाओं, चक्रपाल तथा कर्णपाल ने राज्य किया जिसके समय की घटनाओं की जानकारी नहीं है।

सूरजपाल

सूरजपाल की अनेक अवैध सन्तानें थी परन्तु कोई भी वैध सन्तान न हुई। इस राजा का वर्णन सीस के देवता जमलू की भारथा में आता है।

रक्षपाल

रक्षपाल किस प्रकार राजा बना, इसकी जानकारी नहीं है। परन्तु सूरतपाल के पश्चात रक्षपाल ने राज्य किया। रक्षपाल भी निसन्तान मरा। उसकी मृत्यु के पश्चात उसके भाईयों में राज्य पाने के लिए संघर्ष छिड़ गया जिससे कुछ भाई मारे गये। इसी राजा ने विशिष्ठ मन्दिर का निर्माण किया था।

रुद्र पाल (600–650 ई.)

सिंहासन के लिये हो रहे युद्ध को देख कर स्थानीय राणे ठाकुर संगठित होने लगे। ठाकुर राणाओं के अपने–अपने राज्य प्राप्ति के लिये सामूहिक प्रयास से पूर्व ही भाईयों ने युद्ध समाप्त कर दिया और रुद्र पाल को राजा मान लिया।

इसी समय स्पिति के राजा राजेन्द्र सैन ने कुल्लू पर आक्रमण कर दिया। रुद्रपाल युद्ध में हार गया और उसने राजेन्द्रसैन को कर देना मान

लिया। जो एक रूपये में छः आना थे। चम्बा के राजा इन्द्रपाल ने भी इसी समय आक्रमण किया। उसने लाहुल का प्रदेश पहले जीता हुआ था। रुद्रपाल ने उन्हें भी कर देना मान लिया। कुछ इतिहासकारों का विचार है कि स्पिति तथा चम्बा की सेनाओं ने इकट्ठे ही रुद्रपाल के राज्य पर आक्रमण किया और उसे हराया। सम्भवतः इस आक्रमण के कारण ही भाईयों का सिंहासन का युद्ध समाप्त हुआ होगा।

हमीरपाल

हमीरपाल ने चम्बा तथा स्पिति के राजाओं को कर देना जारी रखा।

प्रसिद्धपाल

चम्बा के राजा इन्द्रसैन की इस समय तक मृत्यु हो गई थी। प्रसिद्धपाल ने उसे तथा स्पिति के शासक दोनों को कर देने से इन्कार कर दिया और अपनी सेना लेकर रोहतांग पर आ गया। जहां घमासान युद्ध हुआ। चम्बा की सेना की हार हुई और वापस लौट गई। अब प्रसिद्धपाल ने अपनी सेना के साथ लाहुल पर आक्रमण किया और उस पर अधिकार कर लिया। इस प्रकार चम्बा को दिये जाने वाले कर से मुक्ति मिली। प्रसिद्धपाल ने स्पिति भी जीता।

प्रसिद्धपाल के पश्चात **हरिचन्द्रपाल या सुभटपाल तथा सोमपाल** राजा हुये जिनके राज्य की घटनाओं के बारे जानकारी नहीं मिलती।

संसारपाल या संसार चन्द्र पाल

संसारपाल की सहायता से "ग्यमूर" (लद्दाख कापूर्वी जिला) के शासक ने स्पिति पर आक्रमण किया। चेतसैन को हराया और उसका वध कर दिया। ग्यमूर के शासक ने संसार पाल को सहायता के बदले में स्पिति के तीन गांव दिये। दो गांव चेतसेन के पुत्र को निर्वाह के लिये दिये। शेष क्षेत्र को उसने अपने राज्य में मिला लिया। सम्भवतः इससे सैन वंश का स्पिति पर अधिपत्य समाप्त हो गया।

भोगपाल – विभयपाल – महिपाल

संसार पाल के पश्चात भोगपाल राजा बना परन्तु उसके भाई विभयपाल ने उसके उतराधिकारी के अधिकार को चुनौती दी। दोनों भाईयों के बीच सिंहासन के लिए युद्ध हुआ, जिसमें भोगपाल मारा गया। परन्तु विभयपाल को भी राज्य अधिक समय तक करना प्राप्त नहीं हुआ। भोगपाल के पुत्र महिपाल ने अपने पिता का बदला लिया और अपने चाचा को मारकर सिंहासन पर बैठा।

ब्रह्मपाल

अगला राजा ब्रह्मपाल हुआ। इसकी कोई वैध सन्तान न थी। अतः इसकी मृत्यु के बाद अफरातफरी फैल गई।

गणेशपाल (620 ई.)

गणेशपाल राजा का दासी से पुत्र था। ब्रह्मपाल राजा की मृत्यु पर चम्बा, लद्दाख, सुकेत, बुशैहर, कांगड़ा तथा भंगाल के राजाओं ने आपस में विचार विमर्श के पश्चात गणेशपाल को सर्वसम्मति से राजा बनाया। परन्तु इस तथ्य की सच्चाई पर सन्देह होता है। उस समय लद्दाख तिब्बत का एक प्रान्त था। सुकेत और भंगाल दोनों राज्य अस्तित्व में नहीं आये थे। उस समय चम्बा भी ब्रह्मपुर राज्य कहलाता था। हरदयाल का यह कथन कि वजीरों ने पड़ोसी राजाओं की स्वीकृति से गणेशपाल को राजा बनाया ही सही है। उसकी पुष्टि चम्बा इतिहास भी करता है। इसी राजा के समय वर्ष 635 ए.डी. में हयूनसांग चीनी यात्री कुल्लू आया।

यज्ञपाल या गम्भीरपाल

गणेशपाल के पश्चात यज्ञपाल राजा बने।

भूमिपाल

चम्बा इतिहास से यह जानकारी मिलती है कि गम्भीरपाल के भूमिपाल तथा सुखपाल दो पुत्र थे। गम्भीरपाल की मृत्यु पर दोनों भाईयों में सिंहासन प्राप्तिं के लिये युद्ध हुआ। जिसमें सूखपाल मारा गया तथा भूमिपाल राजा बना।

दतेश्वरपाल

इस राजा के समय भरमौर (चम्बा) के राजा मेरु वर्मन ने लाहुल के रास्ते 680 ई. में कुल्लू पर आक्रमण किया। उस समय भरमौर राज्य रावी की ऊपरी घाटी तक सीमित था जिसे मेरु वर्मन पूर्व और पश्चिम की ओर बढ़ाने का प्रयत्न कर रहा था। कुल्लू राजा ने उनकी सेनाओं को रोहतांग पर मुकाबला किया परन्तु हार गया और मारा गया। स्पिति के राजा ने इस युद्ध में चम्बा की सहायता की। चम्बा सैनायें कुगती दर्रा लाहुल से होकर आई और कुल्लू पर अधिकार कर लिया। 20 बर्ष के लगभग इनका राज्य रहा। यह 700 ई. की घटना मानी जाती है।

अमरपाल

पिता की मृत्यु पर अमर पाल राजा बना। और दोनों पुत्रों और सेना के साथ फिर भरमौर की सेनाओं का सामना किया परन्तु उसकी भी हार हुई वह और उसका पुत्र भी युद्ध में मारा गया।

शीलपाल या सीतलपाल

शीलपाल अमरपाल का दूसरा पुत्र था। उसने भाग कर बुशैहर में शरण ली। राजा बुशैहर ने उसे बड़े आदर से रखा। परन्तु उसकी वहीं कुछ समय पश्चात मृत्यु हो गई शीलपाल का बेटा जड़ीशरपाल उस समय छोटा था। हचिसन तथा वोगल अनुसार शीलपाल की अगली पांच पीढ़ी बुशैहर के आश्रय में रही तथा जड़ीशरपाल छटी पीढ़ी में था। परन्तु यह बात ठीक नहीं लगती। क्योंकि जड़ीशरपाल ने अपने राज्य को भरमौर सैना से 780ई. में मुक्त कराया। 80 वर्ष में पांच पीढ़ियां समाप्त हो जाये, यह भी सम्भव नही दीखता।

जड़ीशरपाल

चम्बा राजाओं का 20 बर्ष तक कुल्लू पर अधिकार रहा। जब तिब्बतियों द्वारा चम्बा पर अधिकार कर लिया और वहां का राजा (किरस) मारा गया तो जड़ीशरपाल जो इस समय तक युवक हो गया था ने बुशैहर राजा की सहायता से भरमौर की सेना को मार भगाया और कुल्लू पर पुन: अधिकार पा लिया। जड़ीशरपाल के पश्चात इन राजाओं ने कुल्लू पर राज्य किया :—

1. **प्रकाशपाल, अजीतसरपाल या अजयपाल, अचम्भापाल — तप्तेश्वरपाल — पुनेशरपाल।**

तप्तेशवरपाल निसन्तान था इसीलिये उसकी मृत्यु पर सबसे छोटा भाई पुनेश्वरपाल सिंहासन पर बैठा क्योंकि शेष सभी भाई मन्द बुद्धि थे। इसके पश्चात परमपाल तथा नागेन्द्रपाल ने राज्य किया।

नारदपाल

नारदपाल के समय में ब्रह्मपुर (चम्बा) की सेना जिसे स्थानीय भाषा में गद्दी सेना भी कहा जाता था से बारह बर्ष तक युद्ध चला। 920 ई. की घटना है। भरमौर की सेना कुगती (लाहुल) दर्रा से आई थी। चम्बा की सेना रोहतांग पार करके मनाली तक बढ़ गई। उसने गद्दी पधर मनाली में अपनी छावनी बनाई और अपनी सुरक्षा के लिये मंजन कोट का दुर्ग भी जीता। बारह

बर्ष के संघर्ष के पश्चात अन्तत: दोनों पक्षों में सन्धि हो गई। परन्तु कुल्लू वालों को भरमौर सेना की उपस्थिति खटकती रही। वे आक्रमणकारियों को खदेड़ने की सोचते रहे। इसलिये इन्होंने भरमौर सेना को कोठी गांव में रात्री भोज पर आमन्त्रित किया।

गांव जाने के लिये ब्यास नदी के पुल को पार करना पड़ता है जिसके नीचे बहुत गहरी खाई है। भोज के पूर्व गद्दी सैनिकों को सूरापान करा दिया गया था। अन्धेरे का लाभ उठाते हुए पुल के बीच तख्ते उखाड़ दिये गये और उसके स्थान पर भांग की सूखी डालियों (मघाट) बिछा दिये गये। गांव में जोर जोर से स्वागत ढोल बजाना आरम्भ कर दिया गया ताकि गिरते हुये सैनिकों की चीख या आवाज न सुनाई दे। गद्दी सैनिक आते गये और गिर कर डूबते गये। जब एक ढोल वाला नीचे गिरा और ढोल के टकराने से नदी से आवाज आई तो सैनिक चौंके और पीछे भागे। परन्तु वहां छिपे हुए कुल्लू के सैनिक उन पर टूट पड़े और उन्हें मार भगाया। उस समय साहिल वर्मन राजा चम्बा था। नारदपाल के बाद कुल्लू सिंहासन पर **"नरोतमपाल"** – **शशीपाल तथा सूखपाल** बारी–बारी से बैठे।

भूपाल या भवपाल

सुकेत के राजा वीरसैन ने पांगना अपनी राजधानी बनाई थी। 765 ई. में उसने अपना राज्य विस्तार करते हुए बाहरी सिराज को जीता। जलोड़ी पार कर भीतरी सिराज पर अधिकार किया। फिर परोल तथा लग सारी को जीता और मनाली तक पहूंचा। उस समय कुल्लू का राजा भूपाल था। उसने वीरसैन का मुकाबला तो किया परन्तु हार गया और बन्दी बना लिया गया। कुल्लू राजा ने कर देना माना। वीरसैन ने राज्य उसे लौटा दिया।

ज्ञान रुद्रपाल भूपाल का पुत्र था। वह भी अपने राज्य काल में सुकेत राजा को कर देता रहा।

अनिरुद्ध पाल

अगला राजा था अनिरुद्ध पाल और वह भी सुकेत राजा को कर देता रहा।

हेतपाल या हस्तपाल

हस्तपाल के समय सुकेत में गृह युद्ध छिड़ गया। सुकेत के राजा ने हस्तपाल से गृहयुद्ध में सहायता मांगी जिसके बदले में उसे कर मुक्त कर दिया गया। घटना इस प्रकार है:–

सुकेत का राजा विक्रम सैन सिंहासनारुढ़ होने के पश्चात तीर्थ यात्रा पर हरिद्वार गया और अपना राज काज अपने छोटे भाई त्रिविक्रम सैन को सौंप दिया। त्रिविक्रम सैन को राज सत्ता मिलते ही इसे स्थाई रुप से अपने पास रखने की इच्छा हुई। उसने कुल्लू राजा को कर मुक्त कर सहायता के लिये तैयार किया।

दो बर्ष पश्चात विक्रम सैन तीर्थ यात्रा कर जब लौटा तो रास्ते में ही उसे षड़यन्त्र का पता लगा। उसने क्योंथल के राणा से सहायता ली। जनता ने भी राजा का साथ दिया। दोनों पक्षों की सेनाओं में सतलुज के किनारे ज्यूरी के स्थान पर मुकाबला हुआ। एक ओर कुल्लू राजा और त्रिविक्रम की सेनायें और दूसरी ओर क्योंथल तथा विक्रमसेन की सेनायें। हस्तपाल और त्रिविक्रमसैन मारे गये। विक्रम सेन ने कुल्लू पर अधिकार कर लिया और हस्तपाल के बेटे धनीराम को जागीरदार बना दिया। उसके उतराधिकारी गोपालदास तथा लक्ष्मीदास भी जागीरदार ही सुकेत के रिकार्ड में बताये गये हैं।

श्रीपाल / सूरपाल

सुकेत राजा लक्ष्मण सैन जब गद्दी पर बैठा तो छोटी आयु का था। वह विक्रम सैन का पोता था। श्रीपाल सुअवसर पाकर स्वतन्त्र राजा बन गया। चौदह बर्ष पश्चात लक्ष्मण सैन ने युवा होने पर कुल्लू का पुन: विजय करने के लिये आक्रमण कर दिया। भीतरी सिराज, बाहरी सिराज, पार्वती घाटी, लग घाटी तथा परोल वजीरी के एक भाग को उसने जीत लिया। श्रीपाल ने कर देना माना और सन्धि कर ली।

इसके पश्चात **सूरतपाल** और **सूरपाल** और **हशीरपाल** कुल्लू राज्य सिंहासन पर बैठे। इनके राज्य घटनाओं के बारे कोई जानकारी नहीं। विचार है कि ये भी सुकेत राजा को कर देते थे।

सन्तोषपाल (प्रथम)

सन्तोषपाल ने लाहुल पर आक्रमण किया जहां पर चम्बा के अधीन कुछ ठाकुरों का राज्य था। सन्तोषपाल ने गून्थला से गम्पूर तक का क्षेत्र जीता और ठाकुरों से कर के रुप में गूंठ (घोड़े) चंवर, कुते, कस्तुरे तथा बालों से बनी रस्सियां प्राप्त की।

तेगपाल

तेगपाल के समय वाल्तीस्तान के राजा मुहम्मद खां ने कुल्लू पर आक्रमण किया। युद्ध में तेगपाल मारा गया। उसके पुत्र उचित पाल ने कर

देना माना। उचित पाल से नजराना प्राप्त करने के पश्चात राज्य उसे ही सौंप कर मुहम्मद खां वापस लौट गया।

उचितपाल

उचितपाल ने कुछ समय पश्चात बाल्तीस्तान के राजा को कर देना बन्द कर दिया। उसने लाहुल पर भी आक्रमण किया और उसके पांच गांव जीत लिये। ये वहीं गांव थे जो सन्तोषपाल ने जीते थे। उसने मंगलौर (राजधानी मण्डी राज्य) पर आक्रमण किया। राजा करंचन सैन को मार कर मंगलौर को कुल्लू राज्य में सम्मिलित किया।

चन्द्रपाल (1125–50 ई.)

उचित पाल की मृत्यु होने पर अभी उसका बेटा अपने पिता के किरया कर्म में ही व्यस्त था कि बाल्तीस्तान तथा लद्दाख की सामूहिक सेना ने कुल्लू पर आक्रमण किया। चन्द्रपाल को पकड़ कर भू–भू जोत (लगघाटी) के निकट मोहनगढ़ में बन्दी गृह में डाल दिया। चन्द्रपाल ने एक शपथपत्र इन राजाओं को दिया जिसके अनुसार लोहा तथा सूरा गाय सदा हर वर्ष कर के रुप में देना माना। कुल्लू राजा 1620 ई. तक यह शर्त निभाते रहे। ऐसा प्रतीत होता है कि उस समय लाहुल भी कुल्लू के अधीन होगा। जहां से सूरा गाय भेजी जा सकती थी। लद्दाख का इतिहास "ज्ञालख" इस आक्रमण की पुष्टि करता हैं। आक्रमणकारी लद्दाख के राजा का नाम "उत्पल" था जिसने 12वीं शताब्दी में कुल्लू विजय किया था। लद्दाख के टांगचे स्थान सोगदी लिपि में एक शिलालेख है जिस अनुसार 8वीं शताब्दी से भारत और लद्दाख में व्यापार होता रहा। चंगथंग (पश्चिम तिब्बत) का सोना तथा चंवर कुल्लू के रास्ते भारत आते थे तथा बदले में घोड़े तथा नमक प्राप्त किया जाता था।

सिकन्द्रपाल

सिकन्द्रपाल सिंहासन पर बैठते ही ल्हासा तथा लद्दाख से छुटकारा पाने के लिये सोचने लगा। वह किसी शक्तिशाली राजा की सहायता के बिना दोनों सेनाओं को खदेड़ नहीं सकता था। 1377 ई. में मुहम्मद तुगलक दिल्ली सम्राट ने कांगड़ा विजय किया। सिकन्द्रपाल ने उसे कर देना माना और लद्दाख और तिब्बत के विरुद्ध सहायता मांगी। मुहम्मद तुगलक ने एक लाख सेना भेजी जो कुल्लू की पार्वती घाटी से होती मानतलाई के दर्रे से पीछे तक दोनों सेनाओं को धकेलती हुई तिब्बत तक जा पहूंची। कुछ का विचार है कि यह आक्रमण 1355 ई. में हुआ।

मानतलाई के आगे लद्दाख तथा तिब्बत का क्षेत्र छोटा चीन के नाम से कुल्लू में जाना जाता था। इसी कारण इस आक्रमण को इतिहास में मुहम्मद तुगलक का चीन पर आक्रमण कहा गया है। मानतलाई में झील भी है। तिब्बत तथा लद्दाख के राजाओं ने कर देना माना। लौटते हुये तुगलक की सेना बूरे मौसम में फंस गई। इसके पश्चात स्थानीय लोगों के आक्रमण के कारण सारी सेना मारी गई। केवल दस सैनिक ही वापस दिल्ली पहुंचे। उन्हें भी मुहम्मद तुगलक ने मरवा दिया। यह बदर ए चब की गाथा में वर्णित है। इतिहासकार फरिश्ता ने इसका वर्णन नहीं किया है।

लद्दाख तथा तिब्बत के राजा कर को कुल्लू के राजा के पास पहुंचाते थे और वह आगे दिल्ली पहुंचाता था। इस आक्रमण से मुहम्मद तुगलक की इस पहाड़ी क्षेत्र में प्रभूसत्ता पूर्ण हुई और बाल्तीस्तान तथा तिब्बत का हस्तक्षेप बन्द हुआ। सिकन्द्रपाल को कुल्लू राज्य वापस मिल गया तथा तिब्बत तथा लद्दाख के आक्रमण से सुरक्षित हो गया।

— सरसपाल, सहदेवपाल, महादेवपाल, नीरतीपाल (कीर्तिपाल) वैनपाल, अतीतपाल—

ये अगले राजा हुये जिनके शासन की घटनाओं के बारे में जानकारी प्राप्त नही हैं।

हस्तपाल (द्वितीय)

इसके शासनकाल में राजा बुशैहर ने कुल्लू पर आक्रमण किया। वह हस्तपाल से नजराना प्राप्त कर और कर निर्धारित करके वापस बुशैहर लौट गया।

सिंहपाल

सिंहपाल अगला राजा भी बुशैहर को कर देता रहा।

गम्भीरपाल

सिंहपाल के पुत्र गम्भीरपाल के सुकेत राजा की सहायता से बुशैहर के विरुद्ध युद्ध किया। कुल्लू की ओर सतलुज से दाहिने तट से बुशैहर वालों को खदेड़ सतलुज नदी को सीमा बनाया।

निशुदनपाल

निशुदनपाल अगला राजा हुआ।

नरेन्द्रपाल

नरेन्द्रपाल के समय भंगाल के राजा ने कुल्लू पर आक्रमण किया और कुल्लू पर भंगाल के राजा का राज्य दस बर्ष तक रहा। भंगाल राजा कुल्लू से कर प्राप्त करता रहा।

सन्तोषपाल द्वितीय

नरेन्द्रपाल के पश्चात सन्तोषपाल द्वितीय ने कुल्लू पर राज्य किया यह भी भंगाल राजा को कर देता रहा।

नन्दपाल

नन्दपाल के समय में कांगड़ा राजा ने कुल्लू पर आक्रमण किया। मण्डी की सीमा से लगता कुल्लू क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। कुल्लू राजा से नजराना के रुप में घोड़े, चंवर, कस्तूरी इत्यादि लेकर सेना वापस लौट गई। कुल्लू राजा ने बार्षिक कर देना भी माना।

धातरीपाल

धातरीपाल भी कांगडा राजा को कर देता रहा।

इन्द्रपाल

इन्द्रपाल ने अपने आप को स्वतन्त्र राजा घोषित किया और कांगड़ा को कर देना बन्द किया। कांगड़ा राजा ने फिर सेना भेजी परन्तु इन्द्रपाल के अधीन कुल्लू सेना ने डट कर मुकाबला किया और कांगड़ा सेना को लौटने पर मजबूर कर दिया। इसके पश्चात क्रमबार ये राजा हुये:

महीचक्रपाल, बुधपाल—रत्नपाल—जयधरपाल तथा खरालपाल।

खरालपाल

इस राजा के समय में राजा सुकेत (मदन सेन) ने आक्रमण किया तथा बजौरा से सिऊसा (सीमा—सा) तक व्यास के दाहिने तट का क्षेत्र तथा रुपी घाटी का क्षेत्र जीत लिया। कुल्लू राजा के पास पार्वती तथा व्यास नदी के बीच का क्षेत्र ही रहा जिससे इस क्षेत्र का नाम राजा के नाम पर खराहल पड़ा। मदन सेन ने वापसी कर खोखन के पास मदन पुर किले का निर्माण किया था। यह घटना 1240 ई. के पश्चात हुई।

राणा भोसल

राजा सुकेत ने लग घाटी छोड़ बजौरा से सिमसा तक का क्षेत्र अपने बहनोई राणा भोसल को दे दिया। उसकी संघोर (नगर के सामने) में राजधानी थी। उसका आवास बड़ा गढ़ ढेक (बड़ाग्रां) में था। उसके पास बड़ागढ़ दुर्ग था जो बड़ा दृढ़ था। उसका टीटा मेहता बजीर ही सारा राज काज देखता था। राणा स्वयं मन्द बुद्धि था।

राजा का विवाह सूकेत की राजकुमारी रुपणी से हुआ था। उसका एक बेटा घूंघरु और बेटी गुडरी थी। टीटा मेहता अपनी बहिन का विवाह राणा

से करना चाहता था परन्तु रानी के होते यह सम्भव न था। बड़ाग्रां खेतों के लिए उन दिनों एक कूहल बनाई जा रही थी। जब कूहल का काम बाधायें आने से रुका, तो टीटा मेहता ने षड़यंत्र कर राणा को विश्वास दिला दिया कि रानी की बलि दिये बिना (कूहल) का निर्माण नहीं हो सकेगा। राणा की स्वीकृति से टीटा मेहता ने उसे जीवित ही कूहल के आरम्भ में दबा दिया। रानी की अभी तक यहां स्मारक के रुप में समाधि देखी जा सकती है।

इससे यह भी स्पष्ट होता है कि इस क्षेत्र में भी नर बलि प्रचलित थी। रानी के धर्मभाई कालू ने दोनों बच्चों को सारा वृतान्त सुनाने अपने मामा के पास सुकेत भेजा। सुकेत का राजा स्वयं सेना लेकर आया। उसने टीटा मेहता तथा राजा को कैद कर लिया। टीटा मेहता को चाबुकों से पीटा। उसके घावों में मिर्चें भरी गईं और उसके टुकड़े–टुकड़े कर दिये गये। राणा के तन पर फटे पुराने चीथड़े और गले में सूखी गोबर की माला डाल कर और ताजा गोबर मार–मार कर राज्य से निकाल दिया। इस घटना की पुष्टि लाहुल में गाये जाने वाले घूरे (लोकगीतों) से भी होती है।

दोनों बच्चों को सुकेत में रखा गया और बड़ागढ़ प्रशासन सुकेत के अधीन रहा। राजा पर्वत सैन जब सुकेत का राजा बना तो उसने सरवरी घाटी का क्षेत्र अपने कुल पुरोहित को किसी ब्रह्महत्या के निवारण तथा पश्चाताप स्वरुप दान में दे दिया। सुकेत बोली में ऐसे दान को "लाग" कहते हैं। जिससे यह क्षेत्र "लग" कहलाया। पुरोहितों के वंशजों ने काफी समय यहां राज्य किया और राज्य विस्तार किया। यह किसी समय बड़ा दृढ़ राज्य भी रहा जिसका विस्तार सिराज़ तक हो गया था।

खरालपाल के पश्चात इन राजाओं ने कुल्लू पर राज्य किया।

–**हंसपाल, अगस्तपाल, मदनपाल, बुधपाल, उर्धनपाल, कैलाशपाल/ केशय्प पाल।**

उर्धनपाल (1418–1428)

उर्धनपाल ने संध्या देवी का मन्दिर जगतसुख में 1428 ई. में बनवाया। उसने 1418 ई. में एक मोहरा हडिम्बा देवी (मनाली) को अर्पित किया। सन्ध्या देवी मन्दिर के द्वार पर महाराज उर्धनपाल का नाम लिखा है।

कैलाशपाल/केशयप पाल (1429–1450)

अन्तिम पाल प्रत्यय वाला राजा था। जिसने 1450 ई. तक राज्य किया। उसके समय भी व्यास के दाहिने किनारे पर सुकेत राजा का यथापूर्व अधिकार था। राजतिरंगिनी अनुसार काश्मीर नरेश जैन–उल–आवद्दीन ने गुग्गा देश उत्तरी पार्वती घाटी) से गुजर कर कलूत देश की राजधानी की ओर को

लूटा। ऐसा प्रतीत होता है कि कैलाशपाल काशमीर सेना से हारने के पश्चात कुल्लू छोड़ गया और वापस मायापूरी लौट गया। इसके पश्चात उसकी कोई जानकारी नहीं मिलतीं और अगले 50 वर्ष तक कुल्लू का अपना राजा न था। लद्दाख के इतिहास अनुसार 1440–1470 ई. के मध्य लद्दाख के राजा ने कुल्लू पर आक्रमण कर इसे जीता था। ऐसा भी कुछ विद्वानों का विचार था कि कैलाश पाल राणा और ठाकुरों के सामूहिक विद्रोह का सामना न कर सका और वह कुल्लू से पलायन करने पर मजबूर हो गया। वह हरिद्वार चला गया और 1500 ई. तक उसके उतराधिकारी भी वापस न लौट सके।

सिंह वंश के शासन से पूर्व कुल्लू की स्थिति

सिद्ध सिंह के आगमन से पूर्व कुल्लू कई भागों में विभाजित था। उतरी कुल्लू घाटी (मनाली तथा उसके निकट व्यास के दोनों किनारों के स्थान) झीणा राणा के अधीन थे। बजौरा के दक्षिणी पश्चिमी तथा दक्षिणी भाग तथा सिराज का क्षेत्र लग रियासत के अधीन थे। सिराज में सैंज नदी के दक्षिण तथा दक्षिण पूर्व से सतलुज तक का क्षेत्र सम्मिलित था। बजौरा और सिमसा (मनाली) के मध्य का क्षेत्र सुकेत के अधीन था। जिसकी राजधानी बड़ागढ़ (पतली कूल्ह के निकट) थी। सैंज घाटी के शेष भाग, पार्वती घाटी, व्यास के बाम तट के शेष भागों पर छोटी–छोटी ठाकुराईयां थीं। रोहतांग से रूमसु के मध्य ऊंचे क्षेत्रों पर पिती ठाकुरों का राज्य था। ये वही स्थान थे जो उनके व्यापारिक रास्तों के निकट थे। ये हाम्टा, बरनारा, दिरोत, दयाबंगी, गवारी तथा छाकी नाला के ऊपरी क्षेत्र थे। पिती ठाकुर फेटी रूहणी से राभपुर, तोश नाला (मणीकर्ण) होकर व्यापार के लिये जाते थे। शेष भाग में छोटे–छोटे क्षेत्रों पर राणाओं और ठाकुरों का शासन था। इनका शासन बड़ा कठोर था। ठाकुर और राणे आपस में लड़ते रहते थे। इनमें आपसी कोई तालमेल न था। लोग बाहरी शासकों, स्थानीय ठाकुरों और राणाओं से आतंकित थे। वे उन से छुटकारा पाना चाहते थे।

13. सिंह वंश

सिंह वंश के राजाओं की सूची

1.	सिद्धपाल / सिद्धसिंह	:	1500–1546
2.	भादरसिंह / बहादुर सिंह	:	1546–1569
3.	पर्वत सिंह	:	1569–1584
4.	प्रताप सिंह	:	1584–1618
5.	पृथी सिंह	:	1618–1635
6.	कल्याणसिंह	:	1635–1637
7.	जगत सिंह	:	1637–1662
8.	हरीसिंह	:	1662–1663
9.	विधिसिंह	:	1663–1672
10.	मान सिंह	:	1672–1717
11.	राज सिंह	:	1717–1735
12.	जय सिंह	:	1735–1741
13.	टेढ़ी सिंह	:	1741–1767
14.	प्रीतम सिंह	:	1767–1806
15.	विक्रम सिंह	:	1806–1816
16.	जीत सिंह	:	1816–1840
17.	रणवीर सिंह	:	1840–
18.	ठाकुर सिंह	:	1840–1852
19.	ज्ञान सिंह (राये)	:	1852–1870
20.	दिलीप सिंह (राये)	:	1870–1892
21.	मेघ सिंह (राये)	:	1892–1921
22.	भगवन्त सिंह (राये)	:	1921–1960
23.	महेन्द्र सिंह	:	1960–1989
24.	महेश्वर सिंह	:	1989–

14. सिंह वंश के राजा और घटनाऐं

राजा सिद्ध सिंह (1500 –1546 ई.)

इस राजा का पहला नाम सिद्ध पाल था। इसका जन्म मायापूरी में ही हुआ था। इसका पिता कैलाशपाल कुल्लू छोड़ कर चला गया था। वह पन्द्रहवीं शताब्दी के अन्तिम बर्षो में कुल्लू आया। सिद्ध पाल ने सभी परिस्थितियां अपने अनुकूल पाई। वह भेस बदल कर लोगों से सम्पर्क करता रहा तथा वह लोगों की श्रद्धा तथा विश्वास पाता रहा। राजा ने देवी हडिम्बा का आर्शीबाद प्राप्त किया जिसने भविष्यवाणी की "छोटा बेलंगा" न भिंयाऊं, दाड़ी दलाशनी न झाऊं "अर्थात रोहतांग से नीचे तथा दलाशनी से उळपर राजा का राज्य होगा। बेलंग रोहतांग की कुल्लू की ओर ढलानों का क्षेत्र कहलाता है। यह बात लोगों में उपख्यान के रुप में फैल गई। जिस कारण लोगों ने उसे पूरा सहयोग दिया। चचौहली के मेले के अवसर पर लोग बड़ी संख्या में इकट्ठे हुये थे। उन्होंने राजा को स्वीकारा और ठाकुरों के विरुद्ध संघर्ष छेड़ दिया। ठाकुर और उसके परिवार को मार दिया गया और सिद्ध पाल का सिंहासन आरोहन हुआ। देवी हडिम्बा को उस समय से कृतज्ञता के रुप में राज परिवार ने कुल देवी माना तथा सम्मान दिया।

सिद्धपाल से सिद्धसिंह तथा सिंह वंश का आरम्भ

सजला में राजा ने एक शेर को गाय पर आक्रमण करते हुये देखा। निहत्थे ही राजा शेर से भिड़ गया और उसे मार गिराया। इस घटना में सुरक्षित रहना राजा ने देव कृपा माना। कृतज्ञता के रुप में राजा ने स्थानीय देवता को चांदी का मोहरा चढ़ाया जो अभी मन्दिर में सूरक्षित है। मोहरे पर राजा का नाम खुदा है। इस घटना के पश्चात राजा ने अपने नाम के साथ पाल के स्थान पर सिंह प्रत्यय लगाया और राजा सिद्ध सिंह के नाम से जाना गया। उसके वंशजों ने भी यही प्रत्यय अपने नाम से जोड़ा। इसलिये वंश भी "सिंह वंश" कहलाया।

सिंह प्रत्यय की परम्परा

उन दिनों राजपूत राजाओं में अपने नाम के साथ सिंह जोड़ने की परम्परा चल पड़ी थी। यह कार्य राजस्थान से आरम्भ हुआ। पहाड़ी राजाओं ने भी इसका अनुसरण किया। चम्बा के राजा ने वर्मन के स्थान पर सिंह अपनाया। अन्य पहाड़ी राज्यों में भी इसका प्रचलन हो गया। इसलिये कुल्लू

भी इससे अछूता न रहा। परन्तु इस परिवर्तन को मान्यता देने के लिए शेर मारने का कथानक राजा से जोड़ दिया गया।

विजयें

सिद्ध सिंह बड़ा वीर चतुर तथा प्रतापी राजा हुआ। उसने कई लड़ाईयां लड़ीं। राणा और ठाकुरों को हराया। कुछ लड़ाईयां तो उसने अपनी सूझबूझ और चतुराई से ही जीतीं। सर्वप्रथम उसने झीणा राणा की ओर ध्यान दिया। झीणा राणा का राज्य जगतसुख से रोहतांग तक व्यास के दोनों ओर था। वह फंग राणा का पुत्र था। उसका गर्मियों में मंगनकोट तथा सर्दियों में मनाली गढ़ में आवास होता था। वह बड़ा वीर, सुन्दर, न्यायशील तथा सर्वप्रिय था। सिद्ध सिंह ने उस से सीधे उलझने के स्थान पर नीति से राज्य प्राप्त करने की सोची। उसे अधिक प्रतीक्षा न करनी पड़ी। राणा की शनाघ गांव के तुलूस मुछयाणी साईस से अनबन हो गई। जिसने सिद्ध सिंह के उकसाने पर घात लगाकर देवदार के वृक्षों के पीछे से तीर चलाया। उस समय राणा वशिष्ठ गांव के नीचे कमाणु तथा रामवन के खेतों में धान की रुपाई देख रहा था। तीर राणा की रान पर लगा और वह इसी अवस्था में घोड़ों पर सवार हो कर मंगनकोट दुर्ग की ओर भागा। परन्तु ज्येष्ठ मास की धूप और घायल होने के कारण वह पानी पीने के लिए कूहल डूहग (बराकोट) के चश्में पर रुका। पानी पीते ही उसकी मृत्यु हो गई। घोड़ा जब बिना राजा के मंगनकोट पहुंचा तो हत्या का पता चला। दुर्ग की सभी स्त्रियों ने बड़ी रानी के साथ जौहर किया। केवल छोटी रानी को गर्भवती होने के कारण बचा कर सुरक्षित स्थान पर भेज दिया गया।

समय आने पर रानी ने एक लड़के को जन्म दिया। लड़का बड़ा होकर साहसी और वीर बना। एक बार सिद्ध सिंह हडिम्बा मन्दिर में भैंसे की बलि देने जा रहा था कि भैंसा भाग निकला। झीणा राणा के लड़के ने उसे जा पकड़ा। राजा उसकी वीरता देख और परिचय पा बड़ा प्रसन्न हुआ। उसे अलेऊ में जागीर दी। उसने नवांणी वंश की नींव रखी जिसके वंशज अभी भी उसी गांव में रहते हैं। मुछयाणी साईस को भी कमाणु तथा रामवन के रोपे राजा ने ईनाम में दिये जो अभी भी उसके वंशजों के पास है। इसके पश्चात राजा ने रोहतांग तक के क्षेत्र पर अपना अधिकार कर लिया और झीणा राणा का क्षेत्र भी अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया।

संघोर तथा बड़ा गढ़ पर विजय

इसके पश्चात सिद्ध सिंह ने संघोर तथा बड़ागढ़ की ओर ध्यान दिया जहां इस समय सुकेत का अधिकार था तथा सुकेत की सेनायें सदैव

सुरक्षा के लिये वहां रहती थीं। सशक्त सुकेत सेनाओं से सीधे टकराना सिद्ध सिंह के लिये सम्भव न था। अतः यहां भी उसने कूटनीति का सहारा लिया। बड़ा गढ़ में सरजू बांढी एक निःसन्तान स्त्री रहती थी। राजा ने उसे रानी बनाने और भारी ईनाम देकर अपने साथ मिलाया। उसने भेद दिया कि दुर्ग की सारी सेना दो प्रविष्टे ज्येष्ठ के पोली गांव (कोठी हुरंग) में "कापू" मेला देखने जाती है। जब सेना गढ़ छोड़ देगी तो वह लाल कपड़ा हिला कर इसका संकेत देगी। जिसे देखते ही गढ़ पर आक्रमण करने से गढ़ जीता जा सकता है। बड़ागढ़ व्यास के दाहिने किनारे नगर के सामने है। राजा ने निश्चित दिन पर अपनी सेनायें मोर डुघ में छुपा दीं। इशारा देखने के लिए एक व्यक्ति गांव धलोगी (कोठी हुरंग) में बैठा था। संकेत मिलते ही सिद्ध सिंह की सेनाओं ने दुर्ग को चारों ओर से घेर लिया। सरजू ने ही द्वार खोला और सिद्ध सिंह का किले पर अधिकार हो गया। इसके बाद संघोर राजधानी पर भी उसने अधिकार कर लिया। सुकेत सेना के हाथ से दुर्ग जाने पर सारी स्थिति बदल गई थी। जिसे सब ने मिल कर भगा दिया।

राजा ने जब स्वयं किले में प्रवेश किया तो सर्वप्रथम सरजू बांढी को एक किलटे में डाल ढलान से नीचे लूढ़का देने की आज्ञा दी। जिससे उसकी मृत्यु हो गई। इस विजय से रोहतांग से फोजल तथा राऊगी नाला तक का क्षेत्र उसके अधीन आ गया।

ठाकुरों पर विजय

अब उसने काईस, गाहर तथा बन्दल के ठाकुरों की ओर ध्यान दिया। इन ठाकुरों पर विजय की स्मृति यहां प्रचलित एक दोहे में विद्यमान है:—

"कौलिये—कौलिये, गाहरू बौन्दलू मुऐ जौलिये, घराकडू
मुये आपे टीटा मेहता मुआ, रानी मारने रे पापे"

(अर्थात गाहर तथा बन्दल के ठाकुर आपसी ईर्षा से मरे। घरकड़ के राणा ने अपनी मौत आप बुलाई। टीटा मेहता रानी मारने के पाप से मरा)।

ये सभी ठाकुर और राणे सुकेत के अधीन थे। सुकेती सेना के चले जाने से इन्हें जीतना आसान हो गया। सर्वप्रथम नन्द सूरजन कायस ठाकुर ने सिद्ध सिंह की अधीनता स्वीकार की। गाहर तथा बन्दल के ठाकुर आपस में ईर्षा करते थे। इसलिये लड़ते रहते थे। इनकी ठकुराईयों की सीमाएं आपस में मिलती थीं। दाड़थौली, ग्वाला थान, कुम्हारनाली, काठी री जौण, भौती री जौण तथा भाण्ड पत्थर ये दोनों इसी सीमा को बनाये रखने के लिये आपस में प्रायः झड़प करते रहते थे। दोनों को राजा सिद्ध सिंह ने बारी—बारी आसानी से जीता। बन्दल का ठाकुर बोगी, गांव से ऊपर जंगल के मध्य बड़ोगी में

रहता था। गढ़ के अवशेष अभी तक विद्यमान है। युद्ध में बोगी ठाकुर मारा गया। उसके वंशज बन्दल तथा देनिधार में रहते थे। घराकड़ के पास बासी राणा का गढ़ था। उसे व्यर्थ में हर किसी से छेड़—छाड़ करने की आदत थी।

एक दिन सिद्ध सिंह नगर की ओर पालकी में जा रहा था कि बासी राणा ने राजा की पालकी पर तीर छोड़ा और रस्सी काट दी। राजा गिरते—गिरते बचा। इससे राजा को क्रोध आया। नगर पहुंचते ही उसने राणा का सिर लाने के लिए अपने आदमी भेजे। बासी राणा के इतने लम्बे बाल थे कि राणा उळपर मंजिल के बरामदे में लेटता था और निचली मंजिल में उसके बालों को उसके दास संवारते थे। राजा के आदमी उससे सीधे लड़ने का साहस न कर सके। ज्योंहि उसने अपने बाल बरामदे से नीचे लटकाये कि राजा के आदमियों ने उन्हें पकड़ लिया और एक ने जाकर सिर काट दिया। वासी राणा को मारने वाले जगरोटू ठाकुर थे। जो न्योली के निकट रहने वाली रानी के नौकर थे। वे यहां के क्षेत्र से भली प्रकार परिचित थे। वे राजा के विश्वास पात्र थे। परन्तु राजा के पास शर्तों पर नौकरी करते थे कि उन्हें भी पंक्ति में बैठकर सब के साथ भोजन मिले ओर भोजन के लिये अन्य नौकरों की तरह लोहे के बर्तन न दिये जाये। राजा ने यह शर्तें मानी हुई थी। जब वे वासी राणा का सिर नगर लाये तो राजा स्नान कर रहा था। राजा के गले में केवल एक बहुमूल्य हार था। जिसे उसने उसी समय गले से उतारकर न्हें ईनाम के रूप में दिया।

इन सब ठाकुरों के क्षेत्र सिद्ध सिंह ने अपने अधीन किये। सिद्ध सिंह ने गाहर के ठाकुर की बेटी से अपना विवाह किया जिससे बहादुर सिंह उत्पन्न हुआ।

पित्ती ठाकुरों पर विजय

तिब्बत के सामन्त जिन्हें स्थानीय लोग पित्ती ठाकुर कहते थे, पश्चिम तिब्बत से थे। ये स्पिति के रास्ते आने से पिती ठाकुर कहलाये। 7000 से 8000 फुट की ऊंचाईयों पर रहते थे, क्योंकि इस से नीचे की जलवायु उन के लिए अनुकूल न थी। उनका तिब्बत के लिए व्यापारिक मार्ग भी इन ऊंचाईयों से गुजरता था, जो फूटी (फेटी) रुहणि (लाहुल) से किन्नौर (बुशैहर)को जोड़ता है। यह रास्ता पार्वती घाटी से पुलगा होकर जाता है।

इस रास्ते से किन्नौर के लोग फेटी रुहणि पहुंचते थे और अनाज गुड़ इत्यादि के बदले ऊन, सुहागा, नमक इत्यादि तिब्बतियों से प्राप्त करते थे। वे भेड़ें भी उसी स्थान पर मूंडते थे। सामान भी भेड़ों द्वारा ढोया जाता था। यह रास्ता सुरक्षित था। न लूटे जाने का डर था और न ही कर के लिये जगात खाने थे। इसलिये राजा के अधिकारियों द्वारा सताये जाने का डर भी न था।

इस मार्ग को सुरक्षित रखने के लिये भी पिती ठाकुर मार्ग के साथ–साथ बस गये थे। वहां उन्होंने किले बनाये। सम्भवतः ऊंचे स्थानों के तभी इस प्रकार के तिब्बती नाम हैं जैसे :- भटरंग, पिंगरंग, तुंग, हुरंग, सोलंग, कुलंग, शंगुच जोत, फांगची जोत, पेखरंग तथा पार्वती के गड़सा घाटी में पिंगरंग, भाटरंग, दारुरंग, थावरंग, ठोणेरंग, जांगरंग आदि–आदि। पिती ठाकुर का मुख्य हाम्टा जोत के दुर्ग में रहता था। इसके अधीन अन्य पिती ठाकुर वारनार, दिरोत, दयावंगी, गवारी तथा छाकी नाल के ऊपरी क्षेत्र में रहते थे। वे बड़े क्रूर थे तथा नर बलि के लिये कुप्रसिद्ध थे। कहते हैं कि वे स्त्रियों का दूध पीते थे और इसलिये नवजात शिशु को मार दिया करते थे। सिद्ध सिंह ने कुल्लू क्षेत्र को इन पिती ठाकुरों, से भी मुक्त कराया। लद्दाख के इतिहास अनुसार लद्दाख के राजा इसे वांग नामगयाल ने भी कुल्लू पर राजा सिद्ध सिंह के समय आक्रमण किया था।

नगर दुर्ग का निर्माण

नगर दुर्ग का निर्माण राजा सिद्ध सिंह ने करवाया था। इसमें पत्थर और लकड़ी का प्रयोग किया गया है। पत्थर गढ़ ढेक (बड़ाग्रां) तथा दुर्ग बड़ागढ़ से लाये गये हैं जिन्हें लाने के लिये इतने अधिक व्यक्ति लगाये गये कि उनकी बड़ाग्रां से नगर तक एक लम्बी पंक्ति बना दी गई। पत्थर हाथों हाथ पहुंचा दिये गये। यह दुर्ग तीन मंजिल का है। इसमें भूमि के अन्दर भी कमरे है। यह पहाड़ी शैली का दुर्ग है। सुरक्षा की दृष्टि से भी स्थान महत्वशाली है। यहां से शत्रु दूर से ही दिखाई देता था। पश्चिम की ओर से इस पर आक्रमण कठिन था। इनमें बड़े–बड़े शहतीर लगाये गये हैं। शहतीरों के सिरों पर पशुओं के सिरों की आकृतियां बनी हुई हैं। नगर दुर्ग का सौंदर्यकर्ण किया गया। नगर दुर्ग दो फुट नीचे धंस गया था। एक करोड़ से मुरंम्मत की गई।

1905 ई. के भूंचाल में इसे तनिक भी क्षति नहीं पहुंची। इसे 400 रुपये में कर्नल "है" उपायुक्त ने राजा ज्ञान सिंह से क्रय किया था। जिसने इसमें चिमनी और अंगीठियां बनाई और सीढ़ियों और खिड़कियों में परिवर्तन किया। इसे सरकार को बेचा गया और सरकार ने इसमें कार्यालय बनाया। अब इसकी छत में भी स्लेट के स्थान पर टीन लगा दिया गया। 70 साल पहले इसे विश्राम गृह में बदल दिया गया। 1978 ई. से इसे होटल बना दिया गया। यह दुर्ग राजाओं के समय ग्रीष्म कालीन राजभवन भी था। पहाड़ी शैली का दुर्ग है। जिसमें केवल पत्थर और लकड़ी का प्रयोग किया गया हैं।

राजा सिद्ध सिंह का व्यक्तित्व तथा मृत्यु

सिद्ध सिंह अद्भुत व्यक्तित्व का स्वामी था। वह सात फुट लम्बा, चौड़े सीने, बड़ी मूछौं तथा आकर्षक चेहरे वाला था। उसे गहनों का शौक था। उसके कानों में सदा स्वर्ण कुण्डल तथा गले में मोतियों की माला होती थी। सिर पर पगड़ी तथा शरीर पर लम्बा चोगा धारण करता था। वह वीर योद्धा तलवार का धनी था परन्तु राजनीति में भी बड़ा निपुण था। वह इतना शक्तिशाली था कि एक हाथ से नारियल दबाकर तोड़ सकता था। वह अंगुली और अंगूठे के मध्य सिक्का रख कर मोड़ सकता था। नाम का अनुरूप उसे कई सिद्धियां प्राप्त थीं। वह तांत्रिक विद्या में प्रवीण था। तांत्रिक क्रियाओं के लिये वह नगर दुर्ग के तहखाने का प्रयोग करता था।

राजा सिद्ध सिंह की मृत्यु 1546 ई. में हुई। इसने 46 बर्ष राज्य किया।

राजा बहादुर सिंह (1546–1569 ई.)

बहादुर सिंह ने 1546 ई. में राज्य की बागडोर संभाली। उसने भी राणों और ठाकुरों के विरुद्ध संघर्ष जारी रखा।

पार्वती घाटी के ठाकुरों द्वारा अधीनता स्वीकारना

उस समय पार्वती घाटी के राणों और ठाकुरों ने सुकेत की अधीनता स्वीकार की हुई थी। वे जब अपना कर और भेंट लेकर सुकेत गये तो सुकेत के राजा अर्जुन सेन ने उनसे अच्छा व्यवहार न किया। मिलने के लिये कई दिन प्रतीक्षा कराई तथा उन्हें "कुल्लू के कौए" कह कर सम्बोधन किया। इस तिरस्कार से वे इतने आहत हुये कि सीधे बहादुर सिंह के पास चले गये। जो उस समय घौड़दौड़ में था। राजा ने उन्हें बड़ा आदर दिया। उन्होंने बहादुर सिंह की अधीनता स्वीकार कर ली और उनका क्षेत्र राजा के अधीन बड़ी आसानी से आ गया।

विजयें

हरकण्ढी, कनावर, चौंग, छियोर और कोटकण्ढी

सर्वप्रथम राजा बहादुर सिंह ने हरकण्ढी पर आक्रमण किया और वहां के ठाकुर को बन्दी बना लिया। उसे निर्वाह के लिये जागीर देकर सारा क्षेत्र अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। इसके पश्चात कनाउर के ठाकुर से युद्ध हुआ। ठाकुर मारा गया और उसके क्षेत्र को भी राज्य में सम्मिलित कर लिया गया। फिर चौंग कोठी के ठाकुर को जीता। उसकी सहायता से कोठी कोटकण्ढी के ठाकुर पर आक्रमण किया। उसे हराया और कुछ जागीर देकर उनके क्षेत्र को राज्य में मिला लिया। छियोंर के राणा ने स्वयं ही राजा बहादुर

सिंह की अधीनता स्वीकार कर ली। उसे भी जागीर देकर उसके क्षेत्र को राज्य में मिला लिया। छियोंर के दुर्ग के अवशेष अभी तक हैं तथा उसके वंशज भी गांव में अभी तक रहते हैं।

कोटकण्ढी में ही वोशा का ठाकुर था जिसने अपनी स्वतन्त्रता बनाये रखने के लिये राजा से युद्ध किया। परन्तु हार गया और भाग गया। परन्तु तीन दिन के पश्चात किसी स्थान में छुपा हुआ पकड़ा गया। जिया गांव में राजा के सामने प्रस्तुत किया गया। राजा ने उसके क्षेत्र को राज्य में मिला लिया तथा उसे जागीर देकर छोड़ दिया। वापस घर पहुंच कर उसने अपनी स्वतन्त्रता की घोषणा कर दी। उसने राज आज्ञा पालन से भी इन्कार किया। राजा के सैनिकों ने उसे फिर बन्दी बनाया और राजा के सम्मुख लाया। उसने क्षमा याचना की और फिर छोड़ दिया गया। घर पहुंचने पर उसने फिर विद्रोह किया। इस बार राजा ने उसे पकड़ कर बन्दीगृह में डाल दिया और उसके परिवार को भी जागीर किसी अन्य स्थान में दी। इस प्रकार हरकण्ढी कोठी इसके अधीन आ गई। अभी तक परम्परा निभाते हुये राज परिवार के सदस्य इस गांव में नहीं जाते है।

सैंज घाटी

भलाण कोठी पर विजय

भलाण कोठी में सर्वप्रथम "तंदी" के ठाकुर से युद्ध हुआ जिसके पास दो दुर्ग थे– जमसेढ़ तथा धर्मपुर। ठाकुर युद्ध में मारा गया। जमसेढ़ (जमेर) के दुर्ग पर राजा ने अपनी सेनायें रखीं और धर्मपुर का दुर्ग गिरा दिया गया।

शैंशर विजय

सैंज घाटी में सर्वप्रथम शैंशर कोठी के ठाकुर "हुल" पर आक्रमण किया गया। ठाकुर के कुछ सम्बन्धी तलहार में रहते थे। राजा ने उन्हें जागीर देने का लालच देकर अपने साथ मिलाया। उन्होंने राजा को परामर्श दिया कि वह शैंशर पर फांगची जोत लांघ कर आक्रमण करे। शैंशर के ठाकुर हुल ने भलाण की चढ़ाई के सिरे पर अपनी सेना नियुक्त कर रखी थी।

वहां रास्ता तंग था। इस ओर से थोड़े से लोग भी राजा की सेना को परास्त कर सकते थे। फांगची जोत का रास्ता आसान तथा बड़ा था। न उस ओर ठाकुर का ध्यान था ओर न ही शत्रु कोई लाभ वाली स्थिति वहां प्राप्त कर सकता था। राजा ने वैसा ही किया। ठाकुर के सम्बन्धी भी "रूआड़" के पास राजा की सेना से आ मिले। यह स्थान "मैली डुआर" के नाम से प्रसिद्ध

है। ठाकुर मारा गया और सारा क्षेत्र राजा के अधीन आ गया। राजा ने वचनानुसार ठाकुर के सम्बन्धियों को जागीर दी।

शांघढ़ विजय

शांघढ़ तीन ठाकुरों का राज्य था। तीनों ने राजा की अधीनता बिना लड़े ही स्वीकार कर ली। उनको जागीरें देकर सारा क्षेत्र अपने राज्य में सम्मिलित कर लिया। वहां एक घर बनाया। उसे एक जमींदार को दान कर दिया। बाद में यह घर आग से जल गया।

कोठी वोंगा तथा कोठी बनोगी विजय

इन कोठियों पर बसाहरी तथा मनाहरी ठाकुरों का राज्य था। दोनों ने मिल कर राजा की सेना का सामना किया। युद्ध में मनाहरी ठाकुर मारा गया और बसाहरी ठाकुर ने राजा की अधीनता स्वीकार कर ली। बनोगी में ठाकुर का थाना था जहां लोगों को बन्दी बना कर रखा जाता था तथा सजायें दी जाती थी। थाना गिरा दिया गया। यह स्थान अब भी थाना ही कहलाता है। दोनों ठाकुरों के परिवारों को राजा ने जागीरें दी तथा उनके क्षेत्रों को अपने अधीन ले लिया मनाहरी दशाड़ में रहता था और वसाहरी का आवास वोंगा कोठी के तंदी के स्थान पर था।

बन्जार क्षेत्र

नोहाण्डा, सारची तथा बरामगढ़ विजय

अब राजा की सेनाओं ने सिरीकोट पार कर नोहाण्डा कोठी पर आक्रमण किया। नोहाण्डा का ठाकुर युद्ध में मारा गया। राजा ने यह क्षेत्र भी अपने शासन में ले लिया।

इसके पशचात राजा ने तुंग कोठी को जीता। सारची के ठाकुर ने स्वयं ही राजा की अधीनता स्वीकार कर ली और अपने लिये जागीर प्राप्त की। बरामगढ़ का ठाकुर राजा का अगला निशाना बना। उसने अपने को किले में बन्द कर युद्ध करना चाहा। राजा की सेनाओं ने उसे किले में ही घेर रखा। जिस कारण वह स्वयं ही बन्दी बन गया। उसे शस्त्र डालने के लिये बाधित होना पड़ा।

चैहणी कोठी विजय

यहां पर ढाढ ठाकुर का राज्य था। कोठी का नाम भी उसने अपनी पत्नी चैहणी के नाम पर रखा था। उसके पास अपने लिये ढाढिया कोट नौ मंजिल का था। जिसमें वह जा छुपता था। और बन्दुकों से गोला—बारी करता

था या तीर चलाता था। यह कोट अब भी पांच मंजिल का मौजूद है। ढाल ठाकुर युद्ध में मारा गया। चैहणी में अन्य ठाकुर भी थे जो बारी–बारी युद्ध में मारे गये। कोठी चैहणी पर भी राजा बहादुर सिंह का अधिकार हो गया।

मण्डी सेना से मुक्ति

मण्डी सेना का भीतरी सिराज के पश्चिमी भाग पर अधिकार था। नेगी दामोदर के अधीन कुल्लू सैना ने मण्डी सेना को गाडा–गुशैणी तक पीछे धकेल दिया। अब भी मण्डी सीमा वहीं से आरम्भ होती है।

विजयों का रहस्य

बहादुर सिंह के जीवन का बड़ा भाग युद्धों में बीता परन्तु वह स्वयं कभी युद्ध क्षेत्र में नहीं गया। उसकी सफलता के पीछे दो सेना नायक "ठाकुर हठी तथा ढालसिंह" थे।

सेना नायक हठी

सेना नायक हठी धल्यार (कोठी भलाण) का रहने वाला था। धल्यार राइला गांव के पास है।

हठी ने राजा के लिये मनीमास, कोटकण्डी, भलाण, बनोगी तथा पार्वती घाटी विजय की। कोटकण्डी के ठाकुर को उसी ने बन्दी बनाया था। सिराज की विजय का कारण भी वही था। उसने तुंग, चैहणी तथा नुहाण्डा पर विजय पाई थी। तुंग का नाम बदल कर उसी ने बहादुर पुर रखा था। तुंग के दुर्ग का निर्माण भी उसी ने कराया था। बनोगी की जीत पर उसने जीत के समाचार के साथ राजा को बधाई स्वरुप जब "जूब" (द्रव) प्रस्तुत की तो राजा ने उसे प्रसन्न हो कर अपना सोने का कंगन ईनाम में दिया था। राजा ने उसे धल्यारा में 72 खार तथा शासन में 360 खार भूमि ईनाम में दी और उस क्षेत्र के हाली उसे दास रुप में दिये। उसे अपना मन्त्री भी बनाया। इस बारे पत्रक जी. सी. हावेल उपायुक्त कुल्लू के पास था। उसने दो दुर्ग सात–सात मंजिल के बनवाये जो अभी तक सुरक्षित हैं।

सेना नायक ढाल सिंह

ढाल सिंह राजा का छोटा भाई था। उसकी सेनाओं से प्रसन्न हो राजा ने कोट आगली शाड़ का नाम बदल कर ढालपूर रखा। यहीं अब कुल्लू के जिला कार्यालय स्थित है। ढाल सिंह की देख रेख में सेना का प्रबन्ध था। राजा की अनुपस्थिति में सेना का संचालन भी यही करता था। इनका एक सहायक दामोदर नेगी था जिस ने कई युद्धों में बड़ी वीरता दिखाई थी।

राजा चम्बा से वैवाहिक सम्बन्ध

बहादुर सिंह की तीन पुत्रियों का विवाह चम्बा के राजा गणेश वर्मन के पुत्र प्रताप सिंह के साथ हुआ। प्रताप सिंह सिंहासन का उतराधिकारी था। इस सम्बन्ध के बनाने में रामपति राजगुरु चम्बा ने महत्त्वशाली भूमिका निभाई जिसके आभार स्वरुप राजा बहादुर सिंह ने उसे 1559 ई. में एक ताम्र पत्र द्वारा हाट के पास, रुपा रेड़ी नाला (बजौरा) तथा व्यास के संगम पर भूमि उपहार में दी।

देवताओं की मुआफियां

राजा बहादुर सिंह ने अपने राज्य में देवताओं की पूजा अर्चना, मन्दिर निर्माण तथा मुरम्मत, उत्सवों, मेलों, यात्राओं तथा बाजा आदि के व्यय के लिये मुआफियां दी। मुआफियां देवता के मोहरों के तोल तथा उनके चमत्कारों के आधार पर दिये। तथा सभी मुआफियों के पट्टे जारी किये जो अभी भी देवताओं के पास है। कहते हैं कि पीणी की भागा सिद्धा के गूर ने परीक्षा के समय लोहे के गोल दण्ड चक्र को झटके से सीधा कर दिया था। कमरु नाग के मोहरे तोलते तुला ही टूट गई थी। सृष्टि नारायण के वारे में कहावत है कि **"नौ तोले रा सोऊरू बरसाऊ राजे रा पाजी बेढ़े पुजाऊ"** अर्थात नौ तोले के ओले बरसाये और राज का गुम बाज को राज भवन पहुंचाया। बुढ़ा नारायण ने आटे के बकरे में जान डालकर घास खिलाई तथा मुआफी पाई।

भवन निर्माण

ढुंगरी मन्दिर का निर्माण

बहादुर सिंह ने इसे 1553 ई. में बनवाया। यह 80 फुट ऊंचा मेरु शैली का मन्दिर है जिसमें चार छते हैं। यह लकड़ी पर खुदाई बारे भी प्रसिद्ध है। इसके प्रांगन में 1000 बर्ष पुराने देवदार के वृक्ष हैं। यह राज कुल देवी हिडिम्बा का मन्दिर है। इसमें दो दुर्गा की मूर्तियां स्थापित हैं।

गाहर का राजभवन

गाहर का ठाकुर बहादुर सिंह का मामा था। राजा वहां जाया करता था। ठाकुर ने बहादुर सिंह के लिए विशेष आवास पारली बेहढ़ में बनवाया था। आवास के अभी तक अवशेष विद्यमान हैं।

मकराहड़ का राजभवन

सैंज क्षेत्र के विजय अभियान के समय ही राजा बहादुर सिंह ने मकराहड़ (हुरला) के राजभवन बनवाये। यह स्थान एक ओर अपने सैनिक

अधिकारियों से सम्पर्क रखने के लिए निकट था। दूसरी ओर यहां से नगर राजधानी के अधिकारियों पर भी पकड़ रखी जा सकती थी और प्रशासन चलाया जा सकता था। इसके आगे सिराज पर सैनिक कार्यवाही अभी भी की जानी थी। अतः मकराहड़ आवास एक आवश्यकता थी।

मृत्यु

बहादुर सिंह की मृत्यु क्षय रोग से 1569 ई. में हुई। उसने 23 वर्ष राज्य किया।

मुगल शासन काल

इस समय तक मुगल साम्राज्य अपनी पराकाष्ठा पर था। हिमाचल में इस समय ब्यालीस रियासतें थीं। जिनके शासक राजा, राणा और ठाकुर थे। ये मुगलों ने 14 रियासतें जालन्धर दोआबा के गवर्नर के तथा शेष अठाईस सरहिन्द के गवर्नर के अधीन रखी थीं। कुल्लू दोआबा के सूबेदार के अधीन था। सभी पहाड़ी शासक वार्षिक कर देते थे और दरबार से मान प्राप्त करते थे। सूबेदार इन राजाओं के आपसी झगड़ों में भी हस्तक्षेप करते थे। उनके निर्णय प्रायः इन्हें मानने पड़ते थे। यह स्थिति अठाहरवीं शताब्दी तक रही।

राजा प्रताप सिंह (1569–1584 ई.)

यह राजा अकबर का समय कालीन था। इसके बारे में अधिक जानाकरी नहीं मिलती। कुल्लू का राजा भी मुगलों को कर देता था। जमलू देवता के भण्डार से दो स्वर्ण मुद्रायें कर के रुप में प्राप्त करने का कथानक इस बात की पुष्टि करता है। अकबर की जमलू देवता के मन्दिर में मूरत की उपस्थिति तथा जिस प्रकार उस मूरत को फाल्गुन मेले में सम्मान दिया जाता है से इस धारणा को बल मिलता है कि यह भू—भाग मुगलों के अधीन था। सम्भवतः तभी प्रताप सिंह ने अपने राज्य विस्तार का प्रयास नहीं किया और शान्त जीवन बिताया। वह मुगलों को इस पहाड़ी क्षेत्र में हस्तक्षेप का अवसर नहीं देना चाहता होगा। उसने जिया में अपना आवास भी बनवाया। परन्तु अब जया में उसका कोई अवशेष बाकी नहीं है। मघर मेला मलाणा में अकबर की मूरत निकाली जाती है। मूरत की पूजा की जाती है। बलि दी जाती है तथा सलाम सलाम कहा जाता है। बलि में कलेजा निकाला जाता है। जिसे हलाला कहते हैं। सम्भवतः परम्परा उस समय की परिस्थितियों के अनुसार डाली गई होगी।

जमलू से सम्बन्धित कथानक इस प्रकार है:— जमलू ने कभी अपने उळपर किसी की सता को नहीं स्वीकारा। उसके भण्डार से दो स्वर्ण मुद्रायें सम्राट

अकबर द्वारा कर के रुप में लिये जाने से देव प्रकोप फैल गया। देव प्रतिनिधि (गूर) ने रोग मुक्ति के लिये मुद्राओं की वापसी चाही। राजा ने सम्राट अकबर से प्रार्थना की। सम्राट ने देव शक्ति की परीक्षा चाही। देव चमत्कार से दिल्ली में बर्फ पड़ी जो अनहोनी बात थी। सम्राट अकबर देव शक्ति को मान गये। उसने मुद्राओं के साथ अपनी उपस्थिति का प्रतीक अपनी मूरत भेजी। मूरत सोने की है।

राजा पर्वत सिंह (1584–1618 ई.)

यह भी सम्राट अकबर का समकालीन था। उसके राज्य के समय में कोई उल्लेखनीय घटना न हुई। राजा मुगल सम्राट को कर देता था। उसने 34 बर्ष राज्य किया। फ्रेंक की 128 सं प्लेट पर लिखे अनुसार पर्वत सिंह का सुन्दर महल मकड़सा में था। उसका लाहुल पर अधिकार था।

राजा पृथी सिंह (1618–1635 ई.)

राजा पृथी सिंह जहांगीर का समकालीन था। मुगलों का शासन अति दृढ़ था। इसलिये इस राजा ने भी मुगलों को कर देना जारी रखा। इस राजा के समय की घटनाओं की जानकारी नहीं मिलती। इसने 17 बर्ष राज्य किया। फ्रेंक के अनुसार इस राजा के समय लाहुल का राज्य उसके हाथ से निकल गया।

राजा कल्याण सिंह (1635 –1637 ई.)

1635 ई. में जब पृथी सिंह की मृत्यु हुई तो उसका बेटा प्रताप सिंह बड़ा छोटा था। अत: भाई मान सिंह सिंहासन पर बैठा। उसने दो बर्षों तक राज्य किया। इसके पश्चात प्रताप सिंह ने जनता की सहायता से सिंहासन पर अधिकार कर लिया। कुछ लेखकों ने कल्याण सिंह के स्थान पर मान सिंह लिखा है। उपरोक्त चारों राजाओं के समय सीमान्त झगड़ों तथा युद्धों की अनुपस्थिति रही। इस भू–भाग के सभी पहाड़ी राजा मुगलो को हस्तक्षेप का अवसर नहीं देना चाहते थे। मुगल यहां से नियमित कर प्राप्त करते रहे। परन्तु उन्होंने राजाओं को आन्तरिक स्वतन्त्रता दे रखी थी। राजा को सिंहासन आरोहन के समय मुगल सम्राट की ओर से एक सनद और एक खिलत मिलती थी।

राजा जगत सिंह (1637 –1662 ई.)

राजा जगत सिंह 1637 ई. में सिंहासन पर बैठा। वह बड़ा प्रतापी राजा था। उसके समय में राज्य सुदृढ़ और विस्तृत हुआ। यह मुगल सम्राट शाहजहां का समकालीन था। राजभवन मकराहड़ में था।

विजयें

"लग" घाटी के राजा जोग चन्द ने अपने राज्य को बड़ा सुदृढ़ कर लिया था। उसने इसका विस्तार सिराज, चुहार घाटी तथा ऊहल नदी की ढलानों तक कर लिया था। वह कुल्लू तथा मण्डी दोनों के लिये खतरा बना हुआ था। अकेले उसे परास्त करना दोनों राजाओं के लिये कठिन था। अतः कुल्लू तथा मण्डी राजाओं ने इकट्ठे "लग" राज्य पर आक्रमण किया। मण्डी का उस समय राजा सूरजसैन था। जगत सिंह ने बाहरी सिराज में शोझा तथा जलोड़ी कोठियां, भीतरी सिराज में तुंग, गोपालपुर, पलाइच, फतहपुर, तिलोकपुर तथा शिकारी के क्षेत्र जीते। इसके पश्चात वैरकोट, गढ़ चुल्हा, मदनपुर, हाथीपुर, सरगपुर, देवगढ़, हैरतपुर, अमरपुर तारापुर आदि बारह गांव जीते। ये सभी गांव चुहार घाटी में हैं।

मण्डी राजा ने चौहार घाटी के ही सनोर, बदरपुर, बरसैला तथा बदर तथा मण्डी सिराज के क्षेत्र जीते।

शोझागढ़ तथा सारीगढ़ विजय

दिल्ली सम्राट शाहजहां के बड़े बेटे दारा शिकोह का कर्मचारी सैयद इब्राहीम पहाड़ी रियासतों का चकलादार था। उसने कुल्लू क्षेत्र सैयद मुस्तफा के अधिकार में दे दिया था। राजा जोग चन्द के पौत्र का लालन पालन सैयद मुस्तफा के अधीन हो रहा था। जैसे ही 1657 ई. में शाहजहां के पुत्रों में सिंहासन पाने के लिये युद्ध आरम्भ हुआ। सैयद इब्राहीम तथा सैयद मुस्तफा को वापस जाना पड़ा। उनके जाते ही राजा जगत सिंह ने डुघीलग राजा जोग चन्द की राजधानी पर आक्रमण कर दिया। इस आक्रमण से जोग चन्द्र हैरान हो गया। उसने सेना का सामना किया और बहादुरी से लड़ता हुआ पातक स्थान पर जो छुरला और भालठा के मध्य है मारा गया। भागा सिद्ध देवी डुघीलग इसकी पुष्टि अपनी भारथा में करती है। वर्तमान स्कूल भवन के स्थान पर जोगचन्द के राजभवन थे। अपने साथ कुछ सेना लेकर स्वयं राजा सारीगढ़ विजय के लिए चला। सारी की ओर जाते हुए देख खेत में काम करती हुई एक स्त्री ने राजा को भौऊंरु द्वारा सचेत किया:

सारी मत मारदा राज्या सारी देली पतारी।
शोझा गढ़ भेड़ला, सारी लौग होली थारी।।

(अर्थात हमारे राजा जगत सिंह सारी पर आक्रमण से तेरा अपमान होगा। यदि सोझागढ़ जीतेगा तो सारी लग घाटी पर तेरी विजय होगी)। जोग चन्द का सबसे दृढ़ दुर्ग शोझा गढ़ था। जहां उसका शस्त्र भण्डार भी था। शोझागढ़ खनी पांध गांव के पास चोटी पर स्थित है। शोझा गढ से सारी कोठी

घेरी जा सकती थी और लग घाटी पर नियत्रंण रखा जा सकता था। इसलिए बन्दरोल नाला तक सड़क बनाई गई थी। राजा जगत सिंह ने तुरन्त सेना को शोझागढ़ पर आक्रमण करने के लिये भेज दिया और दोनों गढ़ों के साथ डुघीलग को जीता। जोग चन्द के पोते कुछ सम्बन्धियों ओर माता को बन्दी बना कर सारे राज्य पर अधिकार कर लिया।

सुलतानपुर विजय

राजा जोग चन्द के भाई सुलतान चन्द का अधिकार सुलतानपुर पर था। उसी ने सुलतानपुर बसाया था। इससे पूर्व सुलतानपुर का नाम शिला बंगलू था। सुलतानचन्द ने राजा जगत सिंह की सेना को पीछे से घेरना चाहा। शीशामाटी में घमासान युद्ध हुआ। हर ओर शीश पड़े थे जिसके कारण स्थान शीशामाटी कहलाया। सुलतान चन्द हार गया। यह सेना सहित पीछे हटा और सुलतानपुर चला गया। जगत सिंह ने सुलतानपुर पर आक्रमण किया। परोलकोट राजभवन के पास फिर घमासान युद्ध हुआ। सुलतान चन्द ने बहादुरी से सामना किया परन्तु मारा गया। वह इतने जोश के साथ लड़ रहा था कि सिर कट जाने पर भी वह लड़ता रहा। और कुछ पग आगे बढ़ने पर ही धरती पर गिरा। उसी स्थान पर रास्ते के बीच बना एक चबूतरा है जो चरण पादुका के नाम से जाना जाता हैं। यह देवी जगन्नाथी के चरण चिन्ह हैं। सुल्तानचन्द की मृत्यु के साथ युद्ध समाप्त हो गया और सुल्तानपुर पर जगत सिंह का अधिकार हो गया।

बाहरी सिराज में विजय

राजा जगत सिंह ने बाहरी सिराज के नारायणगढ़, सिरीगढ़ तथा हिमरी कोठियां राजा सुकेत के अधिकार से छुड़ाकर अपने राज्य में सम्मिलित कीं।

गुलेर के राजा का आक्रमण

गुलेर के राजा मान सिंह ने राजा जगत सिंह के समय कुल्लू पर आक्रमण किया। परन्तु युद्ध से पूर्व ही राजा जगत सिंह ने उसे चांदी की बहुत सी ईंटें देकर लौटा दिया। मान सिंह प्रसन्नता पूर्वक चला गया। अपने स्थान पहुंचने पर जब उसने ईंटों की परख करवाई तो पाया कि सभी ईंटें लोहे की हैं, जिन पर चांदी चढ़ाई गई थी। गुलेर के राजा ने दूसरी बार आक्रमण नहीं किया।

दिल्ली दरबार के फरमान

मुगल बादशाहों ने कुल 13 फरमान 1650 ई. से 1658 ई. के बीच राजा जगत सिंह को भेजे। इनमें से 12 दारा शिकोह ने और एक

औरगंजेब ने भेजा था। इनमें 4 शांगरी राजा के पास और शेष कुल्लू राजा के पास थे।

बैरकोट पर अधिकार का फरमान

बैरकोट मण्डी कुल्लू सीमा पर एक महत्वशाली दुर्ग था। यह पहले जोग चन्द के अधिकार में था जिसे मण्डी तथा कुल्लू की सेनाओं ने अपने सामूहिक अभियान में जीता था। दोनों ने बैरकोट पर अधिकार चाहा और एक छोटी लड़ाई भी हुई। अन्त में दिल्ली सम्राट से निर्णय लेने का समझौता हुआ। दोनों राजाओं ने अपना पक्ष रखते हुए प्रार्थना पत्र लेकर प्रतिनिधि भेजे। क्योंकि दोनों अलग-अलग समय पर सम्राट से मिले इसलिये दोनों पक्षों को स्वीकृति के फरमान मिल गये। मण्डी राजा शुभ महूरत की प्रतीक्षा करता रहा। परन्तु कुल्लू राजा ने फरमान के साथ तुरन्त अपने आदमी भेजे जिन्होंने फरमान दिखाया और तुरन्त दुर्ग पर अधिकार ले लिया। इस फरमान को रैला (सैंज) गांव का दौलतू लाया था और साधू के भेस में कुल्लू पहुंचा था।

जोग चन्द का राज्य लौटाने बारे फरमान

राजा जोग चन्द की माता ने बन्दी बनाये जाने पर अपने विश्वसनीय व्यक्ति द्वारा दारा शिकोह को प्रार्थना पत्र भेजा तथा राज्य के छीने जाने की बात भी लिखी। इस बार दारा शिकोह ने राजा जगत सिंह को राज्य लौटाने तथा जोग चन्द के परिवार को मुक्त करने का फरमान भेजा तथा धमकी दी कि आदेश का पालन न होने पर राजरुप राजा नूरपुर, जहांगीर कुलीवेग और जम्मू के फौजदार को जो अबधशाही सेना के साथ कहलूर के विद्रोह को दबाने आये हुये थे, को कहा जायेगा कि वे कुल्लू राजा को नष्ट कर दे। फरमान की तिथि तीन मास जमा दी अल्सानी 1067 हिजरी अर्थात 1657 ई. थी। राजा जगत सिंह ने इस आदेश को नहीं माना। इसके कुछ समय पश्चात दिल्ली के सिंहासन पर औरगंजेब ने अधिकार कर लिया था तथा शाहजहां को बन्दी बना कर दारा शिकोह का पीछा किया जा रहा था।

फकीर चन्द को भेजने का फरमान

सम्राट अकबर के समय से हिन्दु राजाओं के एक पुत्र को दिल्ली रखे जाने की प्रथा थी ताकि राजा विद्रोह न करे। राजा जगत सिंह को भी दारा शिकोह से फरमान मिला था कि अपने पुत्र फकीरचन्द को दिल्ली भेजे। इससे पूर्व राजा ने पुत्र भेजने के लिये कई बार टालमटोल की तथा रास्ते में आने वाली कठिनाईयों का वर्णन किया था। अतः फरमान में यह भी लिखा था कि इब्राहीम वेग को राजकुमार को दिल्ली पहुंचाने के लिये लिख दिया है

ताकि रास्ते में कोई कठिनाई न हो। इब्राहीम बेग पहाड़ी रियासतों का थकलादार था। वह फरमान हिजरी सन 1066 का था।

1657 ई. के अन्त में फकीरचन्द को दिल्ली भेजा गया। परन्तु उन्हीं दिनों शाहजहां के पुत्रों में सिंहासन के लिये युद्ध छिड़ गया। फकीरचन्द का दिल्ली पहुंचने के पश्चात कुछ पता न चला। सम्भवत: वह मारा गया। राजा जगत सिंह को इसका बड़ा दुख हुआ क्योंकि यही बेटा सबसे चतुर था। दिल्ली भी उसे इसीलिये भेजा गया था।

कुछ अन्य फरमान

इनमें से एक में जगत सिंह को राजा और शेष में जमींदार से सम्बोधन किया गया है। जमींदार अर्थात भूमिधर, ये अमीरों की श्रेणी में आते थे। इन्हें मन्सवदारी तथा उपाधियों से सम्मानित किया जाता था। दो फरमानों का वर्णन उळपर किया गया है तथा दो फरमान पार्वती घाटी से भेजे गये बिल्लौर पत्थरों के बारे भी दारा शिकोह के हैं। इनमें भेजे गये बिल्लौर पत्थरों के छोटे होने बारे लिखा था तथा बड़े भेजने के लिये कहा गया था। बिल्लौर पत्थर का खनन का पूरा अधिकार राजा कुल्लू को दिया गया था। यह फरमान 1656 ई. के (1066 हिजरी) सन के थे। राजा जगत सिंह ने मुगल सम्राट को बाज भी भेजे।

एक फरमान औरंगजेब की ओर से मिला जिसमें जगत सिंह को आदेश दया गया था कि वह ध्यान सिंह कहलूरिया के साथ मिल कर दारा शिकोह के पुत्र सुलेमान शिकोह का रास्ता रोके जो पहाड़ों की ओर भाग गया था और अपने पिता दारा शिकोह से जा मिलना चाहता था। कहलूर का राजा दारा शिकोह से नाराज था। दारा शिकोह मुराद और औरंगजेब की सांझी सेनाओ से हार कर पंजाब की ओर भाग आया था। राजा जगत सिंह ने अपनी बेटी राजकुमारी कुम—कुम का विवाह कहलूर के राजा से किया था। कहलूर के राजा को सुलेमान शिकोह को रोकने पर तथा बहादुरी दिखाने पर 22 पहाड़ी राजाओं की सरदारी दी गई।

राजधानी नगर से सुलतानपुर

राज्य का बाहरी सिराज तक विस्तार होने से राजधानी बदलने की आवश्यकता अनुभव होने लगी। नगर एक किनारे पर था तथा सामरिक दृष्टि से भी सुरक्षित न था। राजा जगत सिंह ने 1660 ई. में जब सुलतानपुर विजय किया तो उसे वह स्थान राजधानी के लिये अति उपयुक्त लगा। इसके पूर्व में व्यास तथा दक्षिण में सरवरी नदियां है। पश्चिम में पहाड़ी है। ऊंचाई पर होने से यह स्थान प्राकृतिक रुप से सुरक्षित था। केवल उसे दो प्रवेश द्वार (एरोल)

जिनके उळपर पहरेदार के लिये कोट थे बनबाने पड़े। जिस कारण इसका नाम परोल कोट पड़ा। कुछ भवन सुल्तान चन्द के थे। आवश्यकता अनुसार उनमें फेरबदल कर तथा कुछ नया निर्माण करवा कर उसने राजधानी सुलतानपुर बदल दी। उसने मकराहड़ को भी छोड़ दिया। देख--रेख के अभाव में वहां के भवन भी समय के साथ खण्डहरों में बदल गये। मकराहड़ के उजड़ने पर यह कुल्लू भाषा का भौऊंरू बड़ा प्रसिद्ध था:--

कुल्लू मौंझे मकड़सा, मण्डी मौंझे टकोली।
फुल निबरू फुलिये, डैंडलू हेरिया रोली।।

(कुल्लू रियासत में मकड़सा तथा मण्डी रियासत में टकोली की अवस्था ऐसी हो गई जैसे फूल खिलने के पश्चात डण्ठल रह जाता है)। मकड़सा की तरह टकोली में मण्डी को महत्वशाली स्थान प्राप्त था तथा यहां भी बड़ी रौनक हुआ करती थी। राजा ने उसी समय रघुनाथ मन्दिर भी सुलतानपुर में बनवाया और मन्दिर में मूर्ति की स्थापना की।

वैष्णव धर्म में प्रवेश प्रचार तथा प्रसार

यद्यपि वैष्णव धर्म का चलन कुल्लू में हो चुका था परन्तु राजा जगत सिंह के समय कुल्लू में वैष्णव धर्म राज धर्म बना। पहले यहां शाक्तमत तथा शैवमत का बोलवाला था। राजा स्वयं शैवमत का अनुयायी था। तारा नाथ राजगुरु था तथा अन्य नाथ साधुओं का भी काफी प्रभाव था। राजा जगत सिंह उन्हें इतना अधिक मानता था कि इनके दर्शन किये बगेर भोजन नहीं करता था। परन्तु एक घटना ने उसे वैष्णव धर्म की शरण में ला दिया। वैष्णव धर्म राज धर्म बन गया और कुल्लू में राजा अब अपने साथ श्री रघुनाथ सहाय का अलंकार भी लगाने लगा। वैष्णव उत्सव दशहरा, दीवाली, वसन्त पंचमी आदि भी मनाये जाने लगे। घटना इस प्रकार है-- पार्वती घाटी में सरशाड़ी के सामने टिप्परी गांव में दुर्गादत नाम का एक लोकप्रिय विद्वान रहता था। कुछ लोगों ने ईर्षावश राजा जगत सिंह के पास चुगली लगाई कि दुर्गादत के पास एक पत्था (लगभग डेढ़ किलो) मोती है। राजा ने उससे मोती मांगे। परन्तु उसके पास मोती होते तो वह देता।

मणीकर्ण जाते हुये सरशाड़ी के पास ब्राह्मण को बुला कर राजा ने पुनः मोती मांगे। न देने पर दण्ड दिये जाने की बात कही। वह उससे डर गया और वापसी पर अपने गांव में मोती देने का वचन दिया। जब राजा गांव पंहुचा तो ब्राह्मण ने अपने परिवार को घर में बन्द कर दिया और स्वयं छत पर बैठ गया तथा घर को आग लगा दी। अपना मांस काट काट कर आग में डालते हुये कहता रहा "ले राजा पत्था मोती"। इस घटना से राजा को इतनी

आत्मग्लानि हुई और आघात लगा कि वह अपने आप को ब्राह्मण हत्या का दोषी मानने लगा। उससे खाना पीनां तक छुट गया।

झिड़ी नगर में उस समय रामा नन्द सम्प्रदाय के एक सिद्ध बैरागी किशनदास पेयहारी की प्रसिद्धि सब ओर फैल रही थी। वह केवल दूध पीता था जिस कारण पेयहारी कहलाता था। उसने राजा को वैष्णव मत में दीक्षित किया। उसे त्रेतनाथ मन्दिर अयोध्या से राम मूर्ति ला कर स्थापित करने तथा राज्य उन्हें सौंप कर स्वयं प्रतिनिधि के रुप में राज्य करने का परामर्श दिया। यह मूर्ति अश्वमेध यज्ञ के समय स्वयं राम जी ने बनवाई थी। मूर्ति को लाने के लिये किशनदास का चेला दामोदरदास जो उस समय सुकेत में था तथा बन्दल के ठग आदि गये। व्यय के लिये राज कोष से एक हजार रुपये दिये गये। दामोदर दास कोई एक बर्ष मन्दिर में रहा। अवसर पा मूर्ति ले कर भाग गया। परन्तु हरिद्वार के पास जोधावर नाम के एक पुजारी ने उसे पकड़ लिया। राज कोष से पुजारी की आय की पूर्ति का वचन मिलने पर उसने दामोदर दास को मूर्ति सहित छोड़ दिया। मास जुलाई 1651 ई. में मकराहड़ पंहुचने पर मूर्ति का भव्य स्वागत और यज्ञ किया गया। उस समय का दोहा इस बात की पुष्टि करता है:

मकराहड़ अजुध्यापुरी मानो है ब्रज की रीत।
जगत सिंह महाराज की राघो जी से प्रीत।।

(मकराहड़ दूसरी अजुध्यापुरी ब्रज भूमि कीं तरह है। राजा जगत सिंह का जीवन रघुवंशी राम को समर्पित है)।

राजा ने दामोदर दास को उसकी सेवाओं के लिए 84 खार जमींन और एक ठाकुर द्वारा भूईन में दिया। राजा ने अपना राज पाठ रघुनाथ जी को सौंप दिया तथा स्वयं छड़ी ब्रदार बना। एक रुपया और एक टका रघुनाथ जी की ध्यानगी के लिये प्रतिदिन निशिचत किया जो कुल मिला कर बर्ष में 500 रुपये के लगभग हो जाता था। इसे पुजारी जोधावर को भिजवा दिया जाता था। अन्य पुजारियों के लिये हाट (बजौरा) में भूमि दी गई। जिसकी आय वे राजा जीत सिंह के समय तक लेते रहे। जगतसुख कोठी की कुल आय रघुनाथ जी के नाम लगा दी। पेयहारी को राजा ने अपना गुरु बनाया और स्वयं कण्ठी धारण की। राजा को पेयहारी ने "नरसिंह" की मूर्ति भी दी जिसे भोग लगा कर राजा को मांस खाने की आज्ञा दे दी। राजा को इस प्रकार किशनदास ने आर्शीबाद दिया तथा भविष्यवाणी की :–

आठ पीढ़ी मकड़सा, नवीं पीढ़ी पंडोरी ।
बाद में वही राज करे जिसकी रघुनाथ पर डोरी ।।

अर्थात– पुंडीर क्षत्रीय राजा जिनकी आठ पीढ़ियां मकड़सा (कुल्लू) में रहीं हैं नवीं पीढ़ी से रघुनाथ जी के आश्रय में रह कर ही राज करेंगीं)।

किशनदास की गुदड़ी अभी तक राज परिवार के पास सुरक्षित है। अब जनता ने भी वैष्णव धर्म को अपनाना आरम्भ कर दिया। रघुनाथ जी के नाम 338/– रू. की आय वाली मुआफी लगाई गई। जगतसुख से आने वाले अन्न से सदाव्रत चलाया। राजा 42 दिन चरणामृत पी कर स्वस्थ हो गया।

मूर्ति लाने का विद्वान एक कारण और मानते हैं।उस समय मुगलों की असहनशीलता आरम्भ हो गई थी। अतः त्रेतनाथ की मूर्ति सुरक्षा की दृष्टि से कुल्लू लाई गई।

समय की आवश्यकता

यह बात विचारणीय है कि तीन अन्य पड़ोसी राज्यों के राजाओं ने किसी अधिदेव को अपना राज्य सौंप उसके प्रतिनिधि के रुप में राज्य करने का निश्चय किया। कुल्लू राजा रघुनाथ जी का, मण्डी नरेश माधो राय तथा बुशैहर नरेश भीम काली का प्रतिनिधि बने। ग्राम देवता धार्मिक तथा सामाजिक जीवन के केन्द्र रहे। राजा देवाधिदेव का प्रतिनिधि होने से सारे देवताओं का अभिभावक भी माने जाने लगा। सभी देवता अधिदेव को प्रणाम करने के पश्चात राजा को स्वयं जाकर आर्शीबाद देते थे। राजा देवताओं के रथों के आकार निशिचत करता था। कारदार तथा पुजारी की नियुक्ति करता था। जो देवता के काम काज देखते थे। देवताओं को राजा के निमन्त्रण पर आना पड़ता था। अन्य राज आज्ञाओं का भी पालन करना पड़ता था। इस प्रकार देवाधिदेव परम्परा से राजा की जनता के सामाजिक तथा धार्मिक जीवन में पकड़ दृढ़ हुई। राज सत्ता के साथ धार्मिक सता भी राजा के अधीन आ गई।

मृत्यु

1662 ई. में गृरु की आज्ञा से राजा जगत सिंह प्रभु स्मरण के लिये मण्मिकर्ण आया। परन्तु यहां केवल आठ दिन रहने के पश्चात उसकी मृत्यु हो गई। जिसके प्रमाण स्वरुप उसकी मूरत अभी भी हनुमान मन्दिर में ;राम मन्दिर के सामनेद्ध रखी हुई है। राजा की स्मृति में कई बर्षों तक सदाव्रत चलता रहा। राजा जगत सिंह एक कुशल प्रशासक, योग्य राजनितिज्ञ और वीर योद्धा था। उसने 25 बर्ष राज्य किया। दशहरा की नीवं उसने रखी और कुल्लू में वैष्णव धर्म उसके कारण आया।

राजा हरिसिंह (1662–1664)

राजा जगत सिंह की मृत्यु के पश्चात हरिसिंह सिंहासन पर बैठा। वह मन्द बुद्धि था। इसलिये राज्य कर्मचारी तथा जनता चाहते थे कि विधि सिंह छोटा बेटा गद्दी पर बैठे। दोनों की मातायें अलग–अलग थीं। इसलिये राजा हरिसिंह के सिंहासन सम्भालते ही षड्यन्त्र आरम्भ हो गये।

षड्यन्त्र एवं हत्या

सर्वप्रथम उसे पालकी से गिरा कर मारने की योजना बनाई गई। इसके लिए भरैण का ढंकार चुना गया। जहां से लुढ़का व्यक्ति पार्वती में गिरता है। जब राजा हरिसिंह वहां दौरे पर गया तो इस षड्यन्त्र में सम्मिलित कहार पालकी उठाने के लिये भेजे गये। परन्तु वहां पहुंच कर राजा को गिराने का वे साहस न कर सके और राजा को सुरक्षित वापस ले आये।

षड्यन्त्र की भनक हरिसिंह की माता को लग गई। अपने बेटे की सुरक्षा के लिये वह उसे अपने साथ नगर ले गई और वहां रहने लगी। राजा हरिसिंह बड़ा कृष्ण भक्त था। इसलिये वह ठावा मन्दिर में पूजा के लिए जाने लगा और मन्दिर का पूजा कार्य कुछ समय पश्चात अपने हाथ में ले लिया। इस कारण चचोगी के जठाल परिवार जो इस पूजा कार्य को निभाते थे की आय समाप्त हो गई। जिस कारण वे राजा से छुटकारा चाहते थे। जठाल राजा की चाकरी के लिये भी आते थे। अपनी बारी के दिन इन्होंने राजा को खिचड़ी खिलाई जिसमें खूब घी दिया। परन्तु राजा को पानी पीने के लिये नहीं दिया और कमरा बन्द कर दिया। राजा प्यास से तड़प–तड़प कर मर गया। कुछ का विचार है कि उसे जहर देकर मारा गया। उसकी मृत्यु के बारे में जान कर उसकी माता नगर से भाग कर हरिपुर पंहुची। राजा हरिसिंह ने ही अपने नाम से हरिपुर 1662 ई. में बसाया था तथा माधोराय का मन्दिर भी बनवाया था। इससे पूर्व हरिपुर का नाम "भूठा" था। मन्दिर के ब्राह्मण ने राजमाता को शरण दी तथा राजा का स्वयं दाह संस्कार आदि करवाया। राजा हरिसिंह की मूरत उसी मन्दिर में स्मृति रुप में रखी गई है। मन्दिर में भोग लगाने से पूर्व आवाज डाली जाती थी कि यहां चचोगी का आदमी तो नैही है। उन्हें वहां प्रवेश वर्जित था। जनश्रुति अनुसार हरिसिंह मूर्ख होने के साथ निर्दयी भी था। इसलिये भी लोग उससे छुटकारा पाना चाहते थे। विधि सिंह भी इस षड़यन्त्र में सम्मिलित था क्योंकि हरिसिंह की मृत्यु के पश्चात ही वह राजा बन सकता था। कुछ का विचार है कि उसे रुमसु गांव के किसी व्यक्ति ने उसकी क्रूरता के कारण मारा। राजा हरिसिंह के समय में कांगड़ा के कुछ ठाकुर आकर पार्वती घाटी में बसे थे। इस राजा का राज्य लगभग केवल एक वर्ष ही रहा। इसी लिये कई लेखकों ने इसका नाम वंशावली में नहीं दिया है।

राजा विधि सिंह (1664–1672)

राजा विधि सिंह ने 1664 ई. में हरिसिंह की मृत्यु के पश्चात राज्य की बागडोर सम्भाली।

सिंहासन आरोहन पर विरोध

राजा विधि सिंह जिन परिस्थितियों में राजा बना, उससे सन्दे उपजता था कि राजा हरिसिंह की मृत्यु में उसका भी हाथ था। इसलिये कु दरबारी और प्रशासनिक अधिकारीयों ने उसके विरूद्ध जनता को उकसाया औ संगठित होकर भून्तर से कुल्लू की ओर कूच किया। जानकारी मिलते ही वि सिंह ने अपनी सेना को उनका विरोध करने के लिये भेजी जिसका नेतृत्व राजवंश का टिक्का (ज्येष्ठपुत्र) कर रहा था। विधिसिंह उस समय निसन्तान था यह टिक्का राजवंश में से ही होगा। विधि सिंह भी इस युद्ध में जाना चाहत था परन्तु उसका घोडा अचानक अड़ गया। उसने इसे अपशकुन माना ज्योतिषि से इस घटना बारे प्रश्न किया। ज्योतिषि ने गणना के आधार प बताया कि विजय निश्चित है। दोनों सैनाओं ने युद्ध बदाह के पास लड़ा ज एक चश्मा भी है। राजा विधि सिंह की सेनायें उन विद्रोहियों को तितर–बित करने में सफल हुईं। टिक्के ने उस विजय की स्मृति में वहां एक बावल (बाई) बनवाई। जिसका नाम टिक्के–री–बाई पड़ा। यह बावली अब भी है समय बीतने पर टिक्कर बाई (बाऊड़ी) के नाम से अब भी पुकारी जाती है इस घटना से सम्बन्धित एक लोकगीत की कुछ पंक्तियां नीचे दी जाती हैं ज इसकी पुष्टि करती है:—

राजा पुच्छदा पाध्या, कोई माऊता हूणी।
राजा बोल्दा पाध्या, घोड़े दीणी जाखुणी।।
पाधा बोल्दा राजा साहिबा, इन्हा बैना न बोले,
ढाई सेर, पंसरिया सोना, देऊ तराजू रै तोले।।

(राजा ने ज्योतिषि से पूच्छा कि चलने से पहले ही घोड़ा अड़ गया, क्या को मौत होनी है? ज्योतिषि ने गणना के आधार पर कहा, "राजा ऐसी अपशगु की बातें मत करो। मैं ढाई से पांच सेर के लगभग तराजू में तोल कर सो दूंगा, यदि विजय न हो)।

ठावा मन्दिर की पूजा बन्द तथा पुनः आरम्भ करवाना

राजा विधि सिंह का सबसे पहला कार्य ठावा मन्दिर की पूजा बन्द करवा था।इस मन्दिर को हरिसिंह अत्यधिक महत्व देता था तथा मानता था। रा अरछण्डी के पास मनाली जाते हुये पालकी पर पर्दा डलवाता था ताकि

ठावा मन्दिर न दीखे। परन्तु रानी के पुत्र ठावा मन्दिर की मनौती से हुआ। इसलिये यहां पूजा अर्चना पुनः आरम्भ की गई। विधि सिंह का लम्बे समय तक निःसन्तान रहने का कारण देवता सोइल ने इस प्रकार बताया:—

कुलज पुजला ता कुल रौहली।
औतर पुजला ता औतर रोहली।।

(कुल देव की पूजा से ही कुल रहेगा, यदि नहीं करेगा तो निस:सन्तान रहेगा) अतः रानी के आग्रह पर ठावा मन्दिर की पूजा आरम्भ की गई।

बुशैहर विजय

हरिसिंह के समय राजा बुशैहर ने बाहरी सिराज के बड़े क्षेत्र पर अधिकार कर लिया था। विधि सिंह ने 1671 ई. में इस क्षेत्र को वापस लेने के लिये आक्रमण किया। उसने अपनी जीत निश्चित बनाने के लिये कहलूर के राजा भीम चन्द से भी सहायता मांगी। भीम चन्द विधि सिंह का रिश्तेदारी में भानजा था। भीम चन्द के पिता की दूसरी रानी कुमकुम विधि सिंह की बहिन थी। भीम चन्द ने दल बल के साथ सहायता की। कहलूर के वंशावास में इस विजय के बारे में एक दोहा है:—

केपू, खेपू, खेगसू दतनगर निरमण्ड।
दो ही राजे भीम को, भूप भरेंगें दण्ड ।।

(केपू, खेपू, खेगसू दतनगर और निरमण्ड के लिये दो राजे (कुल्लू और बुशैहर) राजा भीम चन्द को नजराना दिया करेंगे। परन्तु भीम चन्द ने सतलुज के दाहिने किनारे के क्षेत्र जीत कर विधि सिंह को दिये। बिलसपुर इतिहास अनुसार कुल्लू राजा ने निरमण्ड में एक मन्दिर बनवाया। जिसमें भीम चन्द की खड़ावें रखी। यह कृतज्ञता की चरम सीमा थी।

राजा विधि सिंह ने स्वयं धौल, कोटकण्ढी तथा बरामगढ़ कोठियों को जीता। फिर सतलुज पार कर बुशैहर की राजधानी सराहन तक लूटपाट करता चला गया। उसने सतलुज को अपनी राज्य सीमा बनाया। सराहन से राजा विधि सिंह एक देवता का मोहरा लाया जो उसके एक सैनिक भक्तू को खेत में मिला था। इस मोंहरे को थ्रास के देवता मार्कण्डे के भण्डार में रखा हुआ है। जिस पर घटना का वर्णन है। यह मोहरा उस देवता को समर्पित किया गया है।

मण्डी साथ युद्ध

मण्डी का राजा श्यामसैन सूरा, सुन्दरी तथा संगीत में मस्त रहता था। जिस से शासन व्यवस्था बिगड़ती गई। राजा विधि सिंह ने इसका लाभ

उठाते हुए कुल्लू सीमा के साथ वाला मण्डी रियासत के बड़े क्षेत्र पर अधिकार कर लिया। श्याम सैन ने अपने क्षेत्र को छुड़ाने के लिये कुल्लू पर आक्रमण कर दिया। सनौर और बजौरा को अपने अधीन ले लिया। अपनी हार को देखते हुये कुल्लू राजा ने सन्धि कर ली। सारा जीता प्रदेश लौटा दिया तथा एक लाख रुपया दण्ड दिया। वापसी जाते हुये वह कण्ढी जोत पर रुक गया। सेना वापस भेज दी और नाच गाने के लिये प्रबन्ध किया। कण्ढी का क्षेत्र कुल्लू की सीमा के साथ था। कुल्लू सेना के अचानक आक्रमण कर राजा के साथियों को मार दिया। श्यामसेन को उसके स्वामी भक्त सेवक बचा कर ले गये। एक लाख कुल्लू सेना वापस ले आई। श्यामसेन इस घटना से इतना घबराया कि बिमार पड़ गया और इसी दुख से मर गया। यह घटना 1667 ई. की है।

लाहुल विजय

लाहुल पर लद्दाख के राजा का अधिकार था। जब तिब्बतियों ने लद्दाख पर आक्रमण किया तो विधि सिंह ने उपयुक्त अवसर पा लाहुल पर आक्रमण कर दिया और बढ़ता हुआ थिरोट तक जा पंहुचा। वहां से उसने त्रिलोकनाथ पर आक्रमण किया। मन्दिर से मूर्ति कुल्लू लानी चाही। परन्तु वहां ठाकुर हमीर ने कड़ा प्रतिरोध किया। जिस कारण विधि सिंह अपने कार्य में सफल न हुआ। इस संघर्ष में मूर्ति की एक हाथ की उंगलियां टूट गईं। भंग हुई मूर्ति अभी भी मन्दिर में स्थापित हैं

शेष लाहुल पर अधिकार तथा विवाह सम्बन्ध

चिनाब के वायें किनारे का लाहुल चम्बा राजा के अधीन था। राजा चम्बा छत्तर सिंह की दो बेटियों से राजा विधि सिंह का विवाह हुआ और चिनाब नदी के वायें किनारे का लाहुल विधि सिंह को दहेज में मिला। इस प्रकार थिरोट तक चिनाब के दोनों ओर का लाहुल उसके अधीन हो गया। राजा विधि सिंह ने इसे कुल्लू राज्य की एक बजीरी बनाया और नकदी कर की प्रथा डाली।

राजा किश्तबाड़ से विवाह सम्बन्ध

राजा विधि सिंह ने अपने बेटे का विवाह राजा किश्तबाड़ की पुत्री से किया। बारात लाहुल से हो कर किश्तबाड़ गई और लौटी।

मृत्यु

राजा विधि सिंह की मृत्यु 1672 ई. मे हुई। उसने केवल नौ बर्ष राज्य किया।

राजा मान सिंह (1672 से 1717 ई.)

मान सिंह बड़ा शूरवीर और योग्य राजा था। उसके समय कुल्लू राज्य अपनी शक्ति की चरम सीमा तक जा पंहुचा।

विजयें

सर्वप्रथम राजा मान सिंह ने कोठी पन्द्रह – बीस (बाहरी सिराज) बुशैहर के राजा के अधिकार से छुड़ाई और बुशैहर से सीमा निर्धारित की। सुरक्षा की दृष्टि से वहां तीन दुर्ग बनवाये।

भंगाल पर अधिकार

भंगाल के राजा पृथीपाल का विवाह सिद्ध सैन (मण्डी) की बहन से तथा कुल्लू के राजा मान सिंह का विवाह भंगाल के राजा की बहन से हुआ था। 1700 ई. में मण्डी राजा ने अपने बहनोई पृथीपाल को सुकेत के विरुद्ध युद्ध में सहायता के लिये बुलाया। पृथीपाल के मण्डी पंहुचने पर बड़ा स्वागत किया गया परन्तु कुछ दिन पश्चात उसे दमदमा राज भवन में मार दिया गया ताकि उसके राज्य पर अधिकार किया जा सके। उसका धड़ जला दिया गया और सिर राजभवन के सामने तालाब में गाड़ दिया। उसके हाथ पांव चारों कोणों में दबा दिये। तालाब के बीच एक स्तम्भ बनाया गया जिस पर दीपक जलाया जाता था। यह तालाब अब सनकन गार्डन कहलाता है। सिद्धसैन ने सेना भंगाल पर अधिकार के लिये भेजी। इस घटना से सिद्धसैन की पत्नी ने जहर खा लिया और पृथीपाल की पत्नी छूरा घोंप कर मर गई।

पृथीपाल की माता को जब सारी घटना का पता लगा तो उसने राजा मान सिंह को अपने विश्वसनीय व्यक्ति के हाथ एक पत्र भेजा। जिसमें सारी घटना का वर्णन किया गया था। उसे भंगाल को बचाने और अधिकार करने के लिये लिखा। राजा मान सिंह उस समय बुशैहर की सीमा गांमू में था। पत्र मिलते ही उसने अपनी सेना को अपने साथ पांच दिन का राशन ले कर तुरन्त कूच करने की आज्ञा दी। सेना तुरत गति से चलती हुई एक दिन और रात में लारजी पंहुची। दूसरे दिन लग घाटी का सारी जोत पार किया तथा तीसरे दिन भंगाल पंहुच गई। भीतरी और बाहरी गाहर पर अधिकार करने के पशचात रत्नगीर और गढ़ कमलाह पर पहरा डाल दिया। फिर देऊल परगना, समसाला परगना, और बीड़ परगना पर अधिकार कर लिया। मण्डी सेना कर्णपूर, साहपुर और शमशेरपुर पर ही अधिकार कर सकी। परस्पर बातचीत से "अहजू" मण्डी तथा कुल्लू राज्य की सीमा रखी गई। दूसरी ओर बीड़ के क्षेत्र को सीमा बना कर राजा मान सिंह ने छोटा भंगाल तथा बड़ा भंगाल को अपने राज्य में

सम्मिलित कर लिया। वहां का प्रबन्ध सहालग कायथ को सौंप कर वापस कुल्लू लौट आया। क्योंकि ढालपूर के वीरनाथ देवता ने राजा को जीत में सहायता का वचन दिया था कृतज्ञता वश रानी के रोपों के किनारे देवता का मन्दिर बनवाया।

मण्डी राजा से युद्ध

राजा मान सिंह अपनी सेना के साथ बाहरी सिराज गया था कि मण्डी राजा गौड़ सेन ने अवसर पा कुल्लू पर आक्रमण कर दिया और गढ़चूला, मदनपुर, तारापुर जीत कर बस्तूरी तक चढ़ आया। इस प्रकार सारी लग घाटी पर अधिकार कर लिया। मान सिंह सूचना मिलते ही लौटा। उसने न केवल अपने क्षेत्र वापस लिये अपितु मण्डी सेना को पीछे धकेलता हुआ चला गया।

हुरंगसी (ढांगरी) को विजय करके फागमी धार जा बैठा। उसने गुम्मा और दरंग की खानों पर भी अधिकार कर लिया और एक ढब्बा प्रति मन नमक का भाव निश्चित किया। मण्डी रिकार्ड अनुसार कुछ समय पश्चात मण्डी सेना ने मान सिंह को वापस अपनी सीमा में जाने के लिये बाधित कर दिया। परन्तु वास्तविकता यह है कि उसी समय मुगल सेना भी मण्डी सीमा पर आई हुई थी। नये खतरे को देखते हुये राजमाता ने राजा मान सिंह को एक पत्र लिख कर स्पष्ट किया कि उसका पुत्र राजा गौड़ सैन वजीरों के कहने में आकर दुस्साहस कर बैठा है और उसे युद्ध व्यय ले कर लौट जाना चाहिये। वह मान गया। दोनों राजाओं में समझौता हुआ। जिस अनुसार मान सिंह ने युद्ध व्यय प्राप्त किया, सारे विजित क्षेत्र जिसमें शोनार, बदार तथा तोआग के दुर्ग भी सम्मिलित थे उसने छोड़ दिये और अपनी राज्य सीमा में लौट आया। समझौते के अवसर पर उसने गौड़सैन को एक खंजर भेंट किया जो मण्डी राज्य कोष में मौजूद था।

बुशैहर से युद्ध

राजा बुशैहर ने कोठी पन्द्रह बीस बाहरी सिराज के कुछ भागों पर अधिकार कर लिया। बुशैहर सेना को इस युद्ध में भारी हानि उठानी पड़ी। एक लोकगीत इसकी इस प्रकार पुष्टि करता है:–

ओरे–पोरे आगे–पीछे मारे बैरी बहु,
फौजी मूए बेशूमार पानी साही बहु

राजा मान सिहं ने वुशौहर से लगती सीमा पर दुर्ग बनवाये ताकि वहां सेना रखी जा सके।

लद्दाख से सीमा निर्धारण

कुछ समय सुलतानपुर में रहने के पश्चात राजा मान सिंह बाहरी सिराज से होता हुआ समदोह के निकट पंहुचा जो पिन नदी के निकट स्पिति में है। लद्दाख से समझौता कर ल्योंगटी (लिंगटी) की सीमा निश्चित की। रुपिन तथा भावेह दर्रों पर दुर्ग बनाये। जो ल्यूंगटी खार से कुल्लू वालों के दुर्ग नाम से अभी भी जाने जाते हैं। परन्तु वे खण्डहर रूप में है।

स्पिति पर आक्रमण

इसके पश्चात राजा मान सिंह ने 1680 ई. में स्पिति पर आक्रमण किया। खूब लूटपाट की, कर प्राप्त किया तथा लोसर के रास्ते कुल्लू लौट आया। उसने स्पिति से भी बार्षिक कर लेना शुरु किया। 1700 ई. में लाहुल जीता। गोंधला का किला बनाया और राज परिवार की लड़की से विवाह किया।

सुकेत पर आक्रमण

राजा मान सिंह ने 1710 ई. में सुकेत पर आक्रमण किया। सुकेत की सहायता के लिये मण्डी सेना भी आई। सुकेत के मियाँ सुलेहु तथा 35 अधिकारी तथा मण्डी के हरि राम विष्ट तथा 20 अन्य अधिकारी मारे गये। मान सिंह ने चवासी को विजय कर अन्य क्षेत्रों को घेरा।

शांगरी विजय

स्पिति से वापसी के कुछ समय पश्चात राजा मान सिंह बाहरी सिराज गया और वहां से सतलुज पार कर शांगरी पर आक्रमण किया। शांगरी का ठाकुर हार गया। मान सिंह ने ठाकुर को निर्वाह के लिये जागीर दी और शांगरी क्षेत्र को अपने राज्य में मिला लिया। उसने कांगल सीमा पर दुर्ग सुरक्षा के लिये बनवाया। शांगरी राज्य के लेखा कोष की जांच की। कर्मचारियों के वेतन के भुगतान के पश्चात एक सौ रुपये शेष बचे। अतः सौ रुपये ही शांगरी का बार्षिक कर निर्धारित किया।

कोटगुरु कुमारसैन तथा बल्सन विजय

शांगरी के साथ लगती कुमारसैन की रियासत पर मानसिंह ने इसके पश्चात आक्रमण किया। उसे जीतकर कोट गुरु (कोटगढ़) को अपने अधीन किया। बल्सन को भी जीता। तीनों राणाओं से बार्षिक कर निश्चित कर क्षेत्र उनके पास ही रहने दिया। राजा मान सिंह ने अपनी विजयों को देव कृपा मानते हुये जुआणी महादेव तथा कपिल मुनी (त्रशौणा) को मोहरे प्रस्तुत किये।

दुर्गों का निर्माण

राजा मान सिंह ने अपने समय में कई दुर्गों का निर्माण किया जो अधिकतर सीमा की सुरक्षा के लिये थे। पन्द्रह – बीस कोठी (बाहरी सिराज) में डांगा, बुचका तथा गामू के गढ़ बनवाये। इसके अतिरिक्त सिरीकोट, सलाचणी, रठोह, रराणा तथा पंगी में भी दुर्गों का निर्माण करवाया। लद्दाख सीमा पर रूपिन तथा भावेह के दुर्ग भी बनवाये। गोंधला का किला भी बनाया जिसे स्थानीय भाषा में क्योर कहते हैं। इसमें 6 मंजिलें हैं, 2 धरती के नीचे तथा 4 ऊपर हैं। सारी लकड़ी कुल्लू के जंगलों से ले जाई गई है।

मणीकर्ण राम मन्दिर की मुरम्मत

स्पिति से मान सिंह ने बहुत सी चांदी लूटी थी। उसने सारी लूटी हुई चांदी मणीकर्ण के राम मन्दिर के छत पर लगा दी तथा राम मन्दिर को वर्तमान रुप में लाया।

बन्दोबस्त

राजा मान सिंह ने अपने राज्य की भूमि का बन्दोबस्त कराया। यह सरसरी नजरी पैमाइश पर आधारित था। जिउला और भार प्रणाली असींचित भूमि के लिये तथा सींचित भूमि के लिये कांसी प्रणाली चलाई। जिसमें बीज के अनुसार भूमि कर राजा को दिया जाता था। भूमि रिकार्ड तैयार करवाया। चाकरी के लिये वेतन निर्धारित किया। राजा स्वयं प्रत्येक कोठी में गया तथा बन्दोबस्त कराया। पलीचा के निकट बच्छूट (बन्जार) में एक कमरा है जिसका फर्श एक बड़े स्लेट का है। राजा मान सिंह इस कमरे में बन्दोबस्त के मध्य एक मास तक रहा। इस प्रकार वह प्रत्येक कोठी में जाकर कार्य करता रहा।

मृत्यु

राजा मान सिंह का अन्त बड़ा दुखद हुआ। उसने बाहरी सिराज में सतलूज के किनारे रठोह स्थान में आम का बाग लगाया तथा अपने लिये राजभवन बनवाया। वहीं रह कर वह सतलूज पार अपने राज्य तथा बाहरी सिराज के काम की देख रेख करता था। परन्तु कुछ समय पशचात उसकी प्रेमलीला कुमारसैन के राणा की पत्नी से आरम्भ हो गई। उसने रठोह छोड़ दिया तथा सेरी हरकोटी में रहने लगा। कमारसैन के राणा को यह बात असहनीय लगी। उसने बुशैहर के राजा से मिल कर राजा मान सिंह को मारने की योजना बनाई। राजा बुशैहर भी मान सिंह से कई बार हारा था तथा अपमानित हुआ था। रठोह तथा सेरी हरकोटी के मध्य जंगल था। जंगल के

मध्य भरली स्थान पर बुशैहर और कुमारसैन के सैनिक छुपे रहे। राजा मान सिंह की सेना सुकेत के विरुद्ध युद्ध में व्यस्त थी तथा बहरामपुर को घेर रही थी। राजा थोड़े से अंगरक्षकों के साथ सेरी हरकोटी से रठोह आ रहा था कि छुपे हुये सैनिकों ने आक्रमण कर दिया।

राजा ने उसका विरोध किया परन्तु शत्रु सैनिक संख्या में बहुत अधिक थे। राजा लड़ता हुआ मारा गया। बुशैहर के सैनिक राजा का सिर काट कर सराहन ले गये। उसे अपने राजा के दरबार में प्रस्तुत किया। राजा ने सिर को राजभवन के शिखर पर प्रदर्शित करने की आज्ञा दी ताकि सब मान सिंह की मृत्यु के बारे में जान जायें। धड़ कुमारसैन के सैनिकों के अधिकार में था। यह घटना 26 जून 1717 ई. की थी। रानियों के सती होने की बारी आई। धड़ कुमारसैन के राणा ने अपने राज्य की स्वतन्त्रता के बदले दे दिया। सिर प्राप्ति के लिये दुआड़ा कुल्लू का लक्ष्मणदास, सारली गांव (बाहरी सिराज) आदि से व्यक्ति साधू भेस में गये।

सराहन राजभवन के उपर नोचने के लिये गिद्ध, चीलें और कौए देख कर उन्होंने इसे अपशगुन बताया तथा राजा पर आने वाली विपत्ति की घोषणा की। इससे प्रभावित हो कर राजा ने सिर सतलुज में फेंकवा दिया जिसे वे पकड़ कर ले आये। अन्य जनश्रुति अनुसार साधुओं ने मंडराते हुए पक्षियों का कारण पुछा। कारण जानने पर हंसते हुए उन्होंने व्यंग्य किया, "वाह राजा मान सिंह, जीवित तो तू बुशैहर वालों के ऊपर छाया रहा और मर कर भी उनके सिर पर बैठा है।" इस व्यंग्य से राजा लज्जा गया और सिर को फेंकवा दिया जिसे वे व्यक्ति अपने साथ लाये। सती की रस्म "मशाड़" में नगर के निकट की गई जिसमें सोलह रानिया सती हुईं। इस स्थान पर एक सफेद चट्टान है जिसे सती रुहण तथा शेती रुहण भी कहते हैं। यही स्थान है जहां राजा मान सिंह का अन्तिम संस्कार किया गया तथा रानियां सती हुईं। राजा मान सिहं अपने साथ रघुनाथ प्रतिमा रखते थे। राजा विजय सिहं वुशाहर ने उस प्रतिमा को भीम काली मन्दिर में स्थापित किया।

चरित्रा चित्राण

मान सिंह महान योद्धा और उतम प्रशासक था। उसके राज्य में लाहुल का ऊतरी क्षेत्र, बड़ा भंगाल सारा तथा छोटा भंगाल का एक भाग तथा ल्युंगटी से सतलूज पार के क्षेत्र सम्मिलित थे। कुल्लू राज्य का क्षेत्रफल उस समय 10,000 वर्ग मील के लगभग था। युद्धों में विजय के बाद लूट से कुल्लू में काफी धन आया और राज्य काफी स्मृद्ध हो गया था। वह अच्छा प्रशासक था। विजित क्षेत्रो में अपना अधिकार बनाये रखने के लिये प्रबन्ध

करता था। उसने कोठी अनुसार उपज का अनुमान लगाकर लगान (भूमिकर) निशिचत किया था।

घोड़ों को पालने के लिए नियम बनाये तथा सुनिश्चित किया कि समय पर सेना को घोड़े उपलब्ध हों। प्रशासन के भिन्न–भिन्न अधिकारी नियुक्त किये तथा वेतन निश्चित किया। स्थान–स्थान पर सुरक्षा के लिए गढ़ बनाये। सैनिकों को प्रशिक्षण का प्रबन्ध किया। नाटी में तीव्र तलवार नृत्य "खड़ियात" भी उसके सैनिक प्रशिक्षण का एक भाग था। वह कुल्लू का अति योग्य राजा सिद्ध हुआ।

राजा राज सिंह (1717 –1735 ई.)

राजा मान सिंह की दो रानियां थीं। जिनसे तीन पुत्र राज सिंह, पदम सिंह तथा इन्द्र सिंह हुये। इन्द्र सिंह की मृत्यु बचपन में ही हो गई थी। राजा मान सिंह पदम सिंह की माता को अधिक चाहता था और उसकी बात अधिक मानता था। रानी चाहती थी कि उसका बेटा पदम सिंह राजा बने। मान सिंह यह बात मान भी गया था। परन्तु ज्येष्ठ पुत्र के होते छोटे को राज्य देने की परम्परा न थी। अत: राज सिंह को समाप्त करने का काम दयारी बजीर उदय राम को सौंपा गया। परन्तु वह इस कार्य के परिणामों से डर गया और यह काम न कर सका। किसी प्रकार यह भेद खुल गया और राज सिंह कुल्लू से भाग कर विजयपुर (कांगड़ा) पंहुचा। वहां के राजा ने उसे अपने पास रखा और उसका विवाह अपने कुल में ही करा दिया। वहीं उसका पुत्र जय सिंह उत्पन्न हुआ। जय सिंह पुर (कांगड़ा) का नाम उसी के नाम से है। राजा मान सिंह की मृत्यु अचानक और दुखद परिस्थितियों में होने पर राज सिंह कुल्लू लौटा और उसने सिंहासन आरोहन किया।

सिंहासन आरोहन पर विरोध

राजा राजसिंह कुल्लू से बाहर था। इसलिये वह राज दरबारियों का समर्थन तुरन्त न पा सका। वह प्रभावी व्यक्तियों से अनभिज्ञ था तथा अधिकतर व्यक्ति नहीं चाहते थे कि वह राजा बने। बहुत से ठाकुर तथा राज वंश से सम्बन्धित व्यक्तियों ने मिलकर उसके विरूद्ध विद्रोह कर दिया। इन्हें मण्डी राजा से भी पूरी सहायता मिली। परन्तु राज सिंह सर्तक था। उसने तुरन्त अपने साथियों से मिलकर इनका सामना किया तथा परास्त किया। ठाकुरों और सभी रजपुत्रों ने हथियार डाल दिये और क्षमा मांगी। राजसिंह ने उन्हें क्षमा कर दिया। इसके पश्चात इसका विरोध करने का साहस किसी को न हुआ और सभी ने उसे राजा स्वीकार किया। इस घटना के बारे जानकारी

इसमें श्रृंगा ऋषि बंजार की भारथा (निजगाथा) से भी पता चलता है जिसके कुछ अंश नीचे दिये जाते हैं:—

राज सिंघा मेरे बले, जमलूरे बले, हडिम्बा र बले,
18 ठाकुर, बाईस टिक्के, उल्टे जान्हु पड़ले। दलीचा बौन्दी नांहदे।।

(हे राजा राज सिंह मेरी, देवता जमलू तथा देवी हडिम्बा की शक्ति से 18 ठाकुर, 22 टिक्कों (राजपुत्र) ने घुटने टेक दियेऔर तेरी दहलीज पर माथाटेक कर चले गये)।

विजयें

राजा मान सिंह की मृत्यु के पश्चात कुम्हारसैन तथा बुशैहर की सांझी सेना ने सलावनी, बागी तथा लराकरण के दुर्गों पर आक्रमण कर उन्हें जीत लिया। सर्वप्रथम राज सिंह ने तीनों किलों को वापस लेने के लिए युद्ध किया तथा विजय पाई। इसके पश्चात उसने बुशैहर पर आक्रमण किया। बुशैहर सेना को धकेलता हुआ चला गया। जतोगरी के क्षेत्र पर अधिकार किया और सराहन राजधानी को लूटा। वापसी पर राजधानी सराहन का एक पत्थर स्मृति के लिए उखाड़ लाया। उस पर "राजा राज सिंह द्वारा सराहन राज भवन से लाया गया" खुदवाया तथा वजीर के कचहरी के भवन की दीवार में लगवा दिया। यह भवन इस समय राजकीय प्राथमिक पाठशाला सुलतानपुर के अधिकार में हैं। दीवारों पर सीमेंट का पलस्तर करने से यह पत्थर अब दिखाई नहीं देता।

रघुपुर गढ़ विजय

जलोड़ी जोत से कोई दो तीन मील दूर रघुपुर गढ़ था। इस पर मण्डी राजा का अधिकार था। वह बड़े सामरिक महत्व का गढ़ था। जहां से मण्डी के बढ़ने को रोका जा सकता था तथा बाहरी और भीतरी सिराज पर नियन्त्रण रखा जा सकता था। राज सिंह ने आक्रमण कर दुर्ग को घेर लिया। परन्तु मण्डी सेना ने डटकर मुकाबला किया। अन्त में महाराजा कोठी के सैनिक गढ़ पर चढ़ गये और भीतर कूद गये और तीन दिन गढ़ के भीतर घमासान युद्ध चला। कुल्लू सेना अन्त में जीत गई और दुर्ग पर राज सिंह का अधिकार हो गया। इस दुर्ग के अवशेष अभी तक मौजूद हैं। जिनमें पानी का स्रोत सीढ़ियां इत्यादि अभी तक देखें जा सकते हैं। इस विजय के उपलक्ष्य में राज सिंह ने देवी कूटली सोइल को 1729 ई. में एक मोहरा चढ़ाया।

कटौला का युद्ध

दंगयाई मिंयां जो मण्डी का रहने वाला था, को वहां के राजा ने निकाल दिया। वह कुल्लू आ गया और राज सिंह को मण्डी पर आक्रमण के

लिए उकसाया। कहते हैं कि राज सिंह के पास एक जादू का नगाड़ा था जिसके बजाने से सैनिक दोहरे जोश से लड़ते थे और जीतते थे। राज सिंह ने आक्रमण किया। कटौला के पास युद्ध हुआ। राज सिंह हार गया। कण्ढी और कटौला मण्डी राजा के अधिकार में गये। उसने राज सिंह से नगाड़ा भी छीन लिया।

सहायता के लिये प्रार्थना

1721 ई. में सुकेत नरेश जीत सैन की मृत्यु हो गई। गरुड़ सैन उसका उतराधिकारी था परन्तु उसका विरोध मियां और पुरोहित कर रहे थे। ये दोनों उस राज्य में अति शक्तिशाली थे। गरुड़ सैन कुल्लू राजा के पास सहायता के लिये आया। राजा राज सिंह ने उसका पूरा सम्मान किया तथा सहायता का आश्वासन दिया तथा सहायता की। गरुड़ सैन कुल्लू राजा का जीवन भर कृतज्ञ रहा।

गुरू गोविन्द सिंह का आगमन

सिखों के दसवें गुरु पहाड़ी राजाओं से सहायता प्राप्त करने के लिये प्रयत्नशील थे। वह इसी कार्य के लिये कुल्लू भी आये परन्तु सहायता प्राप्त न कर सके। कुल्लू राजा मुगलों से उलझना नहीं चाहता था।

मृत्यु

राजा राज सिंह ने अठारह बर्ष राज किया। 1735 ई. में उसकी मृत्यु हो गई।

राजा जय सिंह (1735–1741 ई.)

राजा जय सिंह 1735 ई. में सिंहासन पर बैठा। वह अति सुन्दर था। परन्तु उतना ही विलासी और निर्दयी था। उस पर एक वेश्या का अत्यधिक प्रभाव था। और उसके कहने पर चलता था। उसके राज्य काल में कुल्लू का पतन होने लगा।

टेढ़ी सिंह तथा कालू वजीर का निर्वासन

ज्योतिषियों ने घोषणा की थी कि टेढ़ी सिंह कुल्लू का राजा बनेगा। इसी कारण उसने टेढ़ी सिंह को जो उसका चचेरा भाई था अपने राज्य से निकाल दिया। वह सिब्बा (ऊना) रियासत में अपने मामा के पास चला गया और वहीं रहने लगा। राजा अपने एक वजीर कालू से जो कि दयार का रहने वाला था, रुष्ठ हो गया। उसे भी अपने राज्य से निकाल दिया। वह सतलुज के पार वायें किनारे पर केपू से उपर किरटी में जाकर रहने लगा।

जनता का विद्रोह

राजा जय सिंह ने जिया के निकट प्रताप पुर में अपने लिये एक राजभवन बनवाना आरम्भ किया। इसके लिये राज्य भर के स्त्री पुरुषों को बेगार पर लगाया। बेगार के लिये गर्भवती स्त्रियों को भी नहीं छोड़ा। यदि इस मध्य स्त्रियां प्रसूता हो जाती तो लड़का होने पर सात दिन की छुट्टी दी जाती। लड़की होने पर बच्ची को मार दिया जाता और मां को काम करने के लिये विवश किया जाता। इससे जनता में रोष फैल गया और निर्वासित वजीर कालू के परामर्श और सहायता से विद्रोह कर दिया।

राजा अपने अधिकारियों के साथ जब काम देखने आया तो किसी ने उसे "जयदेवा" का अभिवादन न किया उसके सभी अधिकारियों और अंग रक्षकों को पकड़ कर सियूण्ड ढग (ढलान) से पार्वती नदी में फैंक दिया। यह घटना 1738 ई. की है। राजा इससे अति निराश और खिन्न हुआ। वापस सुलतानपुर आने पर उसने अपने साथ विश्वस्त 500 साथी लिये और लाहौर मुगल सूबेदार से सहायता मांगने के लिये चल पड़ा। उसके साथ वैश्या भी गई।

लाहौर दरबार में राजा का स्वागत हुआ। उपहारों का अदान–प्रदान हुआ। उसे दरबार की ओर से खिल्लत पेश की गई। उसे सहायता का आश्वासन दिया परन्तु उस समय नादिरशाह भारत पर आक्रमण कर रहा था। इस लिये तुरन्त सहायता न भेजी जा सकी। राजा वहीं रुक गया और सूबेदार का महमान बन कर रहने लगा।

मण्डी सेना का आक्रमण

मण्डी नरेश शमशेर सेन ने राजा जय सिंह की अनुपस्थिति तथा कुल्लू में भीतरी असन्तोष और गड़बड़ का लाभ उठाया और चुहार घाटी पर आक्रमण कर अमरगढ़, देवगढ़, तीरती और हस्तपुर के गढ़ों पर विजय प्राप्त कर ली। और इस प्रकार चौहार घाटी पर उसका अधिकार हो गया।

राज सिंहासन का त्याग

लाहौर में एक दिन राजा जय सिंह को सूबेदार की बेटी ने देख लिया। उसकी सुन्दरता पर वह इतनी मुग्ध हो गई कि उसने जय सिहं से विवाह करने की जिद पकड़ ली। अन्त में सूबेदार ने जय सिंह को बुलाया। उसके क्षेत्र को तुरन्त छुड़ाने के लिए सेना देने तथा मालामाल करने का लालच दिया परन्तु उसे मुसलमान बन जाने और उसकी बेटी से पहले विवाह करने की शर्त रखी। राजा इससे घबरा गया। उसने अपना सारा सामान जयसिंहपुर भिजवा दिया और रातोंरात 50 आदमी साथ लेकर अस्तबल के

सूबेदार की सहायता से भागकर अयोध्या चला गया। ताकि अपना शेष जीवन राम भजन में बिताये। जय सिंह भावुकता में अयोध्या चला गया परन्तु बिलासता से मुंह न मोड़ा। उसने 20 बीघा का रामबाग खरीदा और उसमें रहने लगा। और एक अन्य वैश्या से सम्बन्ध जोड़ लिया।

राजा जय सिंह ने अयोध्या जाते हुये दो चिट्ठियां लिखीं। एक टेढ़ी सिंह के नाम थी जिसमें कुल्लू राज्य उसे सौंप दिया था और बिना किसी भय के राज्य करने को कहा था। और अपने बारे में लिखा था कि वह तीर्थ को जा रहा है। दूसरी चिट्ठी वजीरों और रानियों के नाम थी जिसमें टेढ़ी सिंह की अधीनता स्वीकार करने और सहयोग देने के लिए कहा था। टेढ़ी सिंह सीवा से तुरन्त कुल्लू के लिए चल पड़ा। परन्तु कांगड़ा पंहुचने पर कांगड़ा राजा ने उसे पकड़ लिया। जय सिंह कटोंचों का भानजा था। राजा ने समझा कि जय सिंह की अनुपस्थिति की टेढ़ी सिंह अनुचित लाभ उठाने जा रहा है। चिट्ठी दिखाने पर भी उसे न छोड़ा। अन्त में उसके साथियों ने एक योजना बनाई। रात के समय रज्जूबांठ (एक नौकर) टेढ़ी सिंह के बिस्तर पर सुला दिया गया और टेढ़ी सिंह गोकुल नाम के व्यक्ति की पीठ पर रोगी के रुप में रातोंरात बीड़ भंगाल तक पंहुचाया गया। वहां से वह स्वयं चल कर कुल्लू पंहुचा।

मृत्यु

राजा जय सिंह की प्रथम मार्च 1744 ई. में चेचक से मृत्यु हो गई। वह उस समय दरबार अवध में अतिथि रुप में रहता था।

राजा टेढ़ी सिंह (1741 –1767 ई.)

राजा टेढ़ी सिंह को राज सिंहासन तो मिल गया परन्तु जनता ने उसे आसानी से राजा स्वीकार नहीं किया। राजा जय सिंह के समय विद्रोह के पश्चात दो–दो या तीन–तीन गावों के लोगों ने आपसी परामर्श से अपने–अपने सरदार बनाये जिन्हें "स्याणा" पुकारा जाता था। वे "स्याणे" अपने–अपने क्षेत्र में शासन चलाने लगे। इन स्याणों का मुख्य मोती सिंह था। टेढ़ी सिंह के शासन के पहले दो बर्ष में इन स्याणों का बोलबाला रहा। इन स्याणों से निपटना कठिन था।

स्याणों का अन्त

राजा ने इन से मुक्ति के लिए युक्ति सोची। सभी स्याणों को राजा की ओर से सुलतानपुर में भोज के लिए निमंत्रण दिया गया। भोज में इन्हें खूब शराब पिला कर धुत कर दिया गया परन्तु फिर भी किसी का उन्हें मारने का साहस न हुआ। अचानक स्याणों का मुख्य मोती सिंह थली भण्डार की

मेढ़ पर दिखाई दिया राजा टेढ़ी सिंह स्वयं वहां कुछ साथियों के साथ गया और पंहुचते ही उसे अपनी छड़ी चुभा दी और दूसरे व्यक्ति ने उस पर मुसल से प्रहार कर उसका सिर फोड़ दिया। इससे अन्य को भी साहस बन्धा। कोई 300 स्याणों को नौकरों के साथ मार दिया। शेष पकड़ लिये गये। इन्हें लज्जित किया गया और उनके एक कान में लोहे की और दूसरे कान में चांदी की मुद्रायें डाली गईं। राजा को अपना नेता स्वीकारने पर उन्हें छोड़ दिया गया।

बैरागियों से सहायता

स्याणों के संहार के पश्चात भी शासन पर टेढ़ी सिंह की पकड़ दृढ़ न हुई। इन्हीं दिनों चौमासा बिताने के लिए एक हजार बैरागी पंजाब की ओर से कुल्लू आये। राजा जगत सिंह के समय से ये कुल्लू आया करते थे। राजा के वैष्णव मत अपनाने से इनके चौमासा का पूर्ण व्यय राजकोष से दिया जाता था। और इन्हें बड़ा आदर दिया जाता था। ये बैरागी अच्छे लठैत भी थे। राजा ने शासन पर अपनी पकड़ दृढ़ करने के लिए इन साधुओं की सहायता ली और अपने विरोधियों का इनकी सहायता से सफाया कर दिया।

अखाड़ा बाजार में बस्ती

अखाड़ा बाजार का स्थान उस समय बिल्कुल वीरान था। स्थान–स्थान पर तथा नदी किनारे कोश के वृक्ष थे। ये बैरागी ऊपर के अखाड़े में आकर ठहरे। यहां उनकी दो मूलभूत आवश्यकतायें पूरी होती थीं। बैरागी बार–बार नहाते हैं जिसके लिये नदी थी और इनका धूना सदा जलता रहता है जिसके लिए लकड़ी पर्याप्त थी। ये राम शिला से पीपल के मन्दिर के बीच ही रहते थे। इसीलिये उनके वशंजों के मकान उसी क्षेत्र में हैं। बैरागियों के सात अखाड़े हैं। यहां केवल दिगम्बर, खाकी, दनवाण तथा गुदड़ चार अखाड़ों के बैरागी आकर बसे। ऐसा विचार है कि दनवाण तथा गुदड़ अखाड़ों के स्थानीय नाम है। 1905 ई. में भूंचाल के समय अखाड़ा में बस्ती पीपल से ऊपर ही थी। इन अखाड़ों के कारण कुल्लू का मुख्य नाम अखाड़ा पड़ा।

अखाड़ा बाजार का आरम्भ राम शिला से होता है। इस शिला के साथ हनुमान मन्दिर है। यह किशन दास पेयहारी जी का स्थान भी था। होली उत्सव के समय कुल्लू राजा होली जलूस के साथ आ कर पेयहारी जी के प्रति अपनी श्रद्धा व्यक्त करते थे। शिला के साथ सती घाट था। जहां अन्तिम सती हुई स्त्री बेरागी परिवार से थी। बैरागियों की पंचायत 1525 ई. में स्थापित हुई थी। जिसके पास राजाओं द्वारा दिये गये बड़े रसोई के बर्तन अभी

तक मौजूद हैं। दिगाम्बर अखाड़ा कुछ ऊंचाई पर स्थित था। इसके पास ही खाकी चौक था। रणश्रृंगा जिससे रसोई तैयार की सूचना दी जाती थी भी है। श्री लक्ष्मण का मन्दिर भी उन्हीं से सम्बन्धित है। कलवर्ट ने इस बाजार को लाहुल बाजार कहा क्योंकि उसके समय बस्ती लाहुल वालों की अधिक होती थी।

कांगड़ा राजा द्वारा मान्यता

राजा की प्रशासन पर पकड़ दृढ़ होने से राज्य में शान्ति स्थापित हो गई। टेढ़ी सिंह की सफलता देख राजा कांगड़ा ने उसे चौरी मुठा भिजवा कर मान्यता दे दी। राजा ने अपने सभी साथियों को जागीरें तथा उपहार दे कर पुरस्कृत किया जिन्होंने उसकी राज्य प्राप्ति में सहायता की थी। राजा ने रजूबांठ को नेगी बना दिया। उसे घूमने के लिये एक पालकी भी दी।

नकली जय सिंह का राज्य के लिये प्रयास

राजा टेढ़ी सिंह की एक कठिनाई समाप्त होने पर दूसरी खड़ी हो जाती थी। जय सिंह के लाहौर से भागने पर उसके साथ गई वैश्य जब वापस आ रही थी तो मण्डी राजा ने उसे रोक लिया। एक साधू जो जय सिंह की शक्ल का था उसे जय सिंह के रहन सहन का ढंग वैश्य द्वारा मण्डी राजा की आज्ञा से सिखाया। वह जय सिंह की पूरी नकल उतारने लगा और लाहौर के साथियों के नाम भी उसे याद करा दिये गये। फिर तीन सौ सैनिक दे वैश्या के साथ उसे पंडोह पार कराया। साधू ने अपने को राजा घोषित किया और तपाही के स्थान पर पड़ाव डाले बैठा रहा। बाहर के लोगों से मिलने के समय वह पर्दे के साथ बैठता जिसके पीछे वह वैश्या बैठती। आने वाले का परिचय वह नकली जय सिंह को पहले ही दे देती और उसी अनुसार बात करता। यह तरीका इतना सफल हुआ कि लोगों को विश्वास हो गया कि वह जय सिंह है। लोग उसे नजराने देते। आरती उतारते और सहायता देने का आश्वासन देते। वह एक पड़ाव से दूसरे तक इस प्रकार सफलता से आगे बढ़ता हुआ पलाइच (बन्जार) तक पंहुचा। तब इस षड़यन्त्र की जानकारी टेढ़ी सिंह को मिली। उसने नकली जय सिंह होने की बात लोगों को बताई परन्तु किसी ने उस ओर ध्यान न दिया।

यह अभियान अब विद्रोह का रुप धारण कर रहा था। नकली जय सिंह लोगों के साथ चलता हुआ पणिहार सैंज से भलाण जा पंहुचा। इतने में जय सिंह की मृत्यु हो गई और उसके आधे साथी राजा के फूल हरिद्वार डाल कर कुल्लू लौट आये। आधे गया में इसी कार्य के लिये गये। उनका कुल्लू पंहुचना टेढ़ी सिंह के लिये वरदान सिद्ध हुआ। नकली जय सिंह अपने लश्कर

के साथ हाट बजौरा पंहुचा। टेढ़ी सिंह ने वापस आये लोगों में से जिन्दु पुरोहित और श्याम काईथ को पूछताछ करने भेजा। उन्होंने लाहौर से भागने के बाद के समय के प्रश्न पूछे जिनका रण्डी और नकली जय सिंह को कोई जानकारी न थी। यह पुछे जाने पर कि लाहौर से भागने पर कहां--कहां ठहरे। उसने उतर दिया कि उसे याद नहीं। यह बात ऐसी थी जिसे भूला नहीं जा सकता था। लोगों ने उसे पकड़ लिया। मण्डी के सैनिकों पर टूट पड़े और उन्हें मार डाला। साधू और रण्डी की खूब पिटाई की और हाट पतन पार कर उन्हें कुल्लू लाया। इस प्रकार एक बड़े षड्यन्त्र तथा विद्रोह का अन्त हुआ। राजा जय सिंह की रानियां राजा की मृत्यु के बारे में जानकर उसकी कटार के साथ सती हो गई।

कांगड़ा राजा का आक्रमण

इस समय तक मुगल सत्ता क्षीण हो गई थी और अहमद शाह दुरानी के घमण्ड चन्द राजा कांगड़ा को जालन्धर दोआब का सूबेदार नियुक्त किया था। वह सारे आस पास के राजाओं पर अपनी प्रभूसता जमाने का प्रयास कर रहा था। उसने मण्डी पर आक्रमण कर विजय प्राप्त की। फिर राजा की सहायता से दुलची जोत पार कर 1765 ई. में कुल्लू पर आक्रमण किया। शमशी में कुल्लू और कांगड़ा सेना में घमासान युद्ध हुआ। उन दिनों भारी बर्षा हुई। जिस कारण घमण्ड चन्द को आगे बढ़ने में भी कठिनाई हुई। पीछे से सैनिक सहायता भी न मिली वह लौटने पर मजबूर हो गया। वह कुल्लू राजा से कर प्राप्त न कर सका। इस आक्रमण का वर्णन मूरक्राफ्ट ने भी अपने यात्रा संस्मरणों की प्रथम पुस्तक में पृष्ठ 170 पर किया है। घमण्ड चन्द आसानी से हार मानने वाला न था। परन्तु उसी समय सिक्खों ने जस्सा सिंह राम गढ़िया के अधीन दोआब में हस्तक्षेप करना आरम्भ कर दिया था। जिसका समाचार पाकर घमण्ड चन्द सेना सहित लौट गया था।

लाहुल के शासन में फेरबदल

राजा टेढ़ी सिंह 1760 ई. में लाहुल के अन्य दो ठाकुरों को गोंधला के ठाकुर के अधीन लाया। गोंधला में उस समय दो भाई रूप चन्द तथा सेवादास राजा की ओर से शासन चलाते थे। इस बात का पट्टा अभी भी उस परिवार के पास है। गोहरमा के हाकिम ने राजा टेढ़ी सिंह के समय रघुनाथ जी की चांदी की पालकी शांशा के सुनारों से बनवाकर भेजी थी। रानी की मनौती पूरी होने पर रघुनाथ जी की चांदी की झरी जो अभी भी मन्दिर में काम में लाई जाती है, इन्हीं सुनारों ने कुल्लू आकर बनाई थी।

मृत्यु

इसके पश्चात टेढ़ी सिंह के राज्य में शान्ति रही। उसने 33 वर्ष राज्य किया। उसकी मृत्यु 10 जनवरी 1767 ई. को हुई। उसके साथ 64 रानियां सती हुईं जिनकी स्मृति में लगे बरसैले नगर में विद्यमान है।

राजा प्रीतम सिंह (1767–1806 ई.)

सिंहासन आरोहन

राजा टेढ़ी सिंह के कुल अठारह लड़के हुए परन्तु उसकी मृत्यु के समय केवल तीन ही जीवित थे। प्रीतम सिंह, चरण सिंह तथा प्रेम सिंह। ये तीनों भी रानियों के गर्भ से न थे। इसीलिये सिंहासन के लिए प्रेम सिंह भी दावेदार बन गया। वह राजा का सबसे छोटा पुत्र था और सारे उसकी सहायता कर रहे थे। प्रीतम सिंह सबसे बड़ा पुत्र था। इसलिए सिंहासन का उतराधिकारी था। सभी मन्त्री तथा अन्य जाति के लोग इसके साथ थे। अभी प्रेम सिंह सिंहासन हथियाने की योजनायें ही बना रहा था कि प्रीतम सिंह को उसके साथियों ने तुरन्त सिंहासन आरोहन करा दिया। जिससे प्रेम सिंह के साथी हतोत्साहित हो गये। तीसरे बेटे चरण सिंह ने सिंहासन के लिए कोई हक नहीं जताया। वह गराहण में ही रहा।

मण्डी पर आक्रमण

सिंहासन आरोहन के पश्चात उसने मण्डी पर आक्रमण किया और देवगढ़, हस्तपुर, सरी तथा अमरगढ़ के किलों पर अधिकार कर लिया। बदले में मण्डी सेना ने कण्ढी के रास्ते आक्रमण किया तथा बजौरा में घमासान युद्ध हुआ। लाहुल के सैनिक अपने नाईक गीफैंग के नेतृत्व में लड़े तथा मण्डी सेना को हराया।

बुशैहर के साथ संघर्ष

बुशैहर के राजा ने बाहरी सिराज के सिरीकोट पर आक्रमण किया और वहां के दुर्ग पर अधिकार कर उसे गिरा दिया। बदले में कुल्लू सेना ने गामें पर आक्रमण किया और दुर्ग पर अधिकार किया और गिरा दिया। बुशैहर का वजीर रंजीत था तथा कुल्लू का वजीर अंगद था। दोनों बड़े बुद्धिमान थे और मित्र थे। दोनों ने प्रयत्न कर राजाओं में आपसी मित्रता करा दी और वह आपसी समझौता से निर्णय लिया गया कि गिराये गये दुर्गों का पुर्ननिर्माण दोनों पक्ष न करें।

सेना चम्बा का आक्रमण

1778 ई.(एक माघ विक्रमी सम्वत 1834) में चम्बा, मण्डी तथा कांगड़ा के राजाओं ने समझौता कर भंगाल जो उस समय कुल्लू के अधीन था पर सांझा आक्रमण कर जीतने का निर्णय लिया। समझौता पत्र टांकरी में लिखा है और भूरी सिंह संग्राहलय चम्बा में है। कांगड़ा में संसार चन्द और चम्बा में राज सिंह और मण्डी में शमशेर सैन राजे थे। मण्डी राजा का बेटा सूरमा सैन था। तीनों की सेनाओ ने इकट्ठे आक्रमण करना था। चम्बा राज्य की सीमायें उस समय धौलाधार तक थीं और दुर्ग पठयार में उसकी सेनायें थी। ऐसा लगता है कि चम्बा ने भंगाल पर आक्रमण किया। बीड़ पठियार का किला तथा धौलाधार का दक्षिणी भाग जीता। और उस पर अधिकार किया। समझौते अनुसार विजय होने पर भंगाल को बराबर बांटा जाना था। भंगाल अधिग्रहण पर मण्डी राजा ने आपत्ति जताई थी। चम्बा अभिलेख में राजा प्रीतम सिंह का चम्बा राजा को लिखा एक पत्र मौजूद है। जिस मे भंगाल वापसी तथा बन्दी बनाये गये बजीर भाग चन्द को छोड़ने के बारे में लिखा था। दूसरे पत्र (1776 ई.) में वजीर भाग चन्द को छोड़ने के लिए 15000रुपये देने और तुलसी राम और जस्सी राम को उसके बदले रखने के बारे में लिखा था। 1786 ई. का एक और समझौता कहलूर (बिलासपुर) मण्डी तथा चम्बा के राजाओं का मकड़सा (कुल्लू) पर आक्रमण करने का है। परन्तु इस समझौते पर कोई कार्यवाही न हुई। ऐसा लगता है कि प्रीतमसिंह की प्रार्थना पर भाग चन्द को छोड़ दिया गया। 1785 ई. में संसार चन्द ने भंगाल के राजा मान पाल की लड़की से विवाह किया। उसने भंगाल के राजाओं को अपनी सेनायें दी। मण्डी पर आक्रमण किया परन्तु सफलता न मिली।

कांगड़ा सेना का आक्रमण

1786 ई. में राजा संसार चन्द द्वितीय ने कांगड़ा दुर्ग प्राप्त किया। उसके पास 4000 रुहेलों, अफगानों तथा राजपूतों की सेना थी। उसने सभी पहाड़ी रियासतों से कर लेने तथा अपने अधीन करने का कार्य आरम्भ किया। 1788 ई. में उसने मण्डी विजय किया तथा कर प्राप्त किया। फिर दुलची जोत के रास्ते कुल्लू पर चढ़ आया। अभी यह बजौरा तक ही आया था कि राजा प्रीतम सिंह ने उसे 20000 रुपये नजराना प्रस्तुत किया और अपने वजीर अंगद को संसार चन्द के दरबार में वकील बना कर भेजा। अंगद बड़ा बुद्धिमान था ओर संसार चन्द उसका बड़ा आदर करता था। राजा संसार चन्द को नजराने में घोड़े, चंवर तथा कस्तूरी भी दिये गये। नकद राशि के लिये

चन्दु कारदार की सम्पति बेची गई। चन्दु कारदार निसन्तान मरा था। उतराधिकारी न होने पर सम्पति का अधिकार राजा को उस समय के नियमानुसार मिलता था।

चुहार घाटी पर विजय

संसार चन्द की आज्ञा प्राप्त कर प्रीतम सिंह ने आक्रमण कर चुहार घाटी का क्षेत्र और दुर्ग अमरगढ़, देवगढ़ सरती तथा हस्तपुर दुर्ग 1792 ई. में मण्डी राजा से वापस लिये। इन दुर्गों को वापस लेने के लिये कुल्लू सेना ने एक बर्ष तक घेरा डाले रखा। राजा ईश्वर सैन स्वयं संसार चन्द की कैद में था। प्रीतम सिंह संसार चन्द को प्रत्येक बर्ष गूंठ, चंवर, कस्तूरी इत्यादि नजराना के रुप में भेजता रहा जिस कारण वह कुल्लू राजा पर कृपा दृष्टि रखता रहा। संसार चन्द की मण्डी आक्रमण में सुकेत और कुल्लू के राजाओं ने सहायता की थी।

कांगड़ा पर आक्रमण की योजना

ऐसा प्रतीत होता है कि प्रीतम सिंह बाद में संसार चन्द से इतना तंग आया कि 1801ई. में उसने चम्बा के राजा जीत सिंह को एक पत्र लिखा और उसे इकट्ठे आक्रमण करने के लिए उकसाया। यह पत्र भूरी सिंह संग्राहलय चम्बा में है। परन्तु दोनों राजा एक दूसरे पर संदेह करने और संसार चन्द के बदले के डर से कोई कार्यवाही न कर सके। उस समय संसार चन्द बड़ा शक्तिशाली था।

सिक्कों का प्रचलन

राजा प्रीतम सिंह ने अपने समय में औरगंजेब सम्राट के नाम से सिक्कों का प्रचलन भी किया। मणीकर्ण राम मन्दिर छत में लगी सारी चांदी तथा टेढ़ी सिंह की माता के भण्डार की सारी चांदी से एक टकसाल चलाई। जिसमें रूपया, चवन्नी, दव्वनी के सिक्के बनाये। ये सिक्के दिल्ली के सिक्कों से छोटे और कम तोल के थे, ताकि पहचाने जा सकें। इस पर लिखा था "दर जहां सिक्का जद चोवदार मुनीर शााहे औरगंजेब आल्मगीर" अर्थात–बादशाह औरगंजेब आल्मगीर जो पूर्णिमा के चन्द्रमा के समान प्रकाशमान है, ने मुद्रा निर्माण कराया। टकसाल के सुनारों का मुख्य नेगी इसरू था। ये सिक्के कुछ समय के पश्चात लुप्त हो गये। राजा दलीप सिंह के समय गेहरू पुत्र धर्म सिंह गांव चैहणी के पास एक रूपये का अन्तिम सिक्का देखा गया।

कराहड़ा नेगी का उत्पात

रामपुर (बरामगढ़) का नेगी कराहड़ा बड़ा शक्तिशाली तथा बहादुर था। वह आठ व्यक्तियों के बराबर शक्ति रखता था। उसकी एक छोटी सेना भी थी वह मनमानी लूटपाट करता था जिससे जनता बड़ी दुखी थी। सीधे उससे जूझने का किसी में साहस न था। अतः राजा ने उसे चुपके से बुला कर वध करवा दिया।

सीसा धातु की खान

1781 ई. में जरी के पास एक सीसा धातु की खान मिली। इस खान की जानकारी पटाधि के देवता लक्ष्मी नारायण ने दी। इसके बदले में राजा ने देवता को ;मुआफीद्ध जागीर दी।

राजा के कुछ शौक

भवन निर्माण

राजा प्रीतम सिंह को भवन निर्माण का बड़ा शौक था। उसने कई भवन बनवाये। वर्तमान राजभवन में कई परिवर्तन कर नया रुप दिया। भवनों को पसन्द न आने पर गिरा कर पुनः निर्माण कराया। उसने बंगला भवन को तीन बार बनवाया और पसन्द न आने पर गिरवाया। चौथी बार फिर जब ऐसा करने लगा तो उसके बेटे मान सिंह ने उसे अपने लिए मांग लिया। इस पर राजा बड़ा क्रोधित हुआ क्योंकि उसके बेटे ने उसके कार्य में टांग अड़ाई थी। बंगला राजभवन की सुन्दरता बारे लाहुल के लोकगीत पुष्टि करते है। उसने कई मन्दिरों को अनुदान दे, उनकी अवस्था को सुधारा।

कला प्रोत्साहन

17वीं तथा 18वीं शताब्दी में दिल्ली में अफरातफरी का वातावरण था। इसलिये बहुत से कलाकार इन पहाड़ों की ओर आये। राजा प्रीतम सिंह के समय अकबर के समय का चित्रकार "भगवान" कुल्लू आया था। उसने राजभवन में कुछ चित्र बनाये और मधुमालती सचित्र प्रेम कथा में चित्र चित्रण किया। कुल्लू साहित्य प्रोत्साहन के कारण से, इसके समय, पर्याप्त मात्रा में रचा गया।

राजा के दोष

राजा कान का बड़ा कच्चा तथा बिन विचारे कार्य करने वाला था। उसने चुगली करने पर कई लोगों को बिना छानबीन किये मृत्यु दण्ड दिया। दस रानियों में दो रानियां जमूआली तथा कटोची थी। कटोची ने राजा के पास

जमूआली के दुश्चरित्र होने की चुगली की। राजा ने बिना सोच विचार के रामगढ़ रायसन में उसे जीवित दबाने की आज्ञा दी। परन्तु बाद में जब सच्चाई सामने आई तो राजा ने उसके शव को निकलवाया और थरमान में उसका दाह संस्कार करवाया। इसके पश्चात रानियों के दाह संस्कार का स्थान वही माना गया। उसे सती का दर्जा दिया। उसकी स्मृति में एक तालाब बनवाया और उसमें उसकी मूरत रखी और जुआनी महादेव की मुआफी से कुछ भूमि काट कर सती की पूजा अर्चना के लिए दी। मूर्ति पर 25 फाल्गुन सम्वत 73 लिखा है। रानी को सती माना गया। उस के साथ कहावत है:–"न्योली रानी ताजा लकड़ी ताजा पानी"। सती के प्रभाव से कई चमत्कार जुड़े है। मंदिर के कार्य में गीली लकड़ी भी जलती है तथा वहां सदा ताजा पानी मिलता है।

ये अब न्योली रानी के मन्दिर के नाम से प्रसिद्ध है। राजा के कान के कच्चे होने की पुष्टि लाहौल के कैता माया राम की लोक गाथा से भी होती है। उस समय लाहुल का मुख्यालय तांदी में था जहां एक बजीर, कानूनगो और एक अधिकारी नियुक्त थे। गोहरमां में "कान्हा" तथा फुड़ा में "पुम्बा" अन्य राज अधिकारी थे। जुण्ढा निवासी कैता माया राम अपनी सज्जनता तथा योग्यता के कारण अति लोकप्रिय था। राजा अधिकारी उससे ईर्षा करने लगे। उन्होंने राजा के पास माया राम की झूठी चुगली की। राजा ने उसे दण्ड देने के लिए कुल्लू राज दरबार में बुलाया। माया राम ने झूठे आरोपों पर सजा पाने के डर से, शांशा मेले में सबसे मिलने के पश्चात, आत्महत्या कर ली थी। उस पर राज द्रोह का आरोप लगाया गया था।

मृत्यु

राजा प्रीतम सिंह ने 39 बर्ष राज्य किया। उसकी मृत्यु प्रथम दिसम्बर 1806 ई. में हुई। उसके साथ 35 स्त्रियां सती हुई जिनमें 10 रानियां थीं। राजा प्रीतम सिंह के समय प्रजा सुखी थी। राज्य स्मृद्ध था। उसने कुछ स्थाई सेना भी रखी थी। जिसमें सैनिक लाहुल, रूपी, लगघाटी तथा कुल्लू से थे। लाहुल टुकड़ी का झण्डा देवता घेपन का होता था।

राजा विक्रम सिंह (1806–1816 ई.)

मण्डी सेना से युद्ध

विक्रम सिंह के सिंहासन पर बैठते ही मण्डी सेना का चुहार घाटी पर आक्रमण हुआ और देवगढ़, हस्तपुर आदि दुर्गों पर अधिकार कर लिया। अमरगढ़ को भी मण्डी सेना ने घेरा। परन्तु इस दुर्ग में कुल्लू सेना की अधिक संख्या थी और दुर्ग भी दुढ़ था। सेना की कमान चरण सिंह ब्राह्मण के पास थी। घमासान युद्ध हुआ। मण्डी सेना के दो नायक राय सिंह और बालक

सिंह मारे गये और बड़ी हानि हुई। अन्त में मण्डी सेना हार कर लौट गई और अमरगढ़ दुर्ग कुल्लू राजा के पास रहा। अवसर देख कुल्लू सेना ने मण्डी सिराज पर आक्रमण किया और बड़ा गढ़ जीता परन्तु तीन बर्ष पश्चात मण्डी सेना ने इसे वापस जीत लिया।

गोरखों से युद्ध

इस समय तक गोरखों ने अपना राज्य विस्तार आरम्भ कर दिया था। उन्होंने सतलुज पार के क्षेत्र अपने अधीन कर लिये। कुल्लू राज्य का हाट का दुर्ग तथा अन्य क्षेत्र भी अपने अधीन कर लिये। शांगरी कींगल का दुर्ग तथा उसके क्षेत्र भी जीत लिया। बाद में कुल्लू राजा ने मनीराम वजीर तथा नायक झगडू के अधीन 5000 सैनिक गोरखों से युद्ध के लिये सतलूज पार भेजे। गोरखों का सेनापति कीर्ति राणा था। कुल्लू सेना ने गोरखों से अपना सारा क्षेत्र छुड़ा लिया। इसके लिये अग्रेंजो के साथ सांझा मोर्चा बनाया गया था। इसमें बुशैहर तथा सिरमौर की सेनायें भी सम्मिलित थीं।

सिक्खों का कुल्लू पर प्रभुत्व

1804 ई. में राजा संसार चन्द ने कहलूर (बिलासपुर) पर आक्रमण किया। इससे सभी पहाड़ी राजा डर गये और आपसी परामर्श के पशचात गोरखों के सेनापति अमरसिंह को कांगड़ा पर आक्रमण करने के लिए आमन्त्रित क्रिया और उसे हर प्रकार से सहायता दी। अमर सिंह ने सतलुज को पार कर 1805 ई. में आक्रमण किया। संसार चन्द घिर गया और कांगड़ा दुर्ग में शरण ली। अमर सिंह ने दुर्ग घेर लिया और यह घेरा चार साल तक चला। संसार चन्द ने सिक्खों से सहायता मांगीं। सहायता के अनुसार संसार चन्द ने कांगड़ा किला छोड़ा। सिक्खों की अधीनता स्वीकार की और अपने अधीन राज्यों का प्रभुत्व भी सिक्खों को दे दिया। कुल्लू राजा भी संसार चन्द को कर देता था। अतः कुल्लू भी इस प्रकार 1809ई. में सिक्खों के प्रभुत्व में आ गया और वह सिक्खों को कर देने लगा।

सिक्खों से टक्कर-एक पटाका खेल

सर्व प्रथम सिक्ख सेना कर उगाहने के लिए 1812 ई. में सरदार देसा सिंह के अधीन कुल्लू आई और 40,000 रुपये कर में प्राप्त कर लौट गई। 1814 ई. में दीवान माहकम चन्द के अधीन सिक्ख सेना कर उगाहने फिर आई। इस सेना के साथ सीवा, कुटलैहड़, मण्डी, जसवां, कांगड़ा तथा चम्बा के वज़ीर भी थे। जब सिक्ख सेना बजौरा पंहुची तो राजा ने वजीर सोभा राम, कर्मदास, मोतीराम कायथ तथा कर्ण दीवान को कर निश्चित करने

के लिये भेजा। कर 50,000 रुपये निश्चित हुआ। परन्तु राजा इस कर को देना न माना। सोभा राम ने राजा को बताया कि सिक्खों की सेना में एक लाख सैनिक हैं जबकि उनकी सेना में चार–पांच हजार सैनिक थे। मुकाबला होना असम्भव है। परन्तु राजा अपनी बात पर अड़ा रहा। उसने बड़ागढ़ के लोगों से परामर्श किया और बोला, "एक पटाका खेल"। अर्थात एक बार तो जूझना ही चाहिए। राजा जानता था कि उसे अपनी भौगोलिक स्थिति का लाभ मिलेगा।उसने सिक्ख सैनिकों की क्षमता का ठीक अनुमान नही लगाया था।

सिक्खों को जब जानकारी मिली तो सेना बजौरा से सुलतानपुर चली आई। राजा भेखली (साथ की पहाड़ी) को भागा। सिक्ख सेना ने राजकोष तथा भवन लूटा। तोड़–फोड़ की। सुलतानपुर लूटा तथा लोगों से नृशंसता का व्यवहार किया। राजभवन का एक भाग जला दिया। फिर भेखली पर आक्रमण किया। राजा दुआड़ा होता हुआ नगर पंहुचा और सोभा राम को सिक्ख सेना की वापसी के लिये सब कुछ करने के लिये कहा। सोभा राम के साथ क़र्मदास, जगतराम, गेहरु, राम सहाये, मोती कायथ, रामदास, सेसू, मनीराम वकील, भीमी राम, ब्राह्मण भिसू और मिंया झगडू और संगत राम बातचीत के लिये गये। उन्होंने दो लाख सेना का व्यय, एक लाख मोहकम चन्द को रिश्वत तथा तीन लाख कर दिया। धन लेकर सिख सेना लौट आई। दो लाख राजकोष से तथा एक लाख गुसाई इलाईची गिर से उधार लिये। जिसके लिये उसने कई लोगों को अपने पास बन्धक रखा। बन्धकों को लेकर वह मण्डी चला गया। रुपया मिलने पर ही उसने बन्धकों को छोड़ा। सिक्ख सेना ने लोगों के घरों और दुकानों को लूट कर कोई दस लाख रुपया और प्राप्त किया। इस प्रकार एक पटाका खेल में बीस लाख की हानि हुई। इसके पश्चात कुल्लू के राजे सिक्खों को बीस बर्ष तक कर देते रहे।

अंग्रेजों का हस्तक्षेप

इन्हीं दिनों में एक्टर लोनी के अधीन अंग्रेजी सेना राजगढ़ पंहुचीं। कुम्हार सेन के राणा ने तुरन्त अंग्रेजों की अधीनता स्वीकार कर ली और कुल्लू राजा को कर देना बन्द कर दिया। अतः अंग्रेजों की ओर से कुल्लू राजा को भी शांगरी तथा कींगल के अतिरिक्त सभी क्षेत्र छोड़ने की आज्ञा मिली तथा गोरखों के विरुद्ध सहायता करने के लिये कहा। कुल्लू राजा ने वैसा ही किया। उसने वागी इत्यादि का क्षेत्र खाली कर दिया। गोरखों को सतलुज के दाहिने किनारे पर आने न दिया। अंग्रेजी सेना की सहायता की और अपनी सेना को बाहरी सिराज सतलुज के इस ओर बुला लिया। इसके बदले में अंग्रेजी सरकार ने कुल्लू राजा को शांगरी की सनद तथा इनाम

5,000 रुपये दिये। परन्तु रणजीत सिंह इस कार्यवाही से रुषट हो गये। उन्होंने अंग्रेजों की सहायता करने उनसे धन प्राप्त करने और युद्ध में हस्तक्षेप करने के लिये 50,000 रुपये जुर्माना किया। 1815 ई. में गोरखों की हार हुई और सतलुज के पार के सारे क्षेत्र सगौली की सन्धि के अनुसार ब्रिटिश सरकार के अधीन आये। अंग्रेजों ने गोरखों को नेपाल तक भगाया।

काबुल के शाह शुजहा का आगमन

काबुल का शाह शुजहा रणजीत सिंह के कैद से 1815ई. में भागा था और किशतबाड़ जम्मू में छुपा रहा। रणजीत सिंह को पता चला तो क़िशतबाड़ के राजा को उसे सौंपन के लिये लिखा।शाहशुजहा पत्र पंहुचते ही भागा और जसकर बारालाचा रोहतांग से होता हुआ कुल्लू पंहुचा।राजा विक्रम सिंह ने रायसन में उसका स्वागत किया। उसे तीन सौ अशरफियां भेट कीं। उसे पूरा सम्मान दिया तथा हर पड़ाव पर उस का प्रबन्ध किया।वह पलाइच, जलोड़ी होता हुआ शिमला अंग्रेजों की शरण में चला गया।जब महाराजा रणजीत सिंह को इसका पता चला तो कुल्लू राजा पर शाहशुजहा की सहायता करने के लिये रुपये 80,000 जुर्माना किया जो बिना किसी आपति के दे दिया गया।रणजीत सिंह का यह भी आरोप था कि उसे क्यों नही पकड़ कर उसे सौंपा।

उतराधिकारी की नियुक्ति

विक्रम सिंह का पुत्र जीत सिंह 19 दिसम्बर 1810 ई. को उत्पन्न हुआ था। सिक्ख सेना के व्यवहार से राजा को इतनी ठेस लगी कि वह बिमार पड़ गया। उसे लगा कि वह अधिक देर नहीं जियेगा। इसीलिये एक दिन मुहूर्त निकाला और प्रमुख व्यक्तियों के सामने रघुनाथ मन्दिर में गुसाई रामलाल के हाथों चन्दन टिका कर जीत सिंह को उतराधिकारी घोषित किया।

मृत्यु

अक्तुबर 1816 ई. में राजा विक्रम सिंह की मृत्यु हो गई। मृत्यु से पूर्व उसने अपने छोटे भाई किशन सिंह को बुलाया और उसे बेटे का संरक्षक बनने के लिये कहा। परन्तु किशन सिंह न माना। उसने केवल यह वचन अवश्य दिया कि राज्य प्राप्ति के लिये वह स्वयं कुछ नहीं करेगा। विक्रम सिंह ने केवल 11 बर्ष राज्य किया। उसके साथ 30 स्त्रियां सती हुई।

राजा जीत सिंह (1816–41)

सिंहासन आरोहन

राजा विक्रम सिंह ने जीत सिंह को अपना उतराधिकारी घोषित किया था परन्तु वह वैध रानी से उत्पन्न न हुआ था। वह अभी 6 बर्ष का बालक था। रानियों ने उसका विरोध किया। परन्तु सोभा राम वजीर ने जीत सिंह की रक्षा की और उसे अजूध्यावासी राम विलास गोसाई से राम चन्द्र जी के मन्दिर में राज तिलक करवा दिया। मण्डी राजा इसरी सैंन उस समय उपस्थित थे। उन्होंने उसका स्वयं चौरी मुठा किया। राजा सुकेत की ओर से इसी कार्य के लिये वजीर भेजा गया था। इससे संसार चन्द कांगड़ा नरेश नाराज हो गया। चौरी मुठा का पहला अधिकार राजा कांगड़ा को था। यही परम्परा थी। कांगड़ा राजा ने इस कार्य के लिये अपने वजीर नोरंग और पुरोहित को भी भेजा था। परन्तु उनके पंहुचने से पूर्व सिंहासन आरोहन जल्दी में कर दिया गया था। इससे संसार चन्द ने अपना अपमान समझा और बदले की तलाश में रहा।

किशन सिंह का विरोध

जीत सिंह के राजा बनने का विरोध किशन सिंह भी कर रहा था। भविष्य के षड्यन्त्र रोकने के लिये सोभा राम ने बदाह के राज भवन को जिसमें किशन सिंह रहता था अपने आदमियों को भेज कर लूटवाया। किशन सिंह शेष धन और अपने परिवार को ले कांगड़ा भाग गया।

सोभा राम बालक जीत सिंह के नाम से सारा राज्य चला रहा था। उसकी नेगी केशव राम वजीर लग सारी से अनबन हो गई। इसलिये उसे वैरकोट के दुर्ग में बन्दी बना लिया और बाद में मार दिया। केशवराम के सम्बन्धी भी सोभाराम से बदला लेने का अवसर ढूंढ रहें थे। किशनचन्द और केशवराम के सम्बन्धियों ने राजा संसार चन्द की सहायता से एक सेना तैयार की और सितम्बर 1820 ई. में कुल्लू पर आक्रमण कर दिया। जीत सिंह राजा उस समय केवल 10 बर्ष का था। सोभा राम राजा के साथ भाग कर कोटाधार (मण्डी) पंहुचे। सोभाराम ने जोगू ब्राह्मण और सिहारदास के हाथ एक केसर की और एक सियाही की कटोरी राजा मण्डी को भेजी। सारे हालात बताने के बाद कटोरियां प्रस्तुत की गईं। जिसका अर्थ था कि आपने रजतिलक कराया है। अब सहायता करें नही तो दोनों का मुंह काला होगा। राजा मण्डी ने केसर कटोरी में केसर डाला जिसका अर्थ था राजतिलक किया। राजा ही बनाये रखूंगा। तुरन्त मण्डी से 12 हजार सेना सहायता के लिये आई। सुकेत राजा ने भी सेना भेजी। सुरक्षा के लिये सोभाराम ने राजा जीत सिंह को बाघल भेज दिया। जीत सिंह को अर्की की क्षेत्र बड़ा भाया। उसने अपना

प्रवास वहीं रखा और बाजार में एक मन्दिर बनवाया जो वहां अभी भी मौजूद है।

सोभाराम ने लाहौर महाराजा रणजीत सिंह को आक्रमण के बारे में सूचना देने महन्त मणीगिर को भेजा था। वहां से भी इन दोनों राजाओं को सहायता देने की आज्ञा मिली थी। सरी तथा भूभू जोत से मण्डी सेना आई। किशन सिंह की सेना सब ओर से घिर गई। गोरु डूग में किशन सिंह पकड़ा गया। जगतसुख में तथा बाद में मूंग (पलाइच) के दुर्ग में बन्दी रखा गया। उसकी वहीं मृत्यु हो गई। किशन सिंह ने 90 सेनाधिकारियों को पकड़ कर नगर में फांसी दी। शेष सैनिकों को नंगा कर छोड़ दिया। वे घास की लंगोटियां लगा भागे। मण्डी राजा ने इस सहायता के बदले चुहार घाटी के दो दुर्ग लिये जिसमें एक दुर्ग अमरगढ़ भी था। राजा संसार चन्द ने किशन सिंह के परिवार को वेसहारा देख द्रमण के निकट राजगिरि में जागीर दी। राजा मण्डी इसरी सैन ने किशन सिंह के एक साथी गुसाई प्रधान गिर को बचा लिया। उसे अपने साथ मण्डी ले गया। 1820 ई. में सोभाराम की देख रेख में कुल्लू सेना ने स्पिति पर आक्रमण किया और लूटा। स्पिति के लोगों ने कोई प्रतिरोध नहीं किया। वे ऊंचाईयों पर भाग गये। की गोम्पा भी कुल्लू के अधीन आ गया। यह आक्रमण प्रीणी जोत लांघ कर किया गया।

मण्डी तथा धामी विजय

राजा जीत सिंह को अर्की इतना पसन्द आया था कि उसे पाने के लिये 1822 ई. में खनेटी, कुमारसैन तथा अपनी सेना के साथ भज्जी तथा धामी पर आक्रमण कर उसे हराया।

मुरक्राफ्ट का आगमन

1820 ई. में ही लद्दाख जाते हुए मूरक्राफ्ट कुल्लू से गूजरा। राजा ने उसे बड़ा आदर दिया। उसके स्वागत के समय उसको कुछ अशरफियां भेंट की। बदले में उसने दूरवीन और अंग्रेजी बाजा के उपहार दिये। उसे सीमा के बाहर ससम्मान विदा किया। मूरक्राफ्ट ने अपनी डायरी के लिखा है कि उसके समय कुल्लू में सिखों को कर देने के लिये "फांट" ली जा रही थी जिसका दर प्रति परिवार 6 रुपये था। सिक्खों को प्रति बर्ष 50,000 रुपये कर के रुप में दिये जाते थे। उसने सोभा राम वजीर की प्रशंसा में लिखा है कि वह बड़ा बुद्धिमान व्यक्ति था।

क्योंथल पर आक्रमण

इस जीत से प्रोत्साहित होकर जीत सिंह ने क्योंथल पर आक्रमण किया। अर्की से लगभग 15 कि.मी. की दूरी पर कथोलग और ग्लोग के मध्य स्थान पर युद्ध हुआ। इस युद्ध में जीत सिंह हार गया। उसने भाग कर मण्डी

में शरण ली। बाघल के राजा ने इस के पश्चात जतोग का क्षेत्र अपने अधिकार में ले लिया।

राजा जीत सिंह का पुनः कुल्लू पर अधिकार

किशन सिंह की सेना को हराने तथा कुल्लू पर अधिकार करने के लिये राजा जीत सिंह को 2वर्ष का समय लग गया।1823 ई. में संसार चन्द की मृत्यु हो गई। जिससे किशन सिंह का पक्ष कमजोर हो गया। संसार चन्द के पश्चात उसके बेटे अनिरूद्ध को भी गद्दी 5 मास के पश्चात छोड़नी पड़ी। जीतसिंह ने इसका लाभ उठाया और कुल्लू की गद्दी मण्डी राजा की सहायता से पुनः प्राप्त की।

कपूरु वजीर का विद्रोह

19 बर्ष के लगभग राज्य का कार्य ठीक चलता रहा। राजा अब युवक हो गया था। मुख्य वजीर अब सोभाराम के स्थान पर तुलसू नेगी बन गया था। तुलसू नेगी बरान का रहने वाला था। वह राजा का मित्र संरक्षक तथा कृपापात्र था। कपूरु सिराज का वजीर था। और दयार का रहने वाला था। कपूरु बड़ा साहसी और बुद्धिमान था। तुलसू उससे जलता था और उनमें आपस में दुश्मनी थी। तुलसू ने कपूरु को मारने की योजना बनाई। वजीर के आने पर स्वागत में बन्दुकों के धमाके कर उसे सम्मान दिया जाता था। तुलसू ने एक व्यक्ति को ऐसे समय कपूरु को पालकी में ही गोली मारने के लिये नियुक्त किया। कपूरु को इस षड्यन्त्र की जानकारी मिल गई। उसने अपने स्थान पर पालकी में नौकर बिठा दिया। गोली चलने से नौकर पालकी में मारा गया।

यह घटना ढालपुर घटी। कपूरु अपने साथियों के साथ भाग सिराज चला गया। सिराज के लोगों के साथ ढालपुर आया और तुलसू को उसके सुपूर्द करने के लिये राजा को कहा। तुलसू सुलतानपुर से भागा। सिराजी उसका पीछा करते बड़ागढ़ दुर्ग तक गये। दुर्ग का द्वारा तुलसू के अन्दर आने पर बन्द कर दिया गया। सिराजियों पर दुर्ग से गोलियां चलाई जाने लगीं जिस कारण वे वहां से हट गये और बरान जाकर तुलसू के घर पर आक्रमण किया। उसकी पत्नी टैंटन नेगिन भाग कर जमलू मन्दिर प्रीणी पंहुची। लोगों ने उसे वहां भी जा पकड़ा और उससे सबके सामने झाडू लगवाया। तुलसू की भेड़ें, गायें और धन को लूटा और शेष सामान नदी में फैंक दिया। कपूरु राजा से भी बड़ा नाराज हुआ। क्योंकि उसने तुलसू को सौंपने के स्थान पर उस का पक्ष लिया था। उसे बचकर निकलने में सहायता दी तथा बड़ागढ़ में शरण दी। कपूरु को कुल्लू राज्य में रहना भी सुरक्षित न लगा। इसलिये सतलुज पार केपु चला गया।

तुलसू के विरुद्ध विद्रोह

50000 रुपये सिक्खों को प्रतिबर्ष कर दिया जाता था। जिसके लिये फांट ली जाती थी जो आय अनुसार न हो कर प्रति परिवार होती थी। यह लगान के अतिरिक्त कर होता था। प्रति बर्ष फांट देने के कारण लोगों की आर्थिक दशा बिगड़ गई थी। तुलसू नेगी ने बहुत सा धन वजीरी के समय लूट रखा था। लोगों ने राजा से मांग की एक बर्ष की फांट तुलसू वजीर से ली जाये परन्तु उसने पच्चास हजार रुपये न दिये। राजा ने भी उसका पक्ष लिया जिससे लोग तुलसू का वध करने के लिये तैयार हो गये। तुलसू भागा इस बार उसके विरुद्ध विद्रोह सब जगह था। अतः वह सतलूज के पार अंग्रेजो की शरण में चला गया।

सिक्खों का आगमन

1839 ई. तक सिक्खों को कर नियमित रूप से मिलता रहा परन्तु 1840 ई. में लोगों के विद्रोह के कारण फांट इकट्ठी न हो सकी। इसलिये सिक्खों को कर भी न दिया जा सका। जब काफी समय तक कर न मिला तो कर उगाहने के लिये सेना भेजने का निर्णय लिया गया।

अमृतसर की सन्धि अनुसार महाराजा रणजीत सिंह सतलूज के पार राज्य विस्तार नहीं कर सकता था। इसलिये वह तिब्बत और लद्दाख विजय की सोच रहा था। मण्डी और कुल्लू इसके लिये जीतना आवश्यक था। कहा जाता है कि कपूरु ने भी सिक्खों को आक्रमण के लिये आमंत्रित किया। वह राजा से बड़ा नाराज था। 1840 ई. में भी सिक्ख सेना मण्डी सुकेत तथा कुल्लू विजय के लिये जनरल वेनचूरा अधीन भेजी गई थी। सुकेत के राजा ने अधीनता स्वीकार कर ली थी। मण्डी के राजा बलवीर सैन को बन्दी बना अमृतसर भेज दिया था। परन्तु उसी समय महाराज नौनिहाल सिंह की मृत्यु हो गई और सेना लौट गई। परन्तु 1841 ई. में 2000 सिक्ख सेना फिर कुल्लू भेजी गई। सिक्ख सेना का नायक सिंधीवाला सरदार चेत सिंह था। राजा को सिक्ख सेना के आगमन का पता लगा तो उसने महन्त मनीगिर को सिक्खों का इरादा जानने के लिये भेजा। जिसने राजा को सूचित किया कि सेना कर उगाहने आई है। राजा निश्चिन्त हो गया। शमशी में राजा ने उसका स्वागत किया और सरदार चेत सिंह को भेंट दी। उन्हें लेकर सुलतानपुर आया। सरदार को रघुनाथ मन्दिर ले गये और फिर उसे डेरा तक छोड़ने के लिये राजा गया। डेरा सोभा राम की चौकी के पास था।यह स्थान वर्तमान प्राथमिक स्कूल सुलतानपुर के पास है। राजा जब वापस आने लगा तो उसे रोक लिया गया। आरोप लगाया कि राजा कुल्लू, मण्डी की सहायता सिक्ख सेना के विरुद्ध

करना चाहता था। वह ठीक भी था, परन्तु मण्डी सेना का बड़ी जल्दी हारने के कारण सहायता न भेजी जा सकी थी।

दुर्गों को खाली करना

राजा फिर भी सिक्खों के उद्देश्यों को न भांप सका। सरदार चेत सिंह ने राजा को राज्य छोड़ने के लिये कहा। राजा परोल वजीरी अपने पास रखने और शेष राज्य सिक्खों को सौंपने के लिये मान गया। इसके पश्चात तब दुर्गों को खाली करने के लिये राजा को कहा। भंगाल के दुर्ग को खाली करने के लिये विशेष व्यक्ति के हाथ आज्ञा भेजी गई। इसके दस दिन के पश्चात दुर्ग खाली कराने का कार्य आरम्भ किया गया। जिसके लिये राजा के साथ सरदार गुरमुख सिंह के अधीन एक हजार सिक्ख सेना भेजी गई। कार्य वैरकोट के दुर्ग से आरम्भ हुआ। तारापुर, हाथीपुर, वस्तूरी, मदनपुरी, रामगढ़ आदि बारी–बारी किले खाली कर सिक्खों के अधिकार में देते गये। कुछ वे लोगों का तथा दुर्गों का अन्न, धन लूटते रहे। यह कार्य लग महाराजा बजीरी से हो कर पीणी (खराहल) के रास्ते रुपी वजीरी से सिराज तक चलता रहा। अन्तिम दुर्ग रठोह का था।

राजा का वन्दी बनाया जाना

रठोह पंहुच राजा ने समझा था कि उसे छोड़ दिया जायेगा। परन्तु उसे बताया गया कि उसे अमृतसर जाना होगा। वहां से मुनासिब हुक्म होगा। बन्दी राजा की हंसी उड़ाते हुये सैनिक कहते थे "राजा साहिब गाविन्द–गोविन्द भजो"। राजाओं को गाविन्दगढ़ में बन्दी बनाया जाता था और वह उस ओर इशारा था। राजा के प्रति सैनिक अभद्रता दिखाते थे। उसकी मूछें तक नोचते थे। राजा बहुत घबराया और बीमार पड़ गया और दो दिन के लिये वापसी रोक दी। इसी समय जोधावर सिंह और रहीम खां के अधीन सिख सेना ने स्पिति पर आक्रमण किया। स्पिति के मठों को लूटा। सिक्खों ने लाहुल पर भी आक्रमण किया और लूटा।

राजा की मुक्ति

सिक्खों ने राजा को अस्वस्थ समझ कर पहरा ढीला कर दिया और बाहरी लोगों को मिलने दिया। राजा ने इसका लाभ उठाया और नेगियों और वजीरों को अपने छुड़ानें के लिये सन्देश भेजे। कपूरु वजीर अभी जो केपू सतलुज के पार था से सम्पर्क किया। उसका भीतरी सिराज में बड़ा प्रभाव था। लोग पहले ही सिक्खों के विरुद्ध थे। सिक्ख सैनिको ने लोगों से दुर्ग लेते समय बड़ा दुर्व्यवहार किया तथा लूटा था। अतः तुंग, नोहांडा, शरवी तथा

पलाहच के लोगों ने वजीर कपूरु के परामर्श से राजा को छुड़ाने की योजना बनाई। जिसकी सूचना राजा को भी दी गई। सिक्खों से कपूरू राजा से दुर्व्यवहार के कारण नाराज था।

वापसी वशलेऊ जोत से हो रही थी। तुंग दुर्ग से नीचे घने जंगल थे और सड़क नाले के साथ–साथ जाती थी और इतनी तंग थी कि आसानी से एक व्यक्ति ही चल सकता था। दूसरी ओर ढलान थी। जहां से पत्थर तथा लक्कड़ लुढ़काये जा सकते थे। गोरिला युद्ध के लिये ये उतम स्थान था। ढलान के उपर लुढ़काने के लिये बड़ी–बड़ी लकड़ियां और पत्थर इकट्ठे किये गये। एक बन्दूक धारियों के मुकाबला के लिये टोली बनाई गई। राजा को धार (पहाड़ी)की ओर से उळपर ले जाने के लिये कहारों को निर्देश दिया गया। सिक्खों की वापसी कार्यक्रम की सूचना के लिये आदमी नियुक्त किये गये।

जब वशलेऊ पार करने के लिये सिक्ख सेना राजा के साथ चल पड़ी तो सूचना पंहुचते ही सब लोग निश्चित स्थानों पर छुप गये। जैसे ही राजा की पालकी धार की ओर मोड़ी गई, सिक्ख सेना पर आक्रमण कर दिया गया। आस पास के सिपाहियों को मार दिया गया और पालकी को हाथों हाथ बढ़ाते हुये राजा के साथ धार के उपर पंहुचा दिया गया।

सिक्ख सेना का अन्त

राजा के सुरक्षित पंहुचने पर गुझू नामक बाजा बजाया गया। संकेत के मिलते ही वन में आग लगा दी गई और नाले की पुलियां तोड़ दी गई। सिक्ख सैनिक अनजान रास्ते पर बिना किसी शंका के सीधी पंक्ति में चल रहे थे आगे का पुल टूटा हुआ था। उपर से पत्थर और बड़ी–बड़ी लकड़ियां लुढ़क कर आने लगीं। वे इस अचानक आक्रमण से घबरा गये। उनमें भगदड़ मच गई और वे तुंग दुर्ग को चले गये। जहां दो दिन रहे। परन्तु भोजन सामग्री न होने पर उन्हें दुर्ग को छोड़ना पड़ा। जब घाटी की ओर जाने लगे तो उन पर फिर आक्रमण हुआ। बचने के लिए कोठी नोहाण्डा गांव की ओर मुड़ गये। ताकि उन्हें कुछ खाने को मिलें। वे रास्ते से भटक गये। उन्होंने ऐसा रास्ता पकड़ा जहां कठिनता से पांव रखा जा सकता था। उपर से पत्थर लकड़ आ रहे थे। यहां पानी तक न मिला। इससे बहुत सिक्ख सैनिक मारे गये। नीचे झाड़ियों को आग लगा कर उन्हें भगाया जाता। लोग उन्हें इधर उधर घुमाते रहे और ऐसे ही एक रात बीत गई। प्रातः थके तथा भूखे सैनिकों को घाटी से नीचे उतरने के लिये विवश किया गया जहां उन्हें चारों ओर से घेर लिया। अब चार पांच शुद्रों को ब्राह्मण के भेस में सिक्ख सैनिको के पास भेजा गया। जिन्होंने गाय की कसम खाकर सैनिको को विश्वास दिलाया कि यदि वे अपने

शस्त्र डाल देंगें तो उन्हें छोड़ दिया जायेगा। भूख से पीड़ित और थके हुए सैनिक शीघ्र मान गये। उनके शस्त्र छोड़ते ही लोग उन पर टूट पड़े और उन्हें मार दिया। केवल दो सिक्ख निर्मल सिंह तथा नोख सिंह बचे। नोख सिंह मंगलोर (बन्जार) विहाली में बस गया तथा वहीं विवाह कर लिया। निर्मल सिंह नारकंडा शिमला में जा बसा। सिक्ख सैनिक ने लूटा हुआ सोना निगल लिया था जिसे सिराजियों ने उनकी आन्तों से निकाला। राजा को सुरक्षित सतलुज के पार केपू पंहुचा दिया गया वहां अंग्रेजों का राज्य था। कपूरु भी सिक्खों के बदले के डर से भाग कर शांगरी चला गया। सियुंहटी गांव अंग्रेजों को सौंपा और बदले में कुल्लू के लिये सहायता मांगी। परन्तु सिक्खों ने इस पर अंग्रेजों से आपति की।

रानियों को छुड़ाने का प्रयास

राजा का चचेरा भाई ठाकुर सिंह उस समय सुलतानपुर में था। राजा ने उसे सब नेगियों और वजीरों को रानियों को छुड़ाने के लिये पत्र लिखा। राजा के मुक्त होने से पहले ही लोगों में जोश था। अतः बहुत से लोग सुलतानपुर की पहाड़ियों पर इकट्ठे हो गये ताकि सिक्खों को निकाला और रानियों को छुड़ाया जा सके। सभी का नेतृत्व ठाकुर सिंह कर रहा था। लोग सिराज, रुपी, लग– सारी, लग– महाराजा, परोल तथा लाहुल के थे। सीधे आक्रमण में जीतना कठिन था। अतः सर्वप्रथम छेपन (क्षेपन) गुफु (रस्सी घुमाकर) से सिक्ख सैनिक शिविर पर पत्थर बरसाये गये। जिससे बहुत से सिक्ख सैनिक घायल हो गये। वे हैरान थे कि ठण्डी गोलियां कहां से आ रही हैं। भेखली धार जमघट देख सेना मुकाबला के लिये भेजी गई ऊंचाई पर होने का कुल्लू सेना को लाभ मिला। कोई 250 सिक्ख मारे गये परन्तु ये कुल्लू सेना को भगाने में सफल हुये। नदी व्यास के पार डोभी (खराहल) में भी कुल्लू सैनिक इकट्ठे हुये थे। उन्हें मारने के लिये सिक्ख टुकड़ी भेजी गई। यहां भी भयानक युद्ध हुआ। बहुत से सिक्ख सैनिक मारे गये। परन्तु सफलता सिक्खों को ही मिली। उन्होंने डोभी गांव जला दिया। यहां से लूट करते न्योली, गराहन, गाहर इत्यादि से होते हुये काईस पंहुचे। काईस देवी मन्दिर लूट रहे थे कि किसी सैनिक ने भिड़ों के छते को गोली मारी जिससे भिड़ों ने उन पर आक्रमण कर दिया। भिड़ों से बचने के लिये सिक्ख पानी की ओर भागे जहां वे दलदल में फंस गये और मारे गये। कुछ डूब कर मर गये। दलदल में अभी भी सिक्खों के शस्त्र मिलते हैं। उनका सात कमरों का एक तम्बु और कुछ शस्त्र काईस देवी के भण्डार में रखे गये थे। तम्बु दशहरा के समय देवी के लिये प्रयोग किया जाता था। रानियों को छुड़ाने के प्रयास सफल हो गये। सिक्खों ने राजभवन की घेराबन्दी और दृढ़ कर दी और

धमकी दी कि यदि रानियों को छुड़ाने का प्रयास फिर किया गया तो रानियों को मार दिया जायेगा। अतः सीधे प्रयास छोड़ दिये गये। यह घटना 1840 ई. के बसन्त ऋतु की हैं।

राजा केपू से भी लोगो से सम्पर्क बनाये हुये था। उसका परोल के कामदार को टांकरी में लिखा पत्र इस प्रकार था:

"वीर प्यारे रामा परोली री जमाती कामदार की। श्री महाराज श्री जीत सिंह बसरे वीर प्यारे रामा परोली दे कामादाराये तिदि से राम—राम बोली उपरान्त। कागद तुम्हारा पुज्या। तिस माफक गल खबर मालूम होई लोका पाका रे ताकिद किति है। तुसां राती दिने चौकी वाले छले छिद्रे रहना। सूरत खबर करनी। दिखे गाफल नहीं रहना। हाड़ प्रविष्टे 22।''

(प्यारे राम परोल की सैनिक टुकड़ी के नाईक को, महाराजा जीत ने राम राम कहने उपरान्त ; आपका पत्र मिला; जिससे समाचार मिला। लोगों को कह दिया है। तुम चौकी वाले दिन रात किसी धोके से सतर्क रहना। स्थिति से सूचित रखना, देखना, लापरवाही नहीं करनी। आषाढ़ तिथि 22)।

सिक्खों द्वारा बदला

हजार सैनिकों के मारने तथा राजा को छुड़ाने पर सिक्खों को क्रोध आया। इस घटना से वेंचूरा पागल हो गया। एक सेना बदला लेने के लिये सिराज भेजी गई। लोगों ने इसके लिये पहले ही तैयारी कर ली थी। वे अपने घर छोड़ कर ऊंचे स्थानों को चले गये थे। जिनके बारे सैनिकों को कोई जानकारी न थी। वह डरते थे कि उनका भी पहली सेना की तरह अन्त न हो। उन्होंने सूने गांव को जला दिया। लूटने के लिये भी कुछ न था। केवल भेड़ बकरी हाथ लगी। सारा सिराज क्षेत्र मण्डी राजा को 32000 रुपये में किराये पर दे दिया। मण्डी राजा की ओर से वजीर सिंह ने कार्य सम्भाला। उसने सिंचित भूमि पर 3 रू. तथा अन्य पर 1रू. प्रति भार कर लगाया। कुल्लू क्षेत्र में नादौन के कानूनगो को सिक्खों ने कर उगाही के लिये नियुक्त किया। एक सैनिक टुकड़ी सिक्ख कारदार के अधीन रख, शेष सेना वापिस लौट गई। भंगाली वजीरी महासिंह के अधीन रखी और लाहुल प्रबन्ध एक कानूनगो और थानेदार के अधीन रखा। यह प्रबन्ध पांच बर्ष तक चला।

लाहौर से सीधा सम्पर्क

राजा ने वजीर वलाकी राम को लाहौर भेजा। वह पहले ध्यान सिंह सरदार से मिला और उसकी सहायता से महाराजा शेर सिंह से मिला। अब हालात बदल गये थे। अतः नजराना के साथ एक लाख सात हजार मांगा गया था जो मान लिया गया। राजा को वापसी का हुक्म दे दिया गया जिसे लेकर

गणेशा सरदार वलाकी वजीर के साथ भेजा गया। वे केपू पंहुचे थे कि राजा की मृत्यु का समाचार इन्हें मिला।

रानियों की मुक्ति

रानियों को छुड़ाने के लिये एक योजना बनाई गई। जिसके अनुसार रानियों के कमरें तक बाहर के कमरे से एक सुंरग खोदी गई। जब सुंरग तैयार हो गई तो एक ब्रह्म भोज की तिथि निश्चित की गई तथा बहुत सी स्त्रियों को अन्न के छांटने और पीसने के लिये बुलाया। उन स्त्रियों को राजभवन में आने जाने की आज्ञा मिल गई। परन्तु पहरा और कड़ा कर दिया गया। अवसर मिलते ही रानियां पट्टू का लिवास पहन कर सुंरग के रास्ते से निकल कर अन्य स्त्रियों के साथ जा मिली। काम करती रही। काम समाप्ति पर अन्य स्त्रियों के साथ बाहर निकल गई। बाहरी सीमा के आगे पालकियां रखी थी। रानियों को उनमें बिठा कर भेखली से नगर, चन्द्रखणी, मलाणा फांगची जोत से जलोड़ी होती हुई केपू पंहुचा दिया गया। परन्तु वहां इन्हें भी राजा की मृत्यु का समाचार मिला। वे सती होना चाहती थीं परन्तु अंग्रेजी सरकार ने इसकी आज्ञा न दी। अतः वे दाह संस्कार के बाद कुल्लू लौट आईं। सिक्खों ने रानियों के निर्वाह के लिये जमीन दी। जिसके वे उपभोग जीवन भर करती रहीं। रानी क्योंथली की मृत्यु तो सिक्खों के समय ही हो गई परन्तु रानी कटोची 1861ई. तक जीवित रही।

मृत्यु

राजा जीत सिंह की मृत्यु सितम्बर 1841 ई. में केपू में हुई। उसने 25 बर्ष राज्य किया। उसने अपने समय में बड़ी उथल–पुथल देखी। सिक्खों के व्यवहार से वह बड़ा परेशान हुआ। उसकी जल्दी मृत्यु का भी यही कारण था।

राजा रणवीर सिंह (1841)

राजा जीत सिंह निसन्तान था। अतः उसकी मृत्यु के पश्चात शिमला पहाड़ी रियासतों के अधीक्षक इरस्किन ने शांगरी के राजा के लिये ब्रिटिश सरकार से रणवीर सिंह का नाम प्रस्तावित किया। वह राजा जीत सिंह के चचेरे भाई झगड़ सिंह का पुत्र था। रानियों ने रणवीर के लिये सहमती दी। झगड़ सिंह की मानसिंक स्थिति ठीक न होने के कारण उसे राजा न बनाया गया। उस समय रणवीर सिंह की आयु केवल एक बर्ष थी। रानियों ने रणवीर सिंह को अपनी देख रेख में कुल्लू बुला दिया। सिक्खों ने भी उसे उतराधिकारी माना। उसे कुल्लू गद्दी सौंपने के अधिकार देने के लिये लाहौर

बुलाया गया। यात्रा के मध्य मण्डी में बीमार पड़ने पर रणवीर सिंह की मृत्यु हो गई। रणवीर सिंह की मृत्यु असाधारण परिस्थितियों में हुई। इस समय मंत्री सोभा राम ही था। शांगरी में भी राजतिलक बड़ी जल्दी में किया गया था। चौरी मुठा भी रानियों से ही कराया गया। शांगरी राज्य के अभिलेख अनुसार रणवीर सिंह रठोह में उत्पन्न हुआ। उसका सिंहासनारोहन केपू में किया।उसकी मृत्यु मण्डी में चेचक से हुई। उसने तीन मास राज्य किया।शांगरी में वजीर कपूरू था।उसने रणवीर सिंह को रानी की गोद में देकर राज तिलक किया था।

राजा ठाकुर सिंह (1841–1852)

ठाकुर सिंह का जन्म 1814 ई. में हुआ। यह राजा टेढ़ी सिंह का पोता तथा प्रेम सिंह का बेटा था। वह वैध रानी का पुत्र न था। उसकी माता जगतसुख में रहती थी। जहां उसने कुछ जमीन ले रखी थी और उसी से उसका नर्वाह होता था। यह बड़ा साहसी और बुद्धिमान था। रानियों के छुड़ाने के प्रयत्न के असफल होने के पश्चात यह भी केपू सतलुज के पार रहने लगा था। रणवीर सिंह की मृत्यु के पश्चात कुल्लू राजा बनाने का प्रश्न फिर उठा। महासिंह सिख सरदार ने ठाकुर सिंह को केपू से बुलाया। वह स्वयं खेखसू तक गया। ठाकुर सिंह को राजा बनाने और रानियों को जागीर देने का सन्देश भेजा। कपूरु वजीर ने ठाकुर सिंह का विरोध किया। परन्तु ठाकुर सिंह बलाकी वजीर तथा गौरी दत की सहायता से चुपके से सतलुज के दाहिने किनारे पर आ गया और महा सिंह के साथ मिला।

महासिंह ने उसे राजा बनाने का वचन दिया और पहाड़ी रियासतों के नाजम लहणा सिंह को सन्देश भेजा। वह प्रताप सिंह पुत्र किशन सिंह को अपने साथ बजौरा लाया था। प्रताप सिंह महाराज रणजीत सिंह की देख रेख में लाहौर चला गया था। लहणा सिंह तथा सरदार के सभी सिक्ख चाहते थे कि वह ही राजा बने। उसने भी बदले में लहणा सिंह को 50000 रुपये देने किये थे। परन्तु ठाकुर सिंह अपने साथ कोई ढाई सौ नेगी वजीर तथा अन्य प्रतिष्ठित व्यक्ति ले गया। जिन्होंने आरोप लगाया कि प्रताप सिंह किशन सिंह का गोद लिया पुत्र है। यह भंगाल के गेहर सिंह का पुत्र था। जब सबका प्रताप सिंह के प्रति विरोध देखा तो लहणा सिंह ने निर्णय के लिये दोनों पक्षों को लाहौर बुलाया। ठाकुर सिंह अपने सभी साथियों के साथ लाहौर गया। इसमें गौरी दत और बलाकी राम भी थे। महाराजा शेर सिंह ने ठाकुर सिंह को राजा माना। उसे एक शाल भेंट की और एक वजीरी अपने लिये चुनने के लिये कहा।

वजीरों ने रुपी चुनने का परामर्श दिया। क्योंकि इसमें उनकी मुआफियां थीं। महाराजा शेर सिंह ने उसके पश्चात ठाकुर सिंह का राज्याभिषेक कराया। रुपी की सनद दी और सारे कुल्लू से प्रति घर एक रुपया नजराना प्राप्त करने का अधिकार भी दिया। वापसी पर महासिंह के पुत्र को साथ भेजा ताकि ठाकुर सिंह को कुल्लू में अधिकार दिलायें जायें।ठाकुर सिंह का कुल्लू आने पर रघुनाथ मन्दिर में चौरी मुठा किया गया। राजा ठाकुर सिंह हर बर्ष सर्दियां लाहौर बिताया करता था। सभी सिक्ख अधिकारियों के साथ उसके बड़े अच्छे सम्बन्ध रहे। ग्रीष्म ऋतु आरम्भ होने पर ही वह कुल्लू आया करता था।

शांगरी पृथक राज्य

अंग्रेजों ने शांगरी का राज्य झगड़ सिंह को दिया जिसका वजीर कपूरु था। इसी कारण कपूरु ने ठाकुर सिंह का विरोध भी किया था। कपूरु ने झगड़ सिंह का कुल्लू गद्दी पर भी अधिकार जताया। परन्तु महाराजा शेर सिंह ने झगड़ सिंह के अधिकार को न माना और उसकी प्रार्थना अस्वीकार कर दी। इसका यह परिणाम हुआ कि शांगरी रियासत कुल्लू रियासत से पृथक हो गई और इसके आगे दोनों के राजा अलग–अलग हुये।

सिक्खों से छुटकारा

1845 ई. में सिक्खों का अंग्रेजी सेना से प्रथम युद्ध हुआ अलीबाल की लड़ाई में प्रताप सिंह तथा ठाकुर सिंह दोनों सिक्खों की ओर से लड़े। इस युद्ध में सिक्खों की हार हुई। इसके पश्चात 1856 ई. तक प्रताप सिंह का कोई पता न चला। राजा ठाकुर सिंह हार के पश्चात कुल्लू लौट आया। उसने सिक्खों की हार का लाभ उठाया और आते ही भंगाल में अपना कारदार विरासू नियुक्त किया। कुल्लू में कुछ दुर्गों में तथा सुलतानपुर में सिख सेना थी। सबसे बड़ी सेना टुकड़ी सुलतानपुर में थी। जिसका मुख्य कारदार भजनूं था। ठाकुर सिंह ने उन्हें निकालने के लिये अपनी सेना इकट्ठी की। जिसकी कमान नेगी झगड़ सिंह ने संभाली और ढालपुर में शिविर लगाया। भजनूं ने खतरे को भांप लिया और सुलतानपुर रास्ते के दरबाजे बन्द कर दिये। सिक्ख सैनिक की संख्या राजा के सैनिकों की तुलना में बहुत कम थी इसलिये मुकाबला करना सम्भव न था। सैनिक राजभवन के अन्दर चले गये और मुख्य द्वार बन्द कर दिया। बाहर से कोई सहायता की आशा न थी। राजा के सैनिकों ने राजभवन घेर लिया। झगड़ सिंह ने मुख्य द्वार को तोड़ा। यह घटना एक कुल्लू के गीत में अभी तक जिन्दा है:

"बून्हें धीरे शहरा उझे भेखली जोणी,
झगड़ू नेगिये लोता मारिये परोल भोणी"

एक छोटी लड़ाई हुई। सिक्ख सैनिक लड़ते हुये चरण पादुका तक गये फिर इधर उधर भाग गये। केवल आठ सैनिक भजनूं के साथ रहे। बचने की आशा न देख भजनूं सैनिकों के साथ राजा जीत सिंह की पत्नी कटोची रानी की शरण में चला गया जिसके हस्तक्षेप से सिक्ख सैनिकों को घर जाने के लिये छोड़ दिया गया। सैनिक टुकड़ियां किला खाली कराने के लिये भेजी गई। इस प्रकार सिक्खों से कुल्लू को मुक्त करा लिया गया।

सिहांसन आरोहन

सिक्खों के निकालने के पश्चात ठाकुर सिंह का राजा के रुप में राज्याभिषेक किया गया। उसका सिंहासन आरोहन कटोची रानी के आर्शीवाद से हुआ। राजा बनने पर ठाकुर सिंह ने टिकम राम को अपना वजीर बनाया शेष सभी साथियों को मुआफियां दीं तथा उनकी ऊंचे पदों पर नियुक्तियां कीं।

मृत्यु

राजा ठाकुर सिंह की तीन रानियां थी। जिनके कोई सन्तान न हुई। एक अवैध रानी से पुत्र ज्ञान सिंह हुआ। राजा ठाकुर सिंह की मृत्यु 1852 ई. में हुई।

राये ज्ञान सिंह (1852 – 1870 ई.)

ज्ञान सिंह का जन्म 9 फरवरी 1841 ई. को हुआ था। राजा ठाकुर सिंह की मृत्यु के समय उसकी आयु ग्यारह बर्ष थी। क्योंकि राये ज्ञान सिंह वैध रानी का बेटा न था इसलिये ठाकुर सिंह की रानियों ने भी उतराधिकार के लिये प्रयास किया। जब वे उसमें सफल न हुई तो उन्होंने तीनों रानियों में सारी जागीर को बांटने के लिये प्रार्थना की। परन्तु यह बात भी न मानी गई। इस प्रयास से ज्ञान सिंह का पक्ष निर्बल हुआ। अंग्रेजी सरकार ने उसे राजा के स्थान पर राये की उपाधि दी और आधी जागीर ही उसके नाम की। सारी जागीर में कोटकण्डी, चौंग, हरकण्डी, किनौर, भलाण, कनावर तथा शैहशर कोठियां थीं। अंग्रेजी सरकार ने हरकण्डी, चौंग और कनावर से कर उगाहना आरम्भ कर दिया। ज्ञान सिंह अव्यसक था परन्तु वलाकी कायथ जो जागीर की देख रेख करता था ने उस कार्य को अपने हाथ में ले लिया। उसने इसके विरुद्ध पंजाब के लेफ्टिनेट गर्वनर के पास अपील कर दी। जिसने पूरी

छानबीन के पश्चात तीन बर्ष बाद सारी रुपी पर ज्ञान सिंह को अधिकार दिये। राये ज्ञान सिंह का पक्ष लेते हुये एक पत्र राज पुरोहित ने कुल्लू के बुद्धिजीवियों को लिखा जिसमें उसने बताया कि ज्ञान सिंह राजा ठाकुर सिंह की वैध सन्तान है। जो डाडा सीवा के राजपूत कर्मदास की लड़की से पैदा हुआ। ठाकुर सिंह का जिस बर्ष राज तिलक हुआ उसी बर्ष ज्ञान सिंह उत्पन्न हुआ। राजा जीत सिंह ने यह शादी लड़की कुल्लू बुलाकर अपनी देख रेख में कराई थी। उसने बुद्धिजीवियों को ज्ञान सिंह का पक्ष रखने के लिये कहा। सम्भत: तीन वर्ष के पश्चात उसे सारी रूपी के अधिकार इसी लिये दे दिये गये। पत्र की मूल प्रति यहां दी जा रही है –

श्री राये साहिब ज्ञान सिंह कुल्लू राजे हैं, मालुम रहे। आलमादारान और नेगियान, भाईचारादान और कुल परोहतान कुल्लू के महन्त बैरागियान को मैं कहता हूं। जो मैं श्री राजे ठाकुर सिंह का पुत्र कीस कदर का हुआ। तुम को मालूम हो। सो तुम सरकार कम्पनी को लिख देओ, जबाव पंचान कायम है। जो राजा ठाकुर सिंह राजा जीत सिंह के बगत मियां था। उन दिनों में सकी मे था। सम्वत (विक्रमी) 1889 के बीच लड़की कर्मदास सीवे आले रजपूत की सें सादी राजे ठाकुर सिंह ने अपने घर में लया के की। इसके बाद राजा जीत सिंह हंगामे सिखों के मुलख कुल्लू से केपू जा के स्वर्गवासी हुये। और अमल दारी मुलख सिखों की कुल्लू में हुई। तो महाराजे सेर सिंह ने मारफत सरदार लेहना सिंह मजीठिये की ठाकुर सिंह को की। पोता टेढ़ी सिंह राजे कुल्लू वाले का थां बुलाई के राज टीका बकसा। उस साल में आप राजपूत कर्मदास की लड़की सों पैदा हुये। तुम असल हैं। इतना हमारे को खबर है, सो लिख दिया।

विवाह

राये ज्ञान सिंह का विवाह मियां पदम सिंह की बड़ी बेटी से हुआ था जो मण्डी के रहने वाले थे। 11 सितम्बर 1862 को उसने पुत्र दलीप सिंह को जन्म दिया। रानी की मृत्यु 1869 ई. में हो गई।

राजा सन्देह के घेरे में

1856 ई. में प्रताप सिंह पुत्र किशन सिंह कुल्लू आया और बदाह के राजभवन में रहने लगा। वजीर सूरत राम को सिक्खों द्वारा छोड़े गये शस्त्रों और बारुद के भण्डार की जानकारी थी जो राजभवन में रखा था। प्रताप सिंह बड़ा महत्वकांक्षी था। वह उपायुक्त कुल्लू "श्री मान हे" का विश्वास जीतना चाहता था। ज्योंही 1857 ई. की क्रान्ति की चिंगारी भारत में सुलगने लगी कुल्लू में भी शस्त्र रखने के लिये प्रतिबन्ध लगा दिया गया। इसका लाभ

उठाते हुए प्रताप सिंह ने राजभवन के शस्त्रों के बारे में उपायुक्त को जानकारी दे दी। तलाशी पर सारे शस्त्र पकड़ कर तोड़ दिये गये और बारुद व्यास में डाल दिया गया। राजा संदेह के घेरे में आ गया। राजा राये ज्ञान सिंह के कई नौकर बन्दी बना दिये गये।

प्रताप सिंह का राज्य प्राप्ति के लिये प्रयास

1857 ई. के स्वतन्त्रता संघर्ष से प्रेरित हो कर प्रताप सिंह ने वजीर सूरत राम तथा अन्य साथियों की सहायता से एक पत्रक बांटा जिसमें लोगों को अंग्रेजों के विरुद्ध उठ खड़े होने तथा उनके और राये ज्ञान सिंह के राज्य को उखाड़ फैंकने के लिये कहा गया था। उसमें यह भी कहा गया था कि अंग्रेजों का राज भारत में समाप्त होने वाला है। पत्रक की एक प्रति किसी प्रकार तहसीलदार पलाइच के हाथ लगी जिसने उपायुक्त कुल्लू को सूचित किया। प्रताप सिंह अपने साथियों समेत पकड़ा गया। धर्मशाला (कांगड़ा) में उसके विरुद्ध अभियोग चला और उसे फांसी की सजा हुई। वास्तविकता सामने आने पर राये ज्ञान सिंह के बन्दी नौकर छोड़ दिये गये।

मृत्यु

राये ज्ञान सिंह की मृत्यु 19 अगस्त 1870 ई. को हुई। उसने 18 बर्ष तक जागीर का उपभोग किया। कलवर्ट के अनुसार उसकी मृत्यु एक दुर्घटना में हुई। (डायरी पृष्ठ 24)।

राय दलीप सिंह (1870–1892 ई.)

दलीप सिंह गद्दी प्राप्ति के समय केवल आठ बर्ष का था। इसलिए रियासत को कोर्ट ऑफ बार्डस के अधीन रखा गया।जिस की देख रेख में आय के स्रोतो में सुधार हुआ। सारे वन सरकारी स्वामित्व में थे। मुआफी केवल 2000 रुपये की थी। कोर्ट ऑफ बार्डस ने आय तीन हजार पांच सौ तक बढ़ा दी। सारे कर्जे भी समाप्त कर दिये। 1876–77ई. में कुल्लू में बन्दोवस्त करवाया गया। सारी भूमियों का रिकार्ड तैयार किया गया।सारी जागीर की आय का अनुमान दस हजार लगाया गया।कलवर्ट उस समय कुल्लू आया। उसने कलवर्ट लॉज बनवाया। यह भवन अब कुल्लू आयुक्त का आवासीय भवन है।

विवाह तथा व्यक्तित्व

1883 ई. में राये दलीप सिंह व्यस्क हुये और कोर्ट आफ बार्डस हटा लिया गया। इसकी शादी नादौन तथा मण्डी के राज परिवारों में हुई थी।

राये दलीप सिंह की शिक्षा अच्छी हुई थी। उसका व्यक्तित्व आकर्षक था। वह अच्छे सवार और शिकारी थे। उनका विवाह नादौन के राजा रघुवीर सिंह की पौत्री से हुआ था।

अधिकार

राये दलीप सिंह को प्रथम श्रेणी मैजिस्ट्रेट तथा मुन्सिफ के अधिकार प्राप्त थे। वह जिला कांगड़ा से वायसराये का सातवां दरबारी था। वह कुल्लू से कांगड़ा जिला बोर्ड का मनोनीत सदस्य था।

शमशान घाट के बारे मे अभियोग

राये दलीप सिंह ने कुल्लू शमशान घाट को बन्द कराने तथा इन्हें सरवरी के किनारे से दूर व्यास के किनारे ले जाने के लिये प्रयत्न किया। उनका तर्क था कि शहर में मुर्दे जलाने से बदबू आती है और पुराना शमशान घाट भी सरवरी के पार ही था। इसका विरोध शहर वालों ने रुलदू मिश्र की देख रेख में किया और अभियोग जीत लिया।

मृत्यु

राये दलीप सिंह की मृत्यु 1892 ई. में चेचक के कारण हुई।

राये मेघ सिंह (1892–1921ई.)

राये मेघ सिंह अपने पिता की मृत्यु के समय केवल दस बर्ष का था। अतः उसके व्यस्क होने तक राजा को कोर्ट आफ वार्डस के अधीन रखा गया। इसलिये 1904 ई. में गद्दी पर बैठा। गद्दी पर बिठाने की रस्म उपायुक्त कुल्लू ने पूरी की।

विवाह

इनका विवाह नालागढ़ में दो सगी बहनों के साथ हुआ था। रास्ते में बारात के लौटते समय हैजा फैल गया था। कई बाराती मर गये थे। वापसी पर बारातियों को उपचार के लिये शहर के बाहर रोका गया।

अधिकार

राये मेघ सिंह को 1904 ई. में द्वितीय मैजिस्ट्रेट तथा 1911 ई. में प्रथम श्रेणी मैजिस्ट्रेट के अधिकार मिले। 1912 ई. के प्रथम विश्व युद्ध में 50 रंगरुट भर्ती कराये। हर भर्ती किये गये रंगरुट को 10 वीघा जमीन दी गई. तथा

लगान से छुट दी गई। 1905 ई. में भूंचाल आया था जिसमें राजभवन की ड्योढ़ी को हानि पंहुची थी।

व्यक्तित्व

राये मेघ सिंह अच्छे डीलडौल के थे।फुटवॉल के अच्छे खिलाड़ी और अच्छे घुड़सवार थे। यह चांदी के एक रुपये का दो उंगलियों और अंगूठे से मोड़ देते थे।

मृत्यु

आंख के ऊपर जंगी फोड़ा (नासूर) होने के कारण इनकी मृत्यु हुई।

राये भगवन्त सिंह (1921 से 1960)

राये भगवन्त सिंह का जन्म 1907 ई. में हुआ।पिता की मृत्यु के समय इनकी आयु केवल 14 बर्ष की थी। इसलिये कोर्ट ऑफ वार्डस के अधीन जागीर का प्रबन्ध चलाया गया। जिसने जागीर की आर्थिक स्थिति सुधारी।

राये भगवन्त सिंह का विवाह मण्डी में दो सगी बहनों से हुआ। 1926 ई. में पहली शादी हुई परन्तु बर्ष बाद ही पत्नी की मृत्यु हो गई। 1927 ई. में दूसरी शादी हुई। इनके दो पुत्र महेन्द्र सिंह तथा कुबेर सिंह थे। राये भगवन्त सिंह ने 1937 ई. में शांगरी के जागीरदार रघुवीर सिंह को हरा कर पंजाब कौंसिल की सदस्यता प्राप्त की और वह 1949 ई. तक सदस्य रहे। वह बड़े शान्त स्वभाव के, दयावान और न्यायशील थे। उन्होंने लगभग 20 निर्धन लड़कियों की शादियां करवाई। इनकी मृत्यु 23 जनवरी 1960 ई. को हुई। राये भगवन्त सिंह का प्रथम प्रबन्धक कपूर चन्द तहसीलदार था।

महेन्द्र सिंह (1968–1989 ई.)

महेन्द्र सिंह का विवाह नेपाल के उच्च घराने में हुआ था। इनके दो पुत्र महेश्वर सिंह तथा कर्ण सिंह तथा एक पुत्री किरण है।

1971 ई. में दशहरा के समय राजा की शोभा यात्रा के परम्परागत रास्ते के बारे में विवाद उत्पन्न हुआ। परम्परागत रास्ते में कला केन्द्र के बनने से रुक गया था जिसके लिये संघर्ष हुआ। गोली चली और एक व्यक्ति मारा गया। 1972 ई. और 1973 ई. में दशहरा में रघुनाथ जी की मूर्ति ढालपुर न लाई गई और यह मेला 2 बर्ष बिना रथ यात्रा के ही मनाया गया। मामला

न्यायालय में गया। 1974 ई. में निर्णय पक्ष में होने से परम्परागत रास्ते अधिकार मिला। 1973 ई. में इनकी जागीर का पट्टा सरकार ने रद्द दिया। इनकी मृत्यु 4 सितम्बर 1989 ई. में हुई।

महेश्वर सिंह

महेन्द्र सिंह के ज्येष्ठ पुत्र महेश्वर सिंह हैं। यह भारतीय जनता के नेता है। हिमाचल विधान सभा के सदस्य 1977 ई तथा 1982 ई. में गये थे। 1949 में इन्होंने राजनीति में नगर पार्षद के रूप में पग रखा। चीफ पार्लियामेंट्री सक्रेटरी हिमाचल प्रदेश रहे। यह राज्य सभा के सदस्य रहे। यह दो बार मंडी संसदीय सीट से संसद सदस्य चुने गये। इनका भाई कर्ण सिंह हिमाचल प्रदेश विधान सभा में बन्जार क्षेत्र के प्रतिनिधि 1990 से 15.12.1992 तक रहा। 1999 में कर्ण सिंह राज्य शिक्षा हिमाचल प्रदेश बने। इनके पास प्राथमिक शिक्षा विभाग रहा।

15. रियासत शांगरी

रियासत शांगरी को राजा मान सिंह ने कुल्लू राज्य के लिये 1703 ई. में जीता था और तब से यह कुल्लू का एक भाग बना रहा। शांगरी सतलुज नदी के वायें किनारे पर स्थित है। इस रियासत के दो भाग शांगरी तथा चैकल थे। शांगरी का मुख्यालय बड़ाग्रां तथा चैकल का कींगल था। राजा मान सिंह के आक्रमण के समय शांगरी पर ठाकुर अंगत का शासन था। उस समय शांगरी और बुशैहर में प्रायः टकराव हुआ करता था जिस कारण शांगरी राज्य कमजोर होता गया।

मान सिंह के युद्ध में ठाकुर अंगत मारा गया और शांगरी को कुल्लू राज्य में मिला लिया गया। उस समय सारे व्यय काटने के पश्चात केवल एक सौ रुपये वर्ष में आय आंकी गई। शांगरी का कुल क्षेत्रफल 16 वर्ग कि. मी. था जिसमें पगाणा, रजोणा, भतैणा और कंधरु कोठियां सम्मिलित थी। कींगल के स्थान में राजा मान सिंह ने एक दुर्ग बनवाया था।

अलग रियासत :-

राजा जीत सिंह के समय तक शांगरी कुल्लू का भाग रहा। जब अंग्रेजो का सतलुज के वायें किनारे तक राज्य हो गया तो भी शांगरी रियासत अंग्रेजों ने गोरखों के विरुद्ध दी गई सहायता के बदले कुल्लू राजा को दी। राजा जीत सिंह के बाद शिशु रणवीर सिंह कुल्लू का राजा बना परन्तु उसकी तीन मास के पश्चात मृत्यु हो गई। सतलुज के दाहिनी ओर सिखों का प्रभुत्व था।

राजा झगड़ सिंह (1841 से 1859 ई.)

अंग्रेजों ने रणवीर के पिता झगड़ सिंह को शांगरी का राजा घोषित किया। झगड़ सिंह की मानसिक स्थिति ठीक न थी। इसलिये सिक्खों ने कुल्लू का राजा ठाकुर सिंह को माना। झगड़ सिंह के वजीर कपूरु ने राजा शेर सिंह के पास लाहौर में इसके विरुद्ध अपील की परन्तु स्वीकार न हुई। इस प्रकार शांगरी रियासत कुल्लू से अलग हुई।

वास्तव में झगड़ सिंह कुल्लू राज्य का राजा बनने का अधिकारी था। कोटपू में राजा जीत सिंह की सम्पति झगड़ सिंह को मिली थी। राजा जीत सिंह की रानियों की मृत्यु के पश्चात बड़ागढ़ की जागीर जो सिक्खों ने निर्वाह के लिये उन्हें दी थी, भी शांगरी राजा को ही मिली। जिसने बड़ागढ़ के बदले सिरीगढ़ अंग्रेजो से मांग लिया था। क्योंकि यह स्थान शांगरी के निकट पड़ता था तथा प्रशासनिक दृष्टि से भी यह उपयुक्त था। बदाह का मियां किशन

16. लग रियासत

सुकेत मण्डी और कुल्लू के दस्तावेजों से हमें लग रियासत की जानकारी मिलती है। सुकेत के राजा मदन सैन ने कुल्लू के एक बड़े भाग को जीता था। राजा पर्वत सेंन (1500–1520 ई.) के समय भी यह कुल्लू का क्षेत्र सुकेत राज्य के अधीन था। राजा पर्वत सैन का एक ब्राह्मण मन्त्री भी था। राजा को सन्देह हुआ कि उस ब्राह्मण मंत्री का रनिवास की एक दासी से प्रेम सम्बन्ध था। बिना पुष्टि किये राजा ने भरे दरबार में ब्राह्मण मंत्री का अपमान कर दिया। इस अपमान को वह सहन न कर सका और उसने आत्म हत्या कर ली।

संयोगवंश इस घटना के तुरन्त पश्चात राजा बीमार पड़ गया। उसके मन में यह बात घर कर गई कि उसकी बीमारी निरपराध ब्राहम्ण को सताने के कारण हुई है। प्रायश्चित के रूप में उसने ब्राह्मण परिवार को दो वजीरियां कुल्लू घाटी में दान दे दीं। ये वजीरियां लग, सारी तथा लग महाराजा थीं। जिनमें हुरंग, मण्डलगढ़, रायसन, सारी, डुघीलग, मानगढ़, चपाड़सा, तारापुर, महाराजा खोखन, तथा बजौरा कोठियां थीं। यह क्षेत्र फोजल तथा बजौरा नालों के मध्य आता है। ब्राहम्ण वंशजों ने क्षेत्र प्राप्ति के पश्चात इसे सुदृढ़ बनाया और इसका विस्तार कर रियासत का रूप दिया।

ऐसे भूमि उपहार को लाग या दान कहा जाता है। लाग का बिगड़ा रूप "लग" है। इसलिये ब्राह्मण वंश को लगावती वंश पुकारा जाने लगा। रियासत की राजधानी डुघीलग और घाटी भी लग कहलाई। दो अधीन वजीरियों के साथ भी लग शब्द जोड़ दिया गया।ये अब लग महाराजा तथा लग सारी कहलाई।

लगावती वंश के राजा और घटनायें

लगावती वंश का राज्यकाल 1623 – 1658 ई. तक रहा। इसी वंश ने सुकेत वंश का शासन कुल्लू में समाप्त किया। राज्य विस्तार में सर्व प्रथम सुकेत के अधिकार क्षेत्र को इन्होंने अपने अधीन किया। फिर आस पास के क्षेत्रों को अपने राज्य में सम्मिलित किया। 1650 ई. तक इस राज्य में मंडी सिराज, कुल्लू के भीतरी सिराज का आधा भाग, बाहरी सिराज का उत्तर पश्चिमी भाग और छोटा भंगाल के क्षेत्र सम्मिलित थे। लग घाटी में इसके दो सुदृढ़ दुर्ग शोझा गढ़ और सारी गढ़ थे।

कुल्लू तथा मण्डी सेनाओं का सांझा आक्रमण

लगावती वंश का सबसे शक्तिशाली राजा जोग चन्द हुआ। उसने अपने राज्य का विस्तार ऊहल नदी की ढलानों और चौहार घाटी तक कर लिया था। कुल्लू तथा मंडी के राजा शक्तिशाली जोग चन्द को अपने

अस्तित्व के लिये खतरा मानते थे। अकेले जोग चन्द को परास्त करना उनके लिये कठिन था। अतः कुल्लू के राजा जगत सिंह तथा मंडी के राजा सूरज सेन ने समझौता कर लग राज्य पर आक्रमण किया। जोग चन्द की सैनाये दोनों सैनाओं का मुकाबला न कर सकीं ओर हारती चलीं गईं। मंडी सेना ने मंडी सिराज तथा चौहार घाटी में बदर, बदरपूर तथा बरसैला जीते। कुल्लू सेना ने बाहरी सिराज की जलोड़ी कोठी, भीतरी सिराज में शोझा, तुंग, गोपालपुर, पलाईच, फतेहपुर, तिलोकपुर तथा शिकारी के क्षेत्र जीते। चौहार घाटी के बैरकोट गढ़चुल्हा, मदनपूर, हाथीपुर, देवगढ़, हैरतपुर, अमरपुर, तारापूर आदि बारह गांव जीते। बैरकोट के दुर्ग को दोनों सेनाओं ने सांझे अभियान में जीता था। यह महत्वशाली गढ़ था। इसलिये दोनों सेनाओं ने दुर्ग पर अपना अपना अधिकार जताया। इस बात पर दोनों सेनाओं की आपस में झड़प भी हुई। अन्त में दिल्ली सम्राट से निर्णय लेने का समझौता हुआ। पहले मंडी राजा का प्रतिनिधि दिल्ली पंहुचा। उसने अपना पक्ष रखा और दुर्ग के अधिकार का फरमान ले आया। बाद में कुल्लू राजा के प्रतिनिधि ने भी दुर्ग के अधिकार का फरमान प्राप्त कर लिया। मंडी रजा दुर्ग पर अधिकार के लिये शुभ महूरत देखता रहा। परन्तु कुल्लू राजा ने फरमान प्राप्त होते ही दुर्ग को अपने अधिकार में ले लिया और मंडी सेनायें देखती रह गईं।

राजा जगत सिंह से युद्ध

कुल्लू राजा जगत सिंह (1637–1662 ई.) अपनी सफलताओं से उत्साहित हो जोग चन्द की सैनाओं को और पीछे तक धकेलने के लिये हालपुर तक चढ़ आया। जोग चन्द ने इन सैनाओं को लग घाटी के प्रवेश द्वार पर रोकने का प्रयत्न किया। यहां एक ओर पहाड़ी और दूसरी ओर सरवरी नदी थी। दोनों के बीच एक तंग रास्ता था। यहां बढ़ती सेना को रोकना आसान था। सुल्तानपुर में जोग चन्द का भाई सुलतान चन्द था जिसने सुल्तानपुर को बसाया था। उसकी सैनायें दूसरी ओर से आक्रमण कर सकतीं थीं शीशामाटी में घमासान युद्ध हुआ। दोनों भाईयों की सेना ने राजा जगत सिंह को आगे बढ़ने से रोक दिया।

उस समय मुगल सम्राट पहाड़ी रियासतों से कर प्राप्त करते थे। उनके आपसी झगड़ों में हस्ताक्षेप करते थे। परन्तु उन्होंने राजाओं को आन्तरिक स्वतन्त्रता दे रखी थी। राजा जगत सिंह दिल्ली सम्राट को हस्ताक्षेप का अवसर नहीं देना चाहता था। इसलिये भी उसने अपना अभियान यहीं छोड़ दिया। वह यह भी जानता था कि जोग चन्द के पोते का लालन–पालन सैयद मुस्तफा के अधीन हो रहा था, जो इस क्षेत्र की देख रेख के लिये मुगलों द्वारा नियुक्त था। उस समय दिल्ली सिंहासन पर सम्राट शाहजहां बैठा था।

राजा जगत सिंह का डुघीलग पर अधिकार

राजा जगत सिंह को अगली कार्यवाही के लिये अधिक प्रतीक्षा नहीं करनी पड़ी। 1657 ई. में शाहजहां के पुत्रों में सिंहासन के लिये युद्ध आरम्भ हो गया। सैयद मुस्तफा और सैयद इब्राहिम जो कि पहाड़ी रियासतों के चकलादार था को वापस दिल्ली बुला लिया गया। राजा जगत सिंह ने इसका लाभ उठाया और अपनी सैनाओं को सारीगढ़ पर आक्रमण करने की आज्ञा दी जो जोग चन्द के अधीन था। राजा इस गढ़ को जीतने के पश्चात जोग चन्द से अन्तिम लड़ाई शोझागढ़ ओर डुघीलग राजधानी के लिये लड़ना चाहता था परन्तु रास्ते में एक स्त्री द्वारा राजा को सचेत किया गया कि सारी गढ़ जीतने से जोग चन्द को हराया नहीं जा सकता। यदि व शोझागढ़ पर अधिकार कर ले तो सारी लग उसकी हो जायेगी। शोझागढ़ जोग चन्द का बड़ा दृढ़ दुर्ग था तथा अपनी स्थिति के कारण महत्वशाली भी था। यहीं पर जोगचन्द का शास्त्रागार था। यहां से बन्दरोल को सीधी सड़क जाती थी जहां से सेनाओं को लगघाटी की सुरक्षा के लिये या कुल्लू पर आक्रमण के लिये उतारा जा सकता था। सारीगढ़ पर आक्रमण करने पर, शोझागढ़ की सेनायें पीछे से आक्रमण कर सकती थीं। उस स्त्री के भोऊंरू सुनते ही राजा जगत सिंह ने अपना इरादा बदल लिया ओर अपनी सेनाओं को शोझागढ़ पर आक्रमण की आज्ञा दी। छुरला गांव के पास घमासान युद्ध हुआ। जोग चन्द डुघीलग और छुरला के मध्य पातक स्थान पर मारा गया। जोग चन्द की मृत्यु से उसकी सेना भाग खड़ी हुई। डुघीलग, शोझागढ़ तथा सारीगढ़ पर जगत सिंह का अधिकार हो गया। जोगचन्द की माता उसके पोते और उसके कुछ सम्बन्धियों को बन्दी बना लिया गया। जोग चन्द के कुछ सैनिक भाग कर शालंग गांव के निकट ढांकरी नाला की रूह ढांक में एक गुफा में जा छुपे। फिर अपने शस्त्र वहीं छोड़ कर सामान्य व्यक्तियों की तरह जनता से जा मिले। इस गुफा को अब भी लोग जोग चन्द की डुआर कहते हैं। लोगों को वहां कई शस्त्र बाद में सही हालत में मिले। यह गुफा ऐसे स्थान पर है जहां सीढ़ी की सहायता से ही अब पंहुचा जा सकता है। नाले के पार सड़क कें साथ अब स्थानीय देवता क्षेत्रपाल का मन्दिर है। इसके तीन ओर सीधी ढलानें हें और उतरी दिशा की ओर से ही टीले पर जा सकते हैं। यहां जोग चन्द्र का थाना भी था। इस थाना में भी जोग चन्द के सैनिकों को बन्दी बना कर रखा गया।

दारा शिकोह का राज्य लौटाने का आदेश

बन्दी गृह से जोग चन्द की माता ने अपने विश्वास पात्र द्वारा शाहजहां के बड़े पुत्र दारा शिकोह को एक पत्र लिखा जिसमें उसे बन्दी बनाये जाने और राज्य

छीने जाने की जानकारी दी। पत्र मिलते ही दारा शिकोह ने राजा जगत सिंह को एक फरमान द्वारा राज्य लौटाने और परिवार को मुक्त करने का आदेश दिया। आदेश का पालन न होने पर राजा रूप नूपरपुर जहांगीर कुलीबेग और जम्मू के फौजदार जो अवध शाही सैना के साथ कहलूर का विद्रोह दबाने आये थे को कहा गया कि कुल्लू राजा को नष्ट कर दें। फरमान की तिथि तीन मास जमानी अल्सादी 1067 हिजरी अर्थात 1657 ई. था। परन्तु इतने में दिल्ली सिंहासन पर ओरगंजेब के अधिकार होने और शाहजहां के बन्दी बनाये जाने का समाचार मिला। दारा शिकोह का पीछा किया जा रहा था। दारा शिकोह का बेटा सुलेमान शिकोह पहाड़ों की ओर भाग आया था और औरगंजेब की ओर से राजा जगत सिंह को एक फरमान मिला। जिसमें उसे ध्यान सिंह कहलूरिया से मिलकर सुलेमान शिकोह को रोकने का आदेश था। बदली अवस्था राजा जगत सिंह के अनुकूल थी। उसे अब पहला आदेश मानने की आवश्यकता न थी।

सुल्तानपुर विजय तथा लगावती वंश का अंत

जोग चन्द का भाई सुल्तान चन्द अभी जीवित था। उसने सुल्तानपुर को बसाया था और उसे एक दुर्ग का रूप दिया था। वह यहां से जगत सिंह की सैनाओं से छापामार युद्ध जारी रखे हुये था। वह किसी समय भी खतरा बन सकता था। इसके साथ मकराहड़ एक सुरक्षित राजधानी नहीं थी। नगर एक किनारे रह जाता था। राजा जगत सिंह चाहता था कि सुल्तानपुर को राजधानी बनाया जाये। सुल्तानपुर सामरिक दृष्टि से भी सुरक्षित था। दिल्ली सम्राट से भी किसी हस्ताक्षेप का डर न था। अतः उसने सुल्तानपुर पर आक्रमण का दिया। सुल्तान चन्द की सैनाओं ने डट कर प्रतिरोध किया परन्तु संख्या कम होने पर हार गईं। सुल्तान चन्द स्वयं लड़ते हुये परोल कोट के पास मारा गया। कहते हैं कि वह इतने जोश से लड़ रहा था कि सिर कट जाने पर भी वह कुछ समय तक लड़ता रहा। राजा जगत सिंह ने उसकी बहादुरी का सम्मान करते हुये उसके गिरने के स्थान पर एक थड़ा के रूप में स्मार्क बनवाया। जो अब भी उसी स्थान पर विद्यमान है। स्मार्क के ऊपर देवी जगन्नाथी के चरण चिन्ह बने हैं। सुल्तानपुर पर राजा जगत सिंह का अधिकार हो गया। उसने इसे अपनी राजधानी बनाया। राजभवन में राजपरिवार अब भी वहीं आवास करता है। सुल्तानचन्द की मृत्यु के साथ ही लगावती वंश और लग रियासत का अन्त हो गया।

17. कुल्लू पर अंग्रेजो का अधिकार तथा कुल्लू की स्थिति- एक रिपोर्ट

1846 ई. में लाहौर सन्धि के अनुसार अंग्रेजो को सिक्खों से सतलुज और व्यास का क्षेत्र भी मिला। जिस के अनुसार कुल्लू तथा लाहुल तक का क्षेत्र अंगेजों के अधीन आया। कुल्लू अपने अधिकार में लेने के पश्चात पहाड़ी रियासतों के अधीक्षक ने सरकार को यह रिपोर्ट 24.2.46 को दी।

कुल्लू के सिरीगढ़ तथा धौलपुर में राजा बुशैहर और राजा कुम्हारसैन की सेनायें हैं। सिक्खों की सेना इस क्षेत्र में नहीं है। गोरखों को हराने में सहायता के बदले शांगरी तथा कांगल की रियासत राजा जीत सिंह को दी थी। जिस पर झगड़ सिंह राजा का अधिकार है। शांगरी की देख रेख कपूर वजीर करता है। रियासत की आय 1200 रुपये बार्षिक है। राजा झगड़ सिंह को यह रियासत ही पर्याप्त है। सतलूज का उतरी क्षेत्र अंग्रेजी राज्य में मिलाया जाना चाहिए। कुल्लू से 1.5 से 2.0 लाख का राजस्व प्राप्त होगा। यहां खनिज भी काफी है। 1000 भाड़े के अंग्रेजी सिपाही जो कांगड़ा, कुटलेहड़, बबूर तथा गुलेर से हैं घर जाने के लिये आज्ञा दे दी गई हैं। परन्तु कुल्लू के लोग जंगजू क्रूर और बदला लेने वाले हैं। इनके मण्डी और बुशैहर से झगड़े हैं। कुल्लू में कई सालों से अफरातफरी है। इसलिये 500 सैनिक यहां रखे जाने चाहिये। कई किले गिराने है इत्यादि। मूल रिपोर्ट भी दी गई है।

प्रशासनिक पग

पहले कुल्लू को शिमला आयुक्त के अधीन रखा गया। बाद में इसे कांगड़ा जिला का उपमंडल बनाया गया। लाहुल स्पिति भी इसके साथ जोड़ दिया गया। कुल्लू का सरसरी बन्दोबस्त किया गया और उस अनुसार कर निर्धारण किया गया। राजा ठाकुर सिंह के अधिकार पुनः रुपी वजीरी तक सीमित कर दिये गये। राजा जीत सिंह की रानियां जो सुलतानपुर राजभवन में रहती थीं को कोठी बड़ागढ़ में निर्वाह के लिए जागीर दी गई। जिसका उपभोग वे जीवन भर करती रहीं। लाहुल का शासन केलांग के ठाकुर के अधीन किया गया। महाराजा गुलाब सिंह ने स्पिति अंग्रेजो को दिया। इसे भी लाहुल वजीरी में रखा गया। लाहुल 1941ई. से नायव तहसीलदार के अधीन कर दिया गया।

(Copy)

2185

No. 25.

From
The Hon'ble J. C. Erskine,
Superintendent of the Hill States

To
The Secretary to the Govt. of India
With the Governor General.

Sir,

I have the honour to inform you that as the troops of the Government of Lahore, have been expelled from the whole of the Country of Kooloo, the Forts of [illegible] and [illegible] being at present occupied by garrisons composed of the soldiers of the Raja of Bashahur and of the Rana of Koomharsein, it is advisable that arrangements for the future disposal of the Province should be forthwith sanctioned by the Right Hon'ble the Governor General.

A small tract of territory, comprising two pergunnahs called Shangree and [illegible], yielding a revenue of about Rs. [illegible] per annum, situated on the left bank of the Sutluj, was conferred on the late Raja Ajeet Sing of Kooloo, as a mark of the approbation of our Government, for his services in assisting to expel the Goorkhas from the Hills.

Raja Ajeet Sing died in 1841.

Thakoor

[illegible] ... the question was ... of the next heir among the collateral members of the family, whether to be put in possession of the ... Kooloo country, Government was pleased to sanction my recommendation in favor of the minor son of Mean Juggur Sing, by name Thakoor Sing, the former living at that time passed over in consequence of his disqualification, by imbecility, from managing his own affairs.

4. Thakoor Sing however died shortly afterwards and the revenues of the purgunnahs of Sungra and [illegible], under the orders of Govt. which arrangement was approved of by the Hon'ble Court of Directors, were appropriated for the maintenance of Juggur Sing and his family, the administration being entrusted to Kupoorod, the hereditary Vizier of Kooloo.

5. I have mentioned our proceedings in regard to the succession to the Kooloo hill states for the purpose of placing before you succinctly the position of the collateral members of the royal family of Kooloo, and as affording consequently some guide to a decision regarding the final disposal of this fine Hill State.

6. The Government of Lahore on the decease of Rajah Ajeet Sing declared the country an escheat to the paramount State, and the collection of the revenue as well as its general administration has ever since that period

been in the hands of the Sikhs.

Under the above circumstances it appears to me that Meah Jugger Sing being already sufficiently provided for by the tracts on this side of the river, granted for his support, that Government should retain as a conquest the country north of the river, the inhabitants of which would regard such a determination with unmixed delight......

8\. I cannot speak with any thing approaching to accuracy, as to the particulars of the revenues of Kooloo, but from all the information obtainable I conceive it to be at present about one and a half lacs of Rupees per annum, but capable of yielding under our Govt two lacs independently of its mineral resources which are reported as considerable.....

9\. I have allowed the garrisons of the different posts in Koolo, consisting of about 1000 men, chiefly mercenaries from the Hill States of Kangra, Kolhoo, Goler and Bilbour[?] ... to return to their homes.

10\. It will be absolutely necessary should the Governor General determine on the retention in our hands of Koolo, that a military force be stationed in the country as the inhabitants, although well affected towards the British Government are a turbulent and at present a savage and vindictive race having numerous hereditary as well as

word

-rested feuds, and disputes unadjusted, not merely with their neighbours of Mundi and Bushahir, but much confusion prevails among the inhabitants themselves, caused by the anarchy which has prevailed in Kooloo for many years past.

11. I would propose to dismantle several of the forts, after which, the wing of a Regt. consisting of 500 men would be a sufficient force for the occupation of the country.

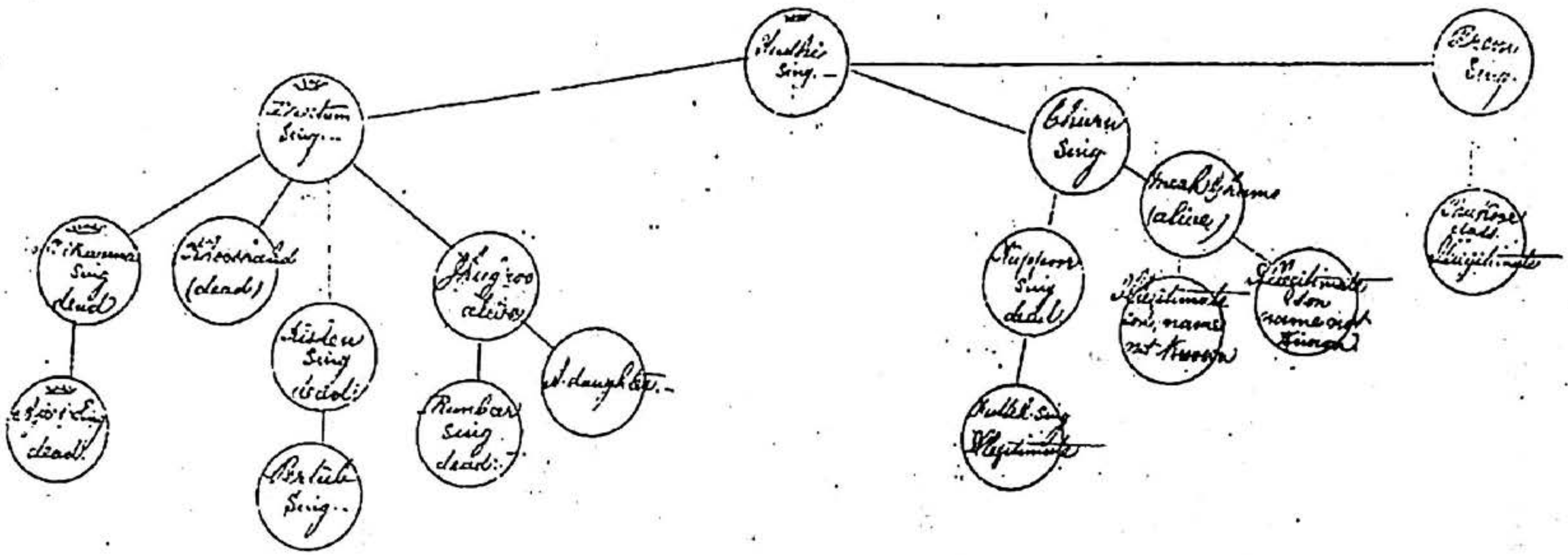
12. Should it be inconvenient to detach just now regular troops, I beg to solicit authority to raise a body of 500 Rajpoots for service in Kooloo, as the Province cannot be left without the presence of an armed force in it.

13. Annexed I beg to transmit a genealogical Statement of the Kooloo Family.

I have the honor to be Etc.
(Sd) J. C. Erskine
Superintendent of Hill States.

Office of Supdt. H. States,
Camp Bilaspoor,
the 24th Feby 1846.

Rajah



Royal Family of Kooloo

* Kishen Sing, the Father of Pertab Sing died a prisoner in the fort of Kangra where he was detained for many years, having endeavoured to cause a rebellion against Rajah Ajet Sing. In the meantime Pertab Sing, was obliged to save his life by flying from Kooloo when a child & having resided ever since in Kangra his existence was not ascertained in 1841 when the enquiry into the collateral relations of the family was instituted.

(Sd.) J. C. Erskine
Supdt. of Hill States

18. 1857 की क्रान्ति

कुल्लू 1846 ई. में अंग्रेजों के अधीन लाहौर सन्धि अनुसार आ गया था। राजा ठाकुर सिंह को वैध राजा न माना गया। इसलिये उसके अधिकार केवल बजीरी रुपी तक सीमित कर दिये गये। शेष राज्य अंग्रेजों ने सीधे अपने अधीन ले लिया।

अंग्रेज सुपरिन्टेण्डेट हिल स्टेटस आई. सी. इरस्किन के अनुसार राजा का अधिकार किशन सिंह के पुत्र प्रताप सिंह को जाता था। परन्तु उस समय उसका कुछ पता न था। मियां किशन सिंह ने राजा जीत सिंह के विरुद्ध विद्रोह किया था। जिसके कारण राजा जीत सिंह ने उसे मूंग के दुर्ग में बन्दी बनाये रखा और उसकी मृत्यु भी बन्दीगृह में हुई। उसकी पत्नी अपने बेटे के साथ कांगड़ा चली गई ताकि उसकी सुरक्षा हो। जहां राजा संसार चन्द ने उसे द्रमण के निकट राजगिरि में जागीर दी। प्रताप सिंह सात बर्ष तक वहीं पला। 1828 ई. में महाराजा रंजीत सिंह ज्वाला जी आया। प्रताप सिंह की मां उनसे मिलीं। उसने कुल्लू राजा द्वारा उसके पति पर किये गये अत्याचारों के बारे में जानकारी दी तथा अपने पुत्र को रक्षा के लिये प्रार्थना की। महाराजा रंजीत सिंह ने प्रताप सिंह को बगसेढ़ (कांगड़ा) का गांव जागीर में दिया और उसे शिक्षा दीक्षा के लिये अपने साथ लाहौर ले गया।

प्रताप सिंह राजा के अधिकार से वंचित

1841 ई. में राजा जीत सिंह की मृत्यु हुई। उसके उतराधिकारी रणवीर सिंह की लाहौर जाते हुए रहस्यमय ढंग से मृत्यु हो गई। प्रताप सिंह सिख पहाड़ी रियासतों के निजाम लहणा सिंह के साथ बजौरा तक आया। लहणा सिंह उसे कुल्लू का राजा बनाना चाहता था। परन्तु राजा ठाकुर सिंह ने 250 के लगभग प्रतिष्ठित व्यक्ति उसका विरोध करने के लिये भेजे। प्रताप सिंह उनके लिये अपरिचित था। जबकि ठाकुर सिंह उनका देखा परखा व्यक्ति था। यह बात भी उड़ाई गई कि प्रताप सिंह को इसलिये कुल्लू के बाहर पाला गया क्योंकि वह किशन सिंह की वैध सन्तान नहीं। वह लड़की के बदले में लिया गया भंगाल के गेहर सिंह का बेटा है। परिस्थितियां विपरीत देख लहणा सिंह प्रताप सिंह सहित वापस लौट गया। इस घटना से प्रताप सिंह को आघात पंहुचा।

प्रताप सिंह का कुल्लू आगमन

1845 ई. में अलीवाल के युद्ध में प्रताप सिंह सिखों के पक्ष में अंग्रेजों के विरुद्ध लड़ा जिसमें वह घायल हुआ। इसके पश्चात प्रताप सिंह का कुछ पता न चला। कुछ का विचार है कि वह सिराज में छिप कर अपने को

संगठित करता रहा। परन्तु इसका प्रमाण नहीं मिलता है। विचार है कि वह साधु के भेस में भ्रमण करता रहा। 1856 ई. में वह इसी भेस में कुल्लू आया। कायस में राज परिवार की नौकरानी ने उसको पहचाना। उसे बदाह जहां उसका परिवार रहता था ले जाया गया। इसके पश्चात वह अपने परिवार के साथ रहा। उसकी दोनों पत्नियों के एक–एक लड़का हुआ।

अपने भ्रमण के समय प्रताप सिंह ने अंग्रेजों द्वारा किये जाने वाले अन्याय तथा अत्याचार अपनी आंखों से देखे थे। जब राजा ठाकुर सिंह के पश्चात उसके अवैध पुत्र ज्ञान सिंह को ही राजा बनाया गया और उसके अधिकार को फिर नकारा गया तो उसका अंग्रेजों के प्रति रोष और तीव्र हो गया। दूसरी ओर अंग्रेजों ने ज्ञान सिंह को राजा के स्थान पर राये की उपाधि दी। उसे केवल आधी जागीर दी तथा नयायिक तथा प्रशासनिक अधिकार भी न दिये। इससे जनता में भी रोष फैल गया। राये ज्ञान सिंह तीन वर्ष तक अपने अधिकारों की प्राप्ति के लिये प्रयत्न करता रहा और अन्त में शेष आधी जागीर अधिकारों सहित प्राप्त करने में सफल हुआ।

प्रताप सिंह द्वारा क्रान्ति का प्रयास

1857 ई. में सारे भारत में स्वतन्त्रता संघर्ष आरम्भ हुआ। प्रताप सिंह ने भी क्रान्ति के नेताओं से सम्पर्क किया। रामपुर बुशैहर के राजा शमशेर सिंह ने अंग्रेजों का बार्षिक कर और सैनिक व्यय देना बन्द कर दिया। अंग्रेज उसके विरुद्ध कुछ न कर सके। जतोग और कसौली में सैनिकों ने विद्रोह किया। इन सब बातों से प्रताप सिंह को प्रेरणा मिली। उसने भी अंग्रेजों को उखाड़ फैंकने और राज्य प्राप्ति की योजना बना डाली। उसने अपने साथियों को संगठित किया।

प्रथम चरण में उसने राये ज्ञान सिंह और अंग्रेजों के बीच फूट डालने की सोची। सिखों द्वारा छोड़े शस्त्र कुल्लू राजभवन में थे। वजीर सूरत राम को उसके बारे जानकारी थी। सूरत राम वजीर प्रताप सिंह का परामर्श दाता बन गया था। उसने प्रताप सिंह द्वारा 'कर्नल हे' उपायुक्त कुल्लू को सूचना दी कि राये ज्ञान सिंह अंग्रेजों के विरुद्ध षड़यन्त्र कर रहा है और उसने काफी शस्त्र इकट्ठे कर लिये हैं। 'कर्नल हे' ने राजभवन की तलाशी ली। बारुद व्यास नदी में फैंक दिया तथा शस्त्र तुड़वा दिये। राये ज्ञान सिंह के कई कर्मचारी पकड़ लिये गये। प्रताप सिंह अंग्रेजों का विश्वास पात्र बन गया। वह ज्ञान सिंह तथा अंग्रेजों के बीच संदेह उत्पन्न करने में सफल हुआ।

मई 1857 में दूसरे चरण में प्रताप सिंह और उसके साले वीर सिंह ने शांगरी, बाहरी सिराज, भीतरी सिराज, कुल्लू, लाहौल स्पिति और बड़ा भंगाल के गांव के नेगी नम्बरदारों से सम्पर्क किया और क्रान्ति के लिये प्रेरित

किया। ग्रामीण मुखियों तक अपनी योजना पंहुचाई। इस प्रकार दो मास तक कार्य करते रहे। सशस्त्र टुकड़ियां बनाई। इसमें से एक टुकड़ी का 1853 ई. में स्थापित मोरवियन चर्च मिशन के पादरियों को लाहुल से भगाने का काम सौंपा। यह स्थानीय क्रान्ति दल था। हथियार तथा बारुद इकट्ठा किया। क्रान्ति रक्षा बन्धन के दिन आरम्भ करने की योजना थी। जनता को क्रान्ति के लिये तैयार करने के लिये एक पत्रक बनाया गया। इसकी कई प्रतियां जनता में बांटी गई। इसमें लिखा था 'सारे भारत में अंग्रेजों के विरुद्ध जन आन्दोलन खड़ा हो गया है। इसलिये सब कुल्लू निवासी 'मेजर हे' तथा राये ज्ञान सिंह को उखाड़ फैंकने के लिये उसकी सहायता करें। दुर्भाग्य से प्रताप सिंह का एक साथी पलाइच के तहसीलदार द्वारा 28 मई 1957 ई को पकड़ लिया गया। जिससे पत्रक की एक प्रति प्राप्त हुई ओर भेद खुल गया। उसने तुरन्त कुल्लू के उपायुक्त को सूचित किया। जिसने एक सैनिक टुकड़ी सिराज भेजी।

प्रताप सिंह द्वारा क्रान्ति तथा बन्दी बनाया जाना

प्रताप सिंह तथा उसके साथियों को जब इसका समाचार मिला तो उन्होंने तुरन्त सिराज के साथियों को इकट्ठा कर विद्रोह कर दिया तथा पलाइच की ओर कूच किया। परन्तु सैनिक टुकड़ी के आगे टिक न सके। अचानक विद्रोह के कारण सूचना कुल्लू तथा लाहुल न जा सकी और कहीं से भी सहायता न आ सकी। अत: वहां से वे भागे। प्रताप सिंह तथा साथियों को पकड़ने के लिये कई नाके लगाये गये। प्रत्येक नाके पर सात गार्ड और एक दफादार नियुक्त थे। तीसरे दिन वे अपने साथियों के साथ कण्डी जोत के निकट पंहुचे कि नाका किये टुकड़ी से फिर संघर्ष हो गया। प्रताप सिंह मैदान के क्रान्तिकारियों से जा मिलना चाहता था। इस संघर्ष में उसका एक साथी नोगा मारा गया। प्रताप सिंह अपने बीस साथियों के साथ पकड़ा गया। सर मिन्ट गुमरी जूडिशयल कमिशनर ने लिखा है कि प्रताप सिंह 28 जनवरी, 1846 अल्लीवाल (15 मील लुधियाना से) लड़ाई में मारा गया था तथा यह नकली प्रताप सिंह है। परन्तु वह अल्ली वाल में जख्मी हुआ था और अंग्रेजों की डिस्पैंसरी में ईलाज करा स्वस्थ हुआ।

प्रताप सिंह तथा साथियों पर अभियोग तथा दण्ड

उसे धर्मशाला भागसू जेल में बन्द कर दिया गया। एक कमिशन गठित कर राज द्रोह का अभियोग चलाया गया। कमिशन का अध्यक्ष कांगड़ा का जिलाधीश मेजर टेलर था। प्रताप सिंह तथा वीर सिंह को फांसी की सजा सुनाई गई। पंजाब के जूडिशियल कमिशनर की स्वीकृति प्राप्त कर दोनों को तीन अगस्त 1857 को फांसी दे दी गई। फांसी के दृश्य शेष 12 को भी

बताया तथा एडबर्ड जान लेक ने इस बारे लिखा, "कुल्लू घाटी के जन साधारण को आंतकित करने के लिये यह काफी है।" उसके साथी सरदूल को चौदह वर्ष, कांशी राम को बारह बर्ष, धुल को बारह बर्ष, मान दास को दस वर्ष, सूरत राम को आठ बर्ष, केशव राम को चार बर्ष तथा देवीदत को तीन वर्ष कठोर कारावास का दण्ड दिया। शेष बारह साथियों को जमानत पर छोड़ दिया गया। चौदह अगस्त 1857 ई. को तीन अन्य क्रान्तिकारी पुलिस यातना से मर गये। सिराज के 25 क्रान्तिकारी नेताओं के मकान गिरा दिये गये। प्रताप सिंह का मकान भी ध्वस्त कर दिया गया। प्रताप सिंह की पत्नी रानी रणपतु अपने बच्चे के साथ कांगड़ा चली गई। उनकी जमीन भी छीन ली गई। अचानक विद्रोह की मजबूरी ने क्रान्ति का योजनाबद्ध तरीका छिन्न भिन्न कर दिया। सावधानी के लिये कुल्लू में 14 पुलिस चौंकिया बनाई गई। 50 गार्ड और 60 पुलिस गार्ड भर्ती किये गये।

स्थिति स्पष्ट होने पर राये ज्ञान सिंह के आदमी छोड़ दिये गये। परन्तु इस घटना से मेजर 'विलियम हे' उपायुक्त बहुत आंतकित तथा शंकित हो उठे। इस मास में कुल्लू में हैजा फैल गया था। कोई स्त्री सुलतानपुर में हैजे से मर गई। इस लिये उसको उसी समय रात को जला दिया गया। लोग मशालों की रोशनी में लौट रहे थे। रात को अन्धेरे में पंक्तिबद्ध चलते हुये लोग दूर तक दिखाई देते थे। समझा गया कि क्रान्तिकारी इकट्ठे होने के लिये राजभवन की ओर जा रहे हैं। कर्नल हे तुरन्त सैनिक टुकड़ी ले वहां आ गया। वास्तविकता मालूम होने पर वापस लौट गया।

19. स्वतंत्रता संघर्ष

श्री रास बिहारी बोस का आगमन

क्रान्ति के पश्चात 1912 ई. तक कोई राजनैतिक हलचल न हुई। देहली में लार्ड हार्डिंग पर बम फैंकने पर सारे देश में पकड़ धकड़ शुरु हुई। अपनी गिरफ्तारी से बचने के लिये श्री रास बिहारी बोस कुल्लू पंहुचें और दो दिन श्री शिवदयाल के पास अखाड़ा बाजार में ठहरे। तीसरी रात रास्ते की जानकारी ले लाहुल चले गये। जब पुलिस को इसकी जानकारी मिली तो शिवदयाल को छः मास तक थाना में उपस्थिति के लिये बुलाया जाता रहा।

असहयोग आन्दोलन तथा अन्य घटनायें

1920 ई. में भारत में असहयोग आन्दोलन चला। कुल्लू भी इससे अछूता न रहा। गांधी टोपी तथा खद्दर को लोग अपनाने लगे। गोविन्द राम गांव पुजारली (निरमण्ड) तथा नाथूराम शेरदिल सरसेई निवासी ने इस आदोलन में भाग लिया। नाथूराम कामरेड रामचन्द्र के अधीन लाहौर में काम करते रहे। गोविन्द राम को दो बर्ष तथा नाथू राम को एक बर्ष के कारावास का दण्ड मिला। नाथू राम स्वतन्त्रता आदोंलन पर कई बार जेल गये। उन्हें 1933 ई. में 8 मास का दण्ड मिला था।

कुल्लू आर्य समाज की इस समय तक स्थापना हो चुकी थी। भाई परमानन्द 1922 ई. में कुल्लू आये और आर्य समाज में ठहरे। उन्होंने लोगों को स्वतन्त्रता संघर्ष में भाग लेने के लिये कहा। 1927 ई. में कांग्रेस का अधिवेशन सुजानपुर टीरा (ताल) में हुआ। इससे पहाड़ी क्षेत्र में कांग्रेस की गतिविधियां बढ़ीं। उसके पश्चात शिवसिंह सुलतानपूर निवासी अपने भाई राम सिंह के साथ स्वतन्त्रता संघर्ष में कूद पड़े। शिव सिंह मूल निवासी सुजानपुर टीरा के थे। उन्हें एक बर्ष छः मास की सजा धर्मशाला जिला कोर्ट में हुई। इन्हें मुलतान जेल में रखा गया। जहां से 6 मास 15 दिन की सजा भुगतने पर इन्हें छोड़ा गया।

डाण्डी मार्च के पश्चात नमक सत्याग्रह सारे देश में चला। कुल्लू में भी जलसा हुआ। पुलिस के आने से पूर्व जलसा के आयोजक भूमिगत हो गये। परन्तु एक रात एक गाने के कार्यक्रम देखते हुये इनमें से कुछ व्यक्तियों को पुलिस ने जा पकड़ा। इन्हें इस प्रकार कारावास की सजायें हुई। सर्वदयाल एक बर्ष 6 मास, जसवन्त सिंह, भगवन्त सिंह, अमर चन्द सोहल, मौला बक्श सभी को एक–एक बर्ष का दण्ड मिला।

दशहरा का उत्सव आया। इस मेलें में लोग बड़ी संख्या में इकट्ठे होते थे। ऐसे समय किसी बड़े जलसे या घटना की रोकथाम के लिये बलोच पुलिस भेजी गई। लोगों को आंतकित करने के लिये दो थानेदार एक हवलदार तथा पन्द्रह सिपाहियों की टुकड़ी अखाड़ा बाजार में मार्च करती हुई आई। कांग्रेस कार्यालय पर झंडा लहराते देख कर टुकड़ी रूक गई। कांग्रेस प्रधान शिवदयाल कों बुला कर झंडा उतारने के लिये कहा और अभद्र व्यवहार किया। वेद व्यास ने विरोध किया। परिणाम स्वरुप पुलिस के साथ दोनों बाप बेटे भिड़ गये। शिवदयाल के सिर और कान पर चोट आई। दोनों बाप बेटे को पकड़ लिया गया और डेढ़–डेढ़ बर्ष की दोनों को सजा हुई। इन सभी बातों का ग्रामीण आचंलों में भी प्रभाव पड़ा। बाहरी सिराज के कोठी बरामगढ़, नारायणगढ़ तथा धौलकोट के लोगों ने कर देना बन्द कर दिया। भीतरी सिराज के लोगों ने पाला घर में लकड़ी, घास और कोयला लाना बन्द कर दिया। बुलाने पर तहसील में उपस्थित नहीं होते थे। तीन से पांच रुपये जुर्माना किया गया जिसे देने से इन्कारी की। राजस्व न देने पर दो लोग पन्द्रह बीस से बन्दी बनाये गये। सरकार के विरुद्ध गतिविधियों के लिये श्यामा नन्द निरमण्ड निवासी तथा कांशी राम को बीस रुपये जुर्माना किया गया।

प्रांतीय कौंसिल के चुनाव

1937 ई. में पंजाब प्रांतीय कौंसिल के लिये चुनाव हुये। मत अधिकार पांच रुपये राजस्व या आय कर देने वाले या मिडल पास शिक्षा वाले को ही था। कुल्लू से राये भगवन्त सिंह चुने गये। इनके प्रतिद्वन्दी राजा रघुवीर सिंह जागीरदार शांगरी थे।

नागर दास पटेल द्वारा आन्दोलन संचालन

1941 ई. में कांग्रेस के कार्यक्रमों को चलाने तथा संगठन दृढ़ करने के लिये नागर दास पटेल अहमदाबाद गुजरात निवासी को कुल्लू भेजा गया। उन्होंने स्वतन्त्रता प्राप्ति तक नंगे पांव रहने का व्रत लिया था। वह आर्य समाज के सदस्यों के पास रहते थे। इनके प्रयत्नों से बड़ी चेतना आई। ग्रामीण अंचलों में भी कांग्रेस संगठन बना। निरमण्ड तथा जगतसुख गांव के लोग अधिक सक्रिय थे। अयोध्या दास जगतसुख के पहले ऐसे व्यक्ति थे जिन्हें हथकड़ियां पहनाकर सारे बाजार कुल्लू में घुमाया गया था। 1942 ई. में प्रिंसीपल छबील दास के अधीन एक विशाल जलसा ढालपूर में हुआ। उसी वर्ष ज्वाहर लाल नेहरु, इन्दिरा गांधी के साथ निकोलोई रोरिख के पास नग्गर

आये। उन्होंने अपने प्रवास के समय दो बड़ी जनसभाओं को कुल्लू तथा मनाली में सम्बोधित किया। भारत छोड़ों आंदोलन अभी शुरु न हुआ था। उन्होंने लोगों को संघर्ष के लिये और स्वतन्त्रता के लिये सर्वस्व बलिदान के लिये कहा। भारत छोड़ों आंदोलन में नागर दास पटेल, मनसा राम तथा सर्वदयाल ने अपनी गिरफ्तारियां दी।

इस समय कुल्लू के कंवर टेढ़ी सिंह एक नेता के रुप में उभर रहे थे। उसने लाहौर से बकालत पास की थी। अच्छा कवि लेखक तथा पत्रकार था। परन्तु उनके जीवन ने उनका साथ न दिया। टेढ़ी सिंह ही ठाकुर बेली राम को राजनीति में लाया था।

1945 ई. में पंजाब विधान सभा के चुनाव हुये जिसमें कांग्रेस के ठाकुर बेलीराम चुने गये जिन्होंन ठाकुर राम दास (यूनियनिस्ट पार्टी) को हराया।

स्वतन्त्राता समारोह

15 अगस्त 1947 को देश स्वतन्त्र हुआ। ढालपूर में सेवानिवृत तहसीलदार मियां जगत सिंह ने झंडा लहराया। आधी रात तक बड़ी जनसभा हुई। रेडियो पर नेहरु जी का भाषण सुन सभा समाप्त हुई और इसके साथ स्वतन्त्रता संग्राम का संघर्ष भी। कटराई स्कूल में भी जलसा हुआ। देवता भी इसमें सम्मिलित हुये। पूरा मेला लगा।

स्वतन्त्रता संघर्ष –कुछ सरकारी फाईल से

कुल्लू में स्वतन्त्र संघर्ष गतिविधियों का पता सरकारी फाईल से भी लगता है। 1930 ई. में कांग्रेस द्वारा पूर्ण आजादी की मांग के दृष्टिगत सरकार ने हर मास तहसील अधिकारियों को रिपोर्ट देने के लिये कहा। इन अधिकारियों द्वारा भेजी गई रिपोर्टों का संक्षिप्त वर्णन इस प्रकार है :

1. तहसीलदार कुल्लू की रिपोर्ट

कुल्लू में कोई नियमित कांग्रेस संगठन नहीं परन्तु ये व्यक्ति कांग्रेस के कार्यक्रम में भाग लेते हैं:–

अमीचन्द्र दर्जी, भगवंत सिंह सुपुत्र श्री अच्छर सिंह, परमेश्वरी दास, खैरातीलाल, गेहरु पुत्र ठाकुर दास, प्यारेलाल पुत्र केसरी दास, फता राम, प्राणनाथ पुत्र मेला राम, भगवन्ता, पोहलो पुत्र गंगूनाथ, तीर्थराम, सर्वदयाल मणीकर्ण निवासी, सरुपलाल, मौलाबक्श, किरपा राम सूद, वेद व्यास,

चन्दनदास, नथूमल, भीमसैन, अमरु कुम्हार, राम बिहारी, बाबा नागा, दसौंधी तथा तिलकराम।

ये सभी कुल्लू में बाहर से आये थे। कुल्लू के मूल निवासियों में राजनीति में कोई रुचि नहीं है। अमीचन्द्र दर्जी सभी खद्दर के कपड़े मुफ्त में सीता था। मनसा राम पंजाबी कवितायें सूनाता है। चन्दनदास सन्यासी बाबा नशाबन्दी, विदेशी माल बायकाट खद्दर अपनाने की बात करता है।

2. **रिपोर्ट दिनांक** 26.1.1930

पेशावर के गोलीकाण्ड पर हड़ताल हुई। मौलाबक्श ने एक गधे को हैट पहनाकर जलूस निकाला और बाद में इसकी होली जलाई। प्यारेलाल की अध्यक्षता में सुलतानपुर में जलसा हुआ। तिलक विजय ने भाषण दिया। वेद व्यास ने नारे लगाये।

3. **रिपोर्ट दिनांक** 8.5.1930

महात्मा गांधी को कैद पर हड़ताल हुई। मौलाबक्श ने विदेशी कपड़ों की होली जलाई। एक जलसा प्रीणी जठेर में भी हुआ। सन्यासी बाबा के साथ अजुध्या प्रसाद जगतसुख थे।

4. **रिपोर्ट दिनांक** 13.5.1930

असहयोग आन्दोलन के लिये अखाड़ा सराय के पास जलसा हुआ। सरकार को कोई कर न देने का निर्णय हुआ। मनसा राम, सर्वदयाल तथा प्यारेलाल को पकड़ा गया। भविष्य में ऐसी गतिविधियों में भाग न लेने के शपथ पत्र देने पर छोड़ दिये गये।

5. **जुलाई** 1930 **ई. की रिपोर्ट**

9 जून 1930 को नेगियों तथा विश्वास पात्रों की मीटिंग की गई। जसमें वजीर अहमद द्वारा लिखित दस प्रश्न और उनके उतर की दो सौ प्रतियां बांटी गई।

इस मास शिमला से सात युवक प्रचार करते नारकण्डा सिराज के रास्ते पैदल आये। ये लोगों को कवितायें सुनाते खद्दर और नशाबन्दी का प्रचार करते आये। अखाड़ा में पीपल के पास 250 लोगों की सभा में इन्होंने भाषण दिये।

बन्जार में गतिविधियां

24.7.1930 को भीम सैन बन्जार गया और सूरज के मकान में ठहरा बन्जार में ये कांग्रेसी थे।

सोहणू, हंसू, बरागी राम, तुलसी राम महाजन, अच्छर, मेहरु, चमन, शिवराम, कीमतराम, सोहनलाल, पूर्णमल, परमा (चेहणी) सूरज तथा नाथ। जलसा हुआ जिसमें चैहणी, तिलोकपुर, शिकारी और पलाइच के कोई तीन सौ लोग सम्मिलित हुये। भीमसैन ने सबको सरकार से असहयोग करने के लिये कहा। बात फैल गई। लोगों ने बेगार देना बन्द कर दिया। पाला घरों में घास लकड़ी कोयला देना बन्द कर दिया। बुलाने पर तहसील न आने लगे। तीन से पांच रुपये जुर्माना किया गया जिसे देने से भी इन्कार किया। पन्द्रह बीस कोठी के दो लोगों को बन्दी बनाने से लोग डर गये और राजस्व देने लगे। सरकारी कर न देने वाली कोठियां बाहरी सिराज में नारायण गढ़, धौलकोट और बरामगढ़ थीं। सरकार के विरुद्ध गतिविधियों के लिये श्यामानन्द निरमण्ड और कांशी राम को पच्चीस–पच्चीस रुपये जुर्माना किया गया।

20. बंटवारे की आंधी

लूट, भय और आतंक का वातावरण

1947 ई. में भारत के बंटवारे की आंधी कुल्लू में भी पंहुची। समाचार पढ़कर तथा बरर्वता की गाथायें सुन कर लोगों की भावनायें भड़कीं। अफवाहों ने इस में जलती का काम किया। एक रात अचानक आग की घटनायें हुईं। भून्तर, बजौरा, शमशी, कुल्लू पतली कूहल और मनाली में कई भवन आग की भेंट हो गये। फिर लूट आरम्भ हुई। कई दुकानें तथा मकान लूटे गये। इस पर पैट्रोल का गोदाम, गोला बारुद और शराब का ठेका भी सम्मिलित था। इसके पश्चात मार काट आरम्भ हुई। हर ओर भय और आतंक का वातावरण था। कई शहर छोड़ ऊंचे स्थलों में चले गये।

प्रशासन द्वारा कार्यवाही

प्रशासन हरकत में आया। 135 वारण्ट गिरफ्तारी जारी हुये। कुछ ही पकड़े गये। अधिकतर इधर–उधर जा छुपे। ये प्रमुख व्यक्ति पकड़े गये :

वकील प्राण नाथ सूद, लाल चन्द प्रार्थी, वेद व्यास पासी, जगन्नाथ गिड़ी इत्यादि। यह सभी योल कैम्प जेल में रखे गये। अभी धर पकड़ जारी थी कि दिल्ली में महात्मा गांधी की हत्या हो गई। राष्ट्रीय स्वयंसेवक संघ पर प्रतिबन्ध लगा। गिरफ्तारी का दूसरा दौर आरम्भ हुआ। इस बार बन्दी बनाये गये लोग इस प्रकार थे :

देवराज विग, सुखीलाल टण्डन, वेद व्यास सल्हूरिया, ओम प्रकाश बिजली, कामरेड सन्त पाल, महन्त मोती राम इत्यादि। इन्हें भी योल कैम्प जेल में रखा गया।

प्रशासन की सहायता के लिये एक गोरखा सैनिक टुकड़ी भेजी गई परन्तु उससे पूर्व सामान्य स्थिति हो गई थी। फिर भी यह टुकड़ी छः माह तक ढालपुर में शिविर लगा कर रही।

21. स्वतन्त्रता के पश्चात

राजनैतिक दल तथा चुनाव परिणाम

स्वतन्त्रता के पश्चात कुल्लू में एक ही दल था। 'ऑल इण्डिया कांग्रेस दल' कुल्लू पंजाब में था और पंजाब में कांग्रेस मंत्रीमण्डल था। ठाकुर बेली राम 1947 से 1951 तक कुल्लू से पंजाब विधान सभा के सदस्य रहे। वह संसदीय सचिव बने तथा राजस्व और परिवहन मंत्रालय से सम्बन्धित रहे और उक्त विभिागों की देख रेख करते रहे।

चुनाव 1952 ई.

आजादी के पश्चात पहला चुनाव 1952 में हुआ। कुल्लू में उस समय दो विधान सभा क्षेत्र थे। कुल्लू तथा सिराज। कुल्लू से लाल चन्द प्रार्थी तथा सिराज से राजा रघुवीर सिंह चुने गये। कुल्लू जिला कांगड़ा में था और कांगड़ा की एक ही संसदीय सीट थी जिस पर हेमराज सूद जीतते रहे।

चुनाव 1957 ई.

1957 के चुनाव में कुल्लू दोहरा चुनाव क्षेत्र बना। जिसमें एक स्थान अनुसूचित जाति के लिये आरक्षित था। आरक्षित स्थान से जीत राम और सामान्य सीट से राजा रघुवीर सिंह सफल हुये। इस बार राजा रघुवीर सिंह पंजाब मंत्रीमण्डल में उप मंत्री भी बने।

चुनाव 1962 ई.

1960 ई. में लाहुल पृथक जिला बना। 1963 में कुल्लू को भी जिला का दर्जा मिला जिस कारण चुनाव क्षेत्रों में फेर बदल किया गया। अब कुल्लू के तीन चुनाव क्षेत्र कर दिये गये। आनी, कुल्लू तथा बन्जार। बन्जार अनुसूचित जाति के लिये आरक्षित घोषित किया गया। कांग्रेस को इस चुनाव में एक मात्र सीट आनी मिली। बन्जार से बंसी राम तथा कुल्लू से लाल चन्द प्रार्थी सफल हुये। ठाकुर बेली राम जिला परिषद कांगड़ा के चैयरमेन प्रथम मार्च 1962 को चुने गये। 27 अप्रैल 1962 को वह पंजाब विधान परिषद के सदस्य बने और 1966 तक सदस्य बने रहे।

चुनाव 1967 से 1972 ई. तक

1.11.1966 को कुल्लू हिमाचल प्रदेश में सम्मिलित हो गया। चुनाव क्षेत्रों में भी फेर बदल किया गया। आनी क्षेत्र आरक्षित घोषित हुआ। बन्जार सामान्य चुनाव क्षेत्र बन गया। लाल चन्द प्रार्थी कांग्रेस में पुनः आ चुके थे। 1967 तथा 1972 ई. के चुनाव में तीनों सीटें कांग्रेस को मिली जिन पर दोनों बार कुल्लू से लाल चन्द प्रार्थी बन्जार से दिले राम शबाव तथा आनी से ईश्वर दास चुने गये। पहली बार लाल चन्द प्रार्थी हिमाचल प्रदेश में मंत्री मण्डल में केबिनेट मंत्री बने और 1977 तक मंत्री बने रहे। संसदीय सीट के लिये कुल्लू मण्डी क्षेत्र से जोड़ा गया जहां से वीरभद्र सिंह कांग्रेस उम्मीदवार चुने गये। इस समय अन्य दो राजनैतिक दल भी कुल्लू के कुछ क्षेत्रों में अपना प्रभाव बना चुके थे।

चुनाव 1977 ई.

ये थे 'जनसंघ तथा साम्यवादी (मार्कस) दल' परन्तु इन दलों को चुनाव में कभी सफलता न मिली। कुछ और दलों का शोर चुनाव के समय सुनने को मिल जाता था। चुनाव परिणाम के पश्चात वे अगले चुनाव तक के लिये लुप्त हो जाते थे। 1976 ई. में आपात स्थिति घोषित हुइ। लोगों पर अत्याचार हुये। कई दलों ने मिलकर जनता पार्टी बनाई। पहली बार लोगों ने कांग्रेस छोड़ जनता पाटी को मत देकर आपात स्थिति के अत्याचारों का विरोध जताया। कुल्लू तथा बन्जार की सीटें जनता पार्टी को मिलीं। कुल्लू से ठाकुर कुन्जलाल तथा बन्जार क्षेत्र में महेश्वर सिंह सफल हुये। आनी क्षेत्र से कांग्रेस जीत गई। इस बार भी वहां से ईश्वर दास सफल हुये थे।

ठाकुर कुन्जलाल हिमाचल प्रदेश मंत्री मण्डल में राज्य मंत्री तथा महेश्वर सिंह संसदीय सचिव बने। संसदीय क्षेत्र मण्डी कुल्लू से गंगा सिंह जनता पार्टी के प्रत्याशी चुनाव में सफल हुये। परन्तु 1980 में संसदीय चुनाव में सुखराम कांग्रेस प्रत्याशी सफल हुये। हिमाचल का जनता मंत्री मण्डल भी टूट गया। इसका एक धड़ा कांग्रेस में मिल गया। इसका बहुमत होने पर मंत्री मण्डल बना। जनता पार्टी में जनसंघ धड़े ने भारतीय जनता पार्टी बनाई।

चुनाव 1982 ई.

1982 के चुनाव में तीनों विधान सभा सीटें भारतीय जनता पार्टी को मिलीं। कुल्लू से कुन्जलाल, बन्जार से महेश्वर सिंह तथा आनी से खूबराम चुने गये। परन्तु मंत्री मण्डल हिमाचल में कांग्रेस का बना।

चुनाव 1985 ई.

1985 ई. में विधान सभा के पुन: चुनाव हुये। इस बार तीनों सीटें कांग्रेस को मिली। राजकृष्ण गौड़ कुल्लू से, सत्य प्रकाश बन्जार से तथा ईश्वर दास आनी से सफल हुये। हिमाचल में कांग्रेस मंत्री मण्डल बना और राजकृष्ण गौड़ राज्य मंत्री बने। इसी बर्ष संसदीय चुनाव हुये। भारतीय जनता पार्टी का प्रत्याशी महेश्वर सिंह था और कांग्रेस का सुखराम प्रत्याशी था। पहली बार संसद के लिये कुल्लू के किसी व्यक्ति को किसी प्रभावशाली दल का टिकट मिला था। लोगों ने दल सीमायें लांघ कर महेश्वर सिंह को वोट दिया और उसे सफल बनाया।

संसदीय चुनाव 1988 तथा 1991 ई.

1988 के चुनाव में ये दिग्गज फिर टकराये। इस बार पासा पलट गया। सुखराम इस बार सफल हुये। 1991 के चुनाव में भी सुखराम ने संसदीय सीट पर अपनी सफलता को दोहराया।

विधान सभा चुनाव 1989 ई.

1989 में विधान सभा चुनाव हुये। विधान सभा की तीनों सीटें भारतीय जनता पार्टी को मिली। कुल्लू से कुन्ज लाल, बन्जार से कर्ण सिंह तथा आनी से खूबराम सफल हुये। ठाकुर कुंजलाल केबिनेट मंत्री बने। महेश्वर सिंह भारतीय जनता पार्टी के प्रांतीय प्रधान इसी समय बनाये गये तथा बाद में राज्य सभा चुनाव होने पर राज्य सभा के सदस्य निर्वाचित हुये। विधान सभा के लिये कांग्रेस तथा भारतीय जनता पार्टी के धूप छांव का खेल लगा है। चुनाव में भविष्य वाणियां करना असम्भव होता जा रहा है। कोई दल इस बात का दावा नहीं कर सकता कि किसी अंचल के मत उसके हैं। कुल्लू के मतदाता सतर्क तथा विवेकी हैं। और वे उचित समय पर उचित निर्णय लेने की क्षमता रखतें हैं। परन्तु यह बात सुखद है कि यहां दो दल प्रणाली आरम्भ हो चुकी है।

चुनाव 1993 ई.

छ: दिसम्बर 1992 को अयोध्या में बाबरी मस्जिद के ढांचे को गिराये जाने के पश्चात केन्द्रीय सरकार ने भारतीय जनता पार्टी की सभी राज्य सरकारों को बर्खास्त कर दिया। इस प्रकार हिमाचल विधान सभा भी भंग हुई

और राष्ट्रपति राज स्थापित हो गया। 9 नबम्वर 1993 को चुनाव हुये। तीनों सीटों पर कांग्रेस प्रत्याशी सफल हुये। कुल्लू क्षेत्र से राजकृष्ण गौड़, बन्जार क्षेत्र से सत्य प्रकाश ठाकुर तथा आनी क्षेत्र से ईश्वर दास चुने गये। 20.12.1993 को ठाकुर सत्य प्रकाश मुख्य संसदीय सचिव बने। उन्हें राज्य मंत्री का दर्जा दिया गया तथा बागवानी विभाग का स्वतन्त्र कार्यभार सौंपा गया। 9.10.1995 को मंत्री मण्डल विस्तार किया गया। श्री राज कृष्ण गौड़ ने राज्य मंत्री बनने से इन्कार कर दिया। क्योंकि वरिष्ठता के नाते केबिनेट मंत्री पद चाहते थे। श्री सत्य प्रकाश राज्य बागवानी मंत्री बनाये गये। 3 अक्तूबर, 95 को श्री ईश्वर दास उपाध्यक्ष विधान सभा हिमाचल प्रदेश बनाये गये।

संसदीय चुनाव 1996 तथा 1997 ई.

27.4.96 को संसदीय चुनाव हुये। भाजपा के अदन सिंह को हरा कांग्रेस के सुखराम जीते तथा केंद्र में संचार मंत्री बने। परन्तु भ्रष्टाचार के आरोप में उन्हें त्यागपत्र देना पड़ा और उन्हें बन्दी बनाया गया। 16 अगस्त को छापे में उनसे 4 करोड़ की सम्पति मिली। 3.11.97 को लोक सभा भंग हुई। नये चुनाव के लिये विधान सभा भी भंग कर दी गई। विधान सभा तथा लोक सभा के चुनाव एक साथ किये गये। मंडी संसदीय सीट के लिये राजा महेश्वर सिंह (भाजपा) तथा रानी प्रतिभा सिंह पत्नी वीरभद्र सिंह के मध्य मुकाबला हुआ जिसमें महेश्वर सिंह विजयी रहे।

विधानसभा चुनाव 1997 ई.

विधान सभा के लिये चन्द्रसेन कुल्लू भाजपा तथा कर्ण सिंह बंजार (भाजपा) तथा ईश्वर दास आनी कांग्रेस विधान सभा क्षेत्र से विजयी रहे।सुख राम मंडी ने हिमाचल विकास पार्टी बनाई। जिसे चार विधान सभ सीटें हिमाचल में मिलीं। कांग्रेस के वीरभद्र ने मुख्यमंत्री की शपथ ली।परन्तु विधान सभा में बहुमत न सिद्ध कर सके। अब श्री धूमल ने विकास पार्टी की सहायता से बहुमत प्राप्त कर मंत्री मंडल बनाया। बदले में सुखराम के बेटे अनिल शर्मा भाजपा की सहायता से राज्यसभा का सदस्य बना। राज्य मंत्री मंडल में कर्ण सिंह मंत्री बने तथा इन्हें प्राथमिक शिक्षा का स्वतंत्र विभाग मिला।

केंद्र में बी.जे.पी सरकार न बन सकी। किसी भी दल को बहुमत न मिलने के कारण लोक सभा पुनः भंग कर दी गई। मंडी संसदीय सीट पर महेश्वर सिंह (भाजपा) तथा कौल सिंह (कांग्रेस) में मुकाबला हुआ। महेश्वर

सिंह इस बार फिर जीत गये। केंद्र में वाजपेयी द्वारा गठबंधन सरकार बनाई गई। जिस में शान्ता कुमार मंत्री बने।

विधानसभा चुनाव 2003 ई.

मार्च 2003 में विधान सभा चुनाव पुनः हुये। इस बार कुल्लू विधान सभा क्षेत्र से राजकृष्ण गौड़, बंजार से खीमी राम तथा आनी से पुनः ईश्वर दास चुने गये। हिमाचल में कांग्रेस को दो तिहाई बहुमत मिला। राजकृष्ण गौड़ को मंत्री मंडल में लिया गया और वह कृषि मंत्री बने। राजा वीरभद्र मुख्यमंत्री बने। लोक सभा के समयसे पूर्व चुनाव कराये गये। मुकाबला श्रीमती प्रतीभा सिंह तथा महेश्वर सिंह के मध्य हुआ। प्रतिभा सिंह विजय रही। परन्तु इस बार कांग्रेस वाम दलों की सहायता से केंद्र में गठबंधन सरकार बनाने में सफल हुई। मनमोहन सिंह कांग्रेस के प्रधानमंत्री बने। मंडी संसदीय क्षेत्र अब चुनाव क्षेत्रों का पुर्नगठन हुआ है। जिस द्वारा अब कुल्लू में तीन के स्थान चार विधान सभा क्षेत्र होंगे। मनाली, कुल्लू, बंजार तथा आनी। संसदीय क्षेत्र मंडी में भी फेरबदल किया गया है। आगामी चुनाव इस दृषिट् से और भी रोचक हो जायेंगे।

22. राजा की भूमिकायें

कुल्लू के राजतन्त्र का अध्ययन करने पर राजा के तीन निम्न भूमिकायें उभर कर सामने आती हैं:

1. राजनैतिक 2. धार्मिक 3. व्यैक्तिक।

राजनैतिक भूमिका

राजा सारी राजनैतिक सत्ता का स्रोत था। राजा का पद पैतृक होता था। वह युद्ध के समय सेनापति तथा शान्ति के समय मुख्य शासक था। सभी अधिकारियों की नियुक्ति वह स्वयं करता था। राजा अपने सम्बन्धियों को उच्च पद पर नियुक्त नहीं करता थे क्योंकि उसके शक्तिशाली हो जाने तथा विद्रोह करने का भय बना रहता था। किसी को उन्नति देना, निकालना या दण्ड देना उसकी इच्छा पर निर्भर करता था। उसकी बात ही कानून थी। उसका निर्णय अन्तिम होता था। सेना स्थाई नहीं थी। राज अधिकारी, ग्राम अधिकारी ही सैनानायक की भूमिका आवश्यकता पर निभाते थे। प्रजा ही सेना कार्य करती थी। राजा ही ग्राम मुखिया की नियुक्ति करता था।

राजा के नाम से विशेष प्रत्यय जोड़े जाते थे जो प्रचलन के साथ बदल दिये जाते थे। सिंह प्रत्यय का प्रचलन होने पर पाल के स्थान पर सिंह प्रत्यय कुल्लू राजाओं ने भी जोड़ा। राजा के नाम से पूर्व महाभटारक, महाराज रघु सहाय राजा श्री आदि शोभायुक्त शब्द प्रयोग किये जाते थे। मुगल सम्राटों ने अपने पत्रों में कुल्लू राजाओं को जमींदार लिखा और सम्बोधित किया। जमींदार अर्थात भूमिदार जो अमीरों तथा मनसबदारों की श्रेणियों में आते थे जिनसे सैनिक सहायता की आशा की जा सकती थी। नई भूमि की जुताई के लिए राज आज्ञा आवश्यक थी क्योंकि वह सारी भूमि का स्वामी था। इसी प्रकार जंगल पर भी उसका पूरा अधिकार होता था। वृक्ष काटने के लिये उसकी स्वीकृति आवश्यक थी। उसकी कसम खा कर या छू कर झूठ बोलना पाप समझा जाता था। उसकी उपस्थिति में थूकना भी दण्डनीय था।

धार्मिक भूमिका

राजा के धार्मिक अधिकार भी असीम थे। उसका अभिवादन "जयदेवा" कह कर किया जाता था। जयदेवा, जय भू देव का बिगड़ा रुप है। यह अभिवादन उसे देवता श्रेणी में ला देता है। देवाधिदेव रघु नाथ जी का कारदार बनने पर वह सभी देवताओं का अभिभावक भी बन गया। इसीलिये

देवाधिदेव के आगे झुकने के पश्चात देवता राजा को आशीर्वाद देने जाते हैं। देवता के कारकून राजा की आज्ञा का पालन करते थे। राजा के निमन्त्रण पर उन्हें आना पड़ता था। देवता को मुआफी राजा से मिलती थी। परन्तु देवता उसे राजा भणानी पुकारते हैं। जिस अनुसार वह देवताओं की चाकरी के लिये बाध्य है। जय धार पर दिये गये वचनानुसार वह देवताओं के लिये अब भी राजा है। क्योंकि देवताओं ने उसे राजा बनाये रखने का वचन दिया था।

कारदार तथा पुजारी की नियुक्ति भी राजा से मिलती थी। देवताओं के रथों का आकार भी वही निश्चित करता था। अतः राजा की आज्ञा देवताओं और उनसे सम्बन्धित अनुयाईयों को माननी ही पड़ती थीं। देवताओं की तरह ही राजाओं की आरती उतारी जाती थी। नये मेलों के लिये राजा आज्ञा लेनी पड़ती थी। राजा से मिलने के समय सिर ढका हुआ नजरें नीची पांव नंगे रखने पड़ते थे तथा झुककर जयदेवा या जय जय महाराज कहना पड़ता था।

राजा का निजी जीवन

कुल्लू के राजा अपने को काश्यप गोत्रीय पुडींर क्षत्रीय वंश लिखते थे। राजा राज्य का स्वामी ही नहीं प्रजा का पिता भी था। राजा पर प्रजा की अटूट श्रद्धा और विश्वास होता था। भले ही राजाओं ने लोक कल्याण के कार्य न किये हों। राजा किसी व्यक्ति का जाति से भी बहिष्कार कराते थे जो सबसे कठिन दण्ड था। साधारण श्रेणी से विशिष्ट श्रेणी में किसी व्यक्ति को बिठाने का अधिकार भी उसे था। राजा विलासतापूर्ण जीवन व्यतीत करता था। वह कई विवाह करता था और उसकी कई रानियां होती थी। उसकी सन्तानें अन्य स्त्रियों से भी पैदा होने के प्रमाण मिलते हैं। वह मुकुट धारण करता था और गहने पहनता था। वह शासकीय पालकी में निकलता था। राजा की रानियों तथा पुत्र पुत्रियों को भी पालकी की सुविधा थी। भेंट दिये बिना राजा से मिलना सम्भव न था। यदि राजा गांव आये तो भी भेंट चढ़ानी पड़ती थी।

राजा के शिकार के लिये जंगल निशिचत होते थे जिसमें अन्य व्यक्ति शिकार नहीं खेल सकते थे। शिकार खेलना एक बड़ा अभियान होता था जिसमें शिकार खदेड़ कर सुविधाजनक स्थान में लाने के लिये कई व्यक्ति कार्य करते थे। राजा बहादुर सिंह बड़ोगी गांव से ऊपर पहाड के जंगल में शिकार खेलने के लिये जाया करते था और उसके नाम से ही एक सबसे ऊंचे टीले को आज भी "राजा बहादुर की थल" कहा जाता है। थल का मतलब बैठने का पत्थर का चबूतरा है। रानियां भी शिकार खेलते देखने को जाती थीं। कई स्थानों का नाम "रानी की डुआर" के नाम से प्रसिद्ध हैं।

राजा द्युत क्रीड़ा भी करते थे। दयारी नेगी की गाथा में नाहन के राजा के साथ दांव लगाने की बात आती है। राजा के निर्देश पर इस क्रीड़ा में वजीर भी भाग लेते थे। राजा की मृत्यु राष्ट्रीय शोक होता था। शोक के कारण एक वर्ष तक कोई उत्सव नहीं मनाया जाता था। सभी शव यात्रा में सम्मिलित व्यक्तियों को शोक में मुण्डन अर्थात भद्रा करानी पड़ती थी। स्त्रियां गहने नहीं पहनती थीं। राजा के शव के साथ रानियां सती होती थीं परन्तु राजा जीत सिंह के समय से यह प्रथा अंग्रेजी सरकार की आज्ञा से बन्द हो गई। निजी नौकरों को शासकों के साथ जलाने के प्रमाण मिले हैं। मूरक्राफ्ट लिखता है कि वह दुलची जोत पार करने के पश्चात बजौरा पंहुचा तो उसे तीन दिन तक मजदूर न मिला। क्योंकि रानी की मृत्यु हुई थी जिसके साथ ग्यारह दासियां भी जलाई गईं थीं। सती होने के लिये जोर जबरदस्ती भी की जाती थी। चिता में डालने या पकड़े रखने के लिये लोहे के चरांगले (आगे से दो शाखाओं वाला डण्डा) प्रयोग में लाये जाते थे।

राजाओं के समय प्रजा की अवस्था

राजतन्त्र के अधीन साधारण जनता की अवस्था अच्छी न थी। राजा और उसके कर्मचारी प्रजा का शोषण करते थे। प्रजा राज कर्मचारियों की दया पर निर्भर रहती थीं। उन्हें कर्मचारियों के पास भी बेगार देनी पड़ती थी। राजा द्वारा जन कल्याण के कार्य नहीं किये जाते थे। न तो उनके पास साधन थे और न जन कल्याण की इच्छा थी। उपजाऊ भूमि पर राजा या कर्मचारियों का अधिकार होता था। इस भूमि पर प्रजा को ही कार्य करना पड़ता था जिसके लिये उन्हें उसी दिन का खाना दिया जाता था। राज पुरोहित को जागीर मिलती थी। अपराधी उनकी शरण में जाते तो मृत्यु दण्ड से छुट मिलती थी। वे पालकी में आते जाते थे। राजभवन, दुर्ग ,सड़क आदि के निर्माण के समय बेगार ली जाती थी। सड़कें बहुत कम थी। किसी नदी पर पुल न होता था। वृक्ष गिरा कर या अस्थाई प्रबन्ध से नदी पार कर ली जाती थी। लोगों की आवश्यकतायें बहुत कम थीं। प्रायः सारी आवश्यकतायें गांव में ही पूरी कर ली जाती थीं। लोग सच्चे, ईमानदार, सीधे सादे तथा धर्म भीरु थे। रहने का स्तर अच्छा न था। साधारण लोग निर्धनता का जीवन व्यतीत करते थे। राज कार्य कर्ताओं का जीवन विलास पूर्ण होता था। सिक्खों के आगमन के पश्चात जनता की अवस्था और बिगड़ी। उन्हें बार–बार "फांट " देनी पड़ती थी। यह फांट कई बार छः रुपये तक ली जाती थी। यह राशि प्रति परिवार ली जाती थी जिसके लिये आर्थिक सामर्थ्य नहीं देखा जाता था। सेवाओं और वस्तुओं के बदले अन्न और खाद्य पदार्थ लिये और दिये जाते थे। वस्तुओं का

अभाव होता था। लकड़ी पत्थर तथा मिट्टी के बर्तन भी प्रयोग में लाये जाते थे। नेगी भूमि पट्टों के लिये संस्तुति करते थे।

छुआछूत का प्रचलन था। अछूत पालकी में नहीं बैठ सकते थे। उन्हें उच्च जाति के आगमन पर रास्ते से हटना पड़ता था। या रास्ते में ऊंचे नीचे की ओर से गुजरना पड़ता था। स्त्रियों की दशा बहुत अच्छी न थी। बहु पत्नीत्व विवाह का प्रचलन था। धनाढ्य प्रायः एक से अधिक विवाह करते थे। शिक्षा का प्रबन्ध न होने से साधारण जनता अनपढ़ थी। राज कर्मचारियों का बड़ा भय होता था। चाहते हुये भी लोगों को उनके दुख सुख में सम्मिलित होना पड़ता था। कहावत है :

"नेगिन मौरिया शौठ, नेगी मौरिया औठ"

अर्थात नेगिन के मरने पर सारे लोग नेगी के डर से शोक प्रकट करते थे और शोक में सम्मिलित होते थे। परन्तु नेगी के स्वयं मरने से कम आदमी शोक में सम्मिलित होते थे क्योंकि अब नेगी का डर न होता था।

23. सैनिक प्रबन्ध

कुल्लू सेना

कुल्लू राजाओं के पास स्थाई सेना बहुत कम थी। नत्थूराम अधीक्षक राज्य के अनुसार स्थाई सैनिकों की संख्या 6 सौ थी। परन्तु यह संख्या घटती बढ़ती रही। राजा मान सिंह के समय इनकी संख्या अधिक थी परन्तु सिक्खों तथा अंग्रेजों के आगमन के पश्चात संख्या बहुत कम रह गई थी। जेउला प्रणाली के अधीन भूमि प्राप्त करने वाले सभी व्यक्तियों को युद्ध के समय एक सैनिक देना पड़ता था। रास्ते में रहने तथा भोजन का प्रबन्ध भी इन्हें स्वयं करना पड़ता था। शस्त्र भी प्रत्येक सैनिक को स्वयं लाने पड़ते थे। इसलिये योद्धाओं के शस्त्रों में विविधता थीं। न ही सैनिक विशेष रुप से प्रशिक्षित थे। राजा जीत सिंह के समय किशन सिंह की सेना के मुकाबले के लिये कुल्लू राजा की सेना 12000 थी। राजा की सेना अधिक से अधिक 14000 तक रही। राज्य में केवल दो तोपें थी।

शस्त्रों में विविधता

शस्त्रों में तलवार तथा ढाल, बरछा, भाला, दरांत, कुल्हाड़ी, टोपीदार बन्दुक, तीर आदि का प्रयोग किया जाता था। टोपीदार बन्दुक की गणना तथा स्वामियों के पते लिखे हुये होते थे। जिन्हें आवश्यकता पर बुलाया जाता था। छेपन से (क्षेपन अस्त्र) एक रस्सी घुमाकर भी पत्थर फैंकते थे। सिक्खों के विरुद्ध भेखली धार से शिवर सुलतानपुर पर इन अस्त्रों से ही पत्थर फैंके गये॥ पत्थरों की बौछार से घबरा कर सिक्खों ने हैरान होकर कहा – ठण्डी गोलियां कहां से आ रही हैं। लाहुल जाती हुई सिक्ख टुकड़ी को मढ़ी पर लाहुल निवासियों ने छेपन से पत्थरों की बौछार कर मार भगाया था। छोटे पत्थरों को अन्य अस्त्र "गोल" से भी फैंकते थे। गोल कमान की तरह होता था जिसमें दो डोरियां तथा बीच में पत्थर रखने के लिये स्थान होता था। यह पत्थर रख कर गुलेल की तरह छोड़ा जाता था। बड़े पत्थर फैंकने के लिये ढींग होता था। यह लचीली लकड़ी से भी बनाया जाता था। या नरम पौधों को झुका कर बांधते थे और पत्थर रख कर छोड़ते थे।

दुर्गों का निर्माण

महत्वशाली रास्तों और स्थानों की सुरक्षा के लिये दुर्ग होते थे जिन्हें गढ़ कहते थे। गढ़ लकड़ी तथा पत्थर से बनाये जाते थे। गढ़ ऊंचे स्थानों पर बनाये जाते थे। ऐसा टीला गढ़ के लिये चुना जाता था जहां एक ही ओर से पहुंचा जा सकता था। तीन ओर ढंकार, नदी, नाला से सुरक्षित होता था। ढलानों के पास पत्थरों लकड़ी के लठों का भण्डार किया होता था ताकि शत्रु

को इन्हें आवश्यकता पर लुढ़का कर रोका जा सके। दुर्गों का द्वार तोड़ने के लिये मेंढें (बड़े सींग वाला नर भेड़) पाले जाते थे जिन्हें "रण का लौहड़" कहा जाता था। दुर्ग के अधिकारी को गढ़िया कहा जाता था।

आक्रमण के समय प्रबन्ध

पास के गांव के लोगों को बारी–बारी गढ़ों पर पहरा देना पड़ता था तथा आक्रमण के समय रक्षा करनी पड़ती थी। कर्तव्य की चूक पर सजा दी जाती थी। कई बार सजा के लिये शरीर में चीरे देकर नमक लगाया जाता था। शस्त्र भण्डार दुर्गों में ही रखा जाता था।

आक्रमण के समय "रण श्रृंगा" बजा कर अगले गढ़ को सूचित किया जाता था। इस प्रकार यह क्रम आगे बढ़ता जाता था और तुरन्त इसकी सूचना सब ओर की जाती थी। हर कोठी में गढ़ या कोट अवश्य होता था। कोट भी सामरिक महत्व के स्थानों पर बने निरीक्षण एवं प्रतिरोध भवन होते थे। बाहरी आक्रमण होने पर सभी पुरुष गढ़ पर जाते थे और घर तथा खेती का सारा कार्य स्त्रियों के कन्धों पर आ पड़ता था। यदि शत्रु युद्ध में भारी पड़ता था तो लोग घर बार छोड़ ऊंचे स्थानों को चले जाते थे। यह बात विचारणीय है कि कुल्लू में गांव अधिकतर ऊंचाईयां पर हैं। ये सामरिक दृष्टि से आवास के लिये अधिक सुरक्षित समझे जाते थे।

पजोगुरु मियां युद्ध के लिये बाज पालते थे। उनके पास अभी तक बाज के पिंजरे थे। बाजों को विशेष प्रशिक्षण दिया जाता था। राजा मान सिंह ने सैनिकों को चुस्त रखने के लिये तथा तलवारबाजी के अभ्यास के लिये ढोल की विशिषट ताल पर खड़ियात परम्परा डाली। जिसमे बार बचाना तथा वार करना सिखाया जाता था। अब यह परम्परा नाटी में तलवार नाच के रुप में रह गई है।

सेना टुकड़ियों के अलग–अलग सेना नायक होते थे। झगडू एक ऐसा सेना नायक था जिसने अंग्रेजों की सिक्खों पर विजय के पश्चात अपने साथियों के साथ राजभवन सुलतानपुर को सिक्खों से मुक्त कराने आया। उसने बन्द द्वार को अपनी लात से तोड़ा और अन्दर घुसा। इस घटना की याद अभी तक एक कुल्लू गाने में जीवित है।

1 Nov /47

Memorandum of Forts in the lately ceded Trans Sutlej Hill States.

Kooloo

There are at present in this Province five forts viz: Srighur, Dowl, Bonga, Byrekote and Bajora, the first being situated in the pergunna of Suraj, under the high mountains in the neighbourhood of the Sutlej & the two last on the Mundi boundary and within 10 or 12 miles of Sultanpore.

Srighur is in a commanding situation to coerce the people of Suraj, who are at present a turbulent & wild race, I would therefore preserve that fort and dismantle Dowl & Bonga in the pergunnah of Suraj, and likewise Bajora on the Mundi frontier, preserving for the present Byrekote, which would then be the only stronghold in the neighbourhood of the capital.

As a garrison for Kooloo, 200 men in Srighur would then suffice from whence a detachment of a Native officer & a few sepoys might be detached to hold Byrekote, until it may be determined whether to preserve or destroy the latter.

In the distant pergunna of Lahoul there is not a single fort.

Sd/- [illegible]

24. कुल्लू जिला के दुर्ग

किसी समय कुल्लू जिला में 40 के लगभग दुर्ग थे। यहां दुर्ग अधिकतर बुर्ज शैली के थे जो रास्तों, दरों, घाटों या ऊंचे सुरक्षित स्थानों पर बनाये जाते थे। बुर्ज शैली के दुर्गों के उदाहरण दलिहारा (सैंज) तथा चैहणी (बंजार) में अभी भी देखे जा सकते हैं। जो हर आपदा से जूझते हुये अब भी अपने स्थान पर खड़े हैं। गौंधला (लाहुल) का दुर्ग अन्य बुर्ज शैली का उदाहरण है। इनके निर्माण के स्थान का चयन सामरिक दृष्टि को सन्मुख रख कर किया जाता था। जहां एक ही ओर से आना सुगम होता था। शेष तीन ओर से नदी, नाले, ढंकार या ऊंचे पहाड़ होते थे। इनका निर्माण राजाओं, राणाओं और ठाकुरों ने इन उद्देश्यों के लिये कराया था:—

1. परिवार की रक्षा के लिये
2. सीमाओं की रक्षा के लिये
3. छापा मार युद्धों का सामना करने के लिये
4. रास्तों घाटों तथा दर्रों की रक्षा के लिये या उन पर नजर रखने के लिये

बुर्ज शैली के दुर्ग

इनका निर्माण स्थानीय घरों की तरह ही किया जाता था। पहले पत्थरों का ऊंचा मंच बनाया जाता था। जिस पर प्रवेश द्वार तथा पहली मंजिल होती थी। यह सबसे बड़ी मंजिल भी होती थी। उसके उपर की मंजिलें आकार में छोटी होती जाती थी। मंजिलों की संख्या 5 से 7 होती थीं। सबसे ऊपर की मंजिल में छत लगी होती थी। साथ ब्राम्दा होता था जहां से पहरेदार निगरानी किया करते थे। यहां से प्रत्येक मंजिल भी दिखाई देती थी क्योंकि प्रत्येक नीचली मंजिल का आकार उपर की मंजिल से बड़ा होता था। प्रवेश द्वार तक पहुंचने के लिये लकड़ी की सीढ़ी होती थी जिसमें एक पांव टिकाने के लिये स्थान होता था। आवश्यकता पड़ने पर सीढ़ी को हटाया या ऊपर खींचा जा सकता था।

ऊंचे मंच पर बने दुर्गों में जल आपूर्ति एक समस्या थी। इसलिये सबसे नीचली मंजिल में लकड़ी या पत्थर से निर्मित बड़े बड़े कुण्ड होते थे। जहां वर्षा का या बावलियों से लाकर पानी संग्रह किया जाता था। यदि वर्फ उपलब्ध होती तो उसे भी दबाकर रखा जाता था। प्रत्येक मंजिल में ऐसी खिड़कियां होती थी जो आकार में बाहर से छोटी और अन्दर की ओर से बड़ी और तिरछी होती थीं। ये प्रकाश देने, निरीक्षण करने तथा युद्ध में तीर या बन्दूक छोड़ने के काम में लाई जातीं थीं। इन बुर्ज नुमा दुर्गों के अतिरिक्त कुल्लू जिला में कोट तथा गढ़ भी होते थे।

कोट और गढ़

कोट भूमि के ऊपर ही होता था जबकि गढ़ का भूमि के अन्दर भी कुछ भाग होता था। गढ़ों के अन्दर के भाग को तहखाना कहते थे। जिनमें शस्त्र रखे जाते थे या जल तथा अन्न का भण्डारण किया जाता था।गढ़ सुरक्षित ऊंचे स्थानों पर बनाये जाते थे जहां चारों ओर दूर–दूर तक देखा जा सकता था। गढ़ का परिसर काफी बड़ा हुआ करता था। इसमें आवास के लिये कमरे भी हुआ करते थे।आक्रमण के समय गढ़ के द्वार बंद कर लिये जाते थे और उस समय की परिस्थितियों में गढ़ आवास के लिये बहुत सुरक्षित माने जाते थे।

कोट पहरा या निरीक्षण चौकियां हुआ करती थीं जो घाटों, रास्तों, दर्रों या सीमा रेखा पर बनीं होती थी। कुल्लू राजा की सुल्तानपुर राजधानी में चार परोल कोट थे। परोल प्रवेश द्वार को कहते हैं। उन द्वारों के उपर पहरेदारों के कोट बने होते थे। जहां निरन्तर पहरा करते पहरेदार उपस्थित रहते थे।

जिन स्थानों पर कोट या गढ़ हुआ करते थे उनके नामों के साथ अब भी कोट या गढ़ के शब्द जुड़े हुये हैं जैसे कोटाधार, कोटकण्ढी, वैरकोट आदि या सिरीगढ़, बड़ागढ़ आदि।

कुल्लू के कुछ महत्वशाली दुर्ग –

बाहरी सिराज के दुर्ग

सिरीगढ़

यह दुर्ग 84000 फीट की ऊंचाई पर बाहरी सिराज में दलाश के सामने पहाड़ी पर स्थित था। यह अति महत्वशाली दुर्ग था जिससे सारी सतलुज घाटी पर नजर रखी जा सकती थी। 1846 ई. में अंग्रेजों के अधिकार के समय यह गढ़ ठीक अवस्था में था। अंग्रेजों ने इसमें 200 सैनिकों की टुकड़ी रखी थी। अंग्रेज इसगढ़ को सामरिक दृष्टि से अति महत्वशाली मानते थे। इस गढ़ के अवशेष अब भी देखे जा सकते हैं।

रघुपुर गढ़

यह गढ़ जलोड़ी जोत से दो कि.मी. दूर पहाड़ी पर स्थित था। यह सामरिक दृष्टि से अति महत्वशाली गढ़ था जिससे बाहरी सिराज के क्षेत्रों पर नियन्त्रण रखा जा सकता था। इससे मंडी सीमा पर भी नजर रखी जा सकती थी जिस ओर से प्राय छेड़छाड़ होती रहती थी। गढ़ के चारों ओर एक दीवार थी। गढ़ का निर्माण जनता द्वारा की गई बेगार से या युद्ध बन्दियों द्वारा किया

गया था। इस गढ़ के अवशेष के रूप में तीन बावलियां और पत्थरों के ढेर हैं। जिन में से दो में अभी भी पानी है। आवश्यकता पड़ने पर सिरयोलसर से भी पानी लाया जाता था। जो इसी ऊंचाई पर जलोड़ी जोत से एक या डेढ़ कि. मी. दूर है। गढ़ से कुछ दूरी पर करसई गाड़ और विण्डु स्थान पर थाने बनाये गये थे। हाण्डुनाल में अब भी दीवार है जिस के नीचे बहुत गहरी खाई है। कहते हैं कि मृत्यु दंड पाने वाले को यहां से नीचे फैंक दिया जाता था।

रामगढ़

यह चूना गही गांव से पूर्व में स्थित था। पहाड़ी की चोटी पर बने इस दुर्ग की लम्बाई 200 फीट और चौड़ाई 150 फीट थी। गढ़ के भीतर देवी भागा नातली का मन्दिर है। गढ़ की दीवारें टूट गई हैं।

ढौढ गढ़

यह चूना गही गांव के उतर में स्थित था जिस का निर्माण राजा विधि सिंह ने करवाया था। गढ़ के भीतर पांच वीर का मन्दिर है। यह गढ़ भी टूट कर पत्थरों के ढेर में बदल गया है।

सिरीकोट का दुर्ग

यह बुशैहर और कुल्लू राजाओं के मध्य हुये कई युद्धों का साक्षी रहा। राजा प्रीतम सिंह (1767 ई से 1806 ई) के समय बुशैहर सैना ने आक्रमण कर इस दुर्ग पर अधिकार किया और इसे गिरा दिया। बदले में कुल्लू सैना ने गामें पर आक्रमण कर, दुर्ग पर अधिकार कर उसे गिरा दिया। परन्तु इसके पश्चात दोनों ओर के राजाओं के मध्य समझौता हो गया और दोनों ने इस गिराये हुये दुर्ग का पुनः निर्माण न करने का निर्णय लिया।

भीतरी सिराज के दुर्ग

ढाढिया कोट चैहणी

यह बंजार के निकट बुर्ज शैली का दुर्ग है। जिसका निर्माण ढाढिया ठाकुर ने कराया था। स्थानीय लोग इसे चैहणी कोठी के नाम से पुकारते हैं। यह चैहणी गांव में स्थित है। चैहणी ढाढिया ठाकुर की पत्नी का नाम था। गांव उसी के नाम से बसाया गया था। कहते हैं कि 1905 ई. तक इसमें नौ मंजिलें थीं। पांच मंजिलें भूंचाल में गिर गई। ऊंचे मंच पर प्रवेश द्वार और पहली मंजिल बनाई गई है। इस में जल भंडार भी बनाया गया है। मंच के

ऊपर कुल चार मंजिलें हैं। हर ऊपर की मंजिल आकार में छोटी होती गई हैं। सबसे उपर की मंजिल में छत और ब्राम्दा है। इसी मंजिल में ही जोगनियों का मन्दिर है। दुर्ग का निर्माण काठ—कूणी शैली से किया गया है संयुक्त राष्ट्र संघ द्वारा भी इस दुर्ग को सुरक्षित रखने के लिये पग उठाये जा रहे हैं।

दलिहारा कोट

ये पास पास दो बुर्ज शैली के दुर्ग हैं, जो सैंज घाटी के अंतिम गांव गईला के पास दलिहारा में स्थित हैं। ये दुर्गम क्षेत्र में स्थित होने के कारण अधिक चर्चित नहीं हुये। यद्यपि इनकी निर्माण शैली चैहणी के दुर्ग की तरह है और सात मंजिल ऊंचे हैं। इन्हें दलिहारा ठाकुर हत्थी ने बनवाया था जो राजा बहादुर सिंह (1548—1569ई.) का सैना नाईक था। इसने पार्वती घाटी, सैंज घाटी तथा भीतरी सिराज की विजयों में विशेष भूमिका निभाई थी। राजा ने प्रसन्न हो कर उसे दलिहारा में 72 खार भूमि इनाम में दी थी। बुढ़े नारायण देवता का इनमें मन्दिर है।

मूंग का दुर्ग

यह भीतरी सिराज में पलाईच के निकट एक अति सुरक्षित दुर्ग था। राजा जीत सिंह (1816—1840 ई.) ने किशन सिंह को युद्ध में पकड़े जाने के पश्चात इसी में बंदी बना कर रखा था। किशन सिंह की मृत्यु इसी दुर्ग में हुई थी।

तुंग का दुर्ग

यह बशलेऊ दर्रा के निकट अलग—थलग पहाड़ी पर स्थित था। इसका निर्माण भी सैना नाईक दलिहारी ठाकुर हत्थी सिंह ने राजा बहादर सिंह के समय करवाया था। राजा जीत सिंह को लोगों ने सिक्ख सेना से छुड़ाने के बाद उन्हें खदेड़ा तो दो दिन तक वे इसी दुर्ग में छुपे रहे। परन्तु भूख और प्यास से त्रस्त हो कर उन्होंने इस दुर्ग को छोड़ दिया। बाद में अन्य सिक्ख सैनिकों ने इसे गिरा दिया था।

कुल्लू क्षेत्र के दुर्ग

नगर दुर्ग

यह पहाड़ी निर्माण शैली का दुर्ग है। इसमें 40 कमरे है। कुछ भूमि के अन्दर हैं जिनका प्रयोग राजा सिद्ध सिंह सिद्धियां प्राप्त करने के लिये किया करता था। दुर्ग का निर्माण इसी राजा सिद्ध सिंह (1500—1546ई.) ने कराया था। इसमें गढ़ ढेक (बड़ाग्रां) तथा बड़ा गढ़ के पत्थर लगाये गये। जिन्हें

मानव श्रृंखला बना हाथों हाथ नगर पहुंचाया गया। दुर्ग के प्रवेश द्वार एक दक्षिण में तथा दूसरा पूर्व में है। दक्षिणी भाग दुर्ग का पत्थरों के मंच पर बनाया गया है जिसे दृढ़ता प्रदान करने के लिये लकड़ी का प्रयोग भी किया गया है। पश्चिमी तथा उतर के भाग भी पत्थरों के ऊंचे मंच पर बने हैं। इस मंच पर पूर्व और पश्चिम में पहाड़ी की ढलानों से मिलाया है जहां प्रवेश द्वार बनाये गये हैं। दुर्ग के भवन दो भागों में बंटे हैं। दक्षिणी द्वार के भीतर आंगन के तीन ओर भवन बने है। चौथी दिशा पश्चिम में कोई भवन नहीं है। इस ओर आंगन खुला है जहां से दूर तक के दृश्य देखे जा सकते हैं। पूर्वी तथा दक्षिणी भवन दो मंजिल के हैं। इसके आगे पूर्व की ओर उतर मे एक मंजिल के भवन हैं।

दुर्ग की दीवारें 2.5 फीट चौड़ी हैं। काठ कूणी शैली से बनी हैं। सारी लकड़ी देवदार की है जो वर्षा में खराब नहीं होती। जोड़ में लकड़ी के ही किल्ले लगे हैं। अन्दर की ओर दीवारों पर पलस्तर किया हुआ हैं। उतरी मंच पर बना भवन बिना योजना के है। प्रांगण में जगती पाट का मंन्दिर है। जिसका सौन्दर्यकरण कुछ समय पूर्व किया गया है। उतरी भवन तीन मंजिला है। दीवारों पर पूरे शहतीर प्रयोग किये गये हें। 1846 ई. में कुल्लू अंग्रेजो के अधीन आ गया। राजा ज्ञान सिंह (1852–1870 ई.) से सहायक उपायुक्त ने इसे खरीदा और इसमें सीढ़ियां और चिमनियां योरूप प्रणाली की बनाई। 1869 ई. में सरकार ने इसे सहायक उपायुक्त का आवास बनाया। अंग्रेजी सरकार ने अंगीठियां बनवाई ओर स्लेट के स्थान पर छत में टीन की चादरें लगवाई। यहां सहायक उपायुक्त कार्यालय भी रहा। 1978 ई. में यहां एक होटल बना दिया गया जिसका सौन्दर्यकरण 1999 ई. में भी हुआ। परिवर्तन के कारण अब यह सामरिक दृष्टि से सुरक्षित दुर्ग नहीं रहा।

ठावा दुर्ग

यह स्थान नगर से एक कि.मी. दूर है। यहां अब भी राजभवन तथा दुर्ग के अवशेष हैं। पाल वंश के कुल्लू राजाओं ने इसे राजधानी बनाया था। यह स्थान दुर्ग के लिये अति उपयुक्त था। इस समय यहां केवल मूरलीधर मन्दिर है। 1905 ई. के भूंचाल में भवन तथा दुर्ग क्षति ग्रस्त हुए तथा लुप्त हो गये। स्थानीय लोग यहां से पत्थर निर्माण कार्य के लिये ले जाते रहे और इस प्रकार सारे अवशेष समाप्त होते गये। राजा यशोधापाल ने इन भवनों का निर्माण कराया था। इससे पूर्व राजधानी "नस्त" (जगतसुख) में थी।

पिति ठाकुर के दुर्ग

हाम्टा और जगतसुख के मध्य भनारा गांव के दक्षिण में झाड़ियों और वृक्षों के मध्य पिति ठाकुर के दुर्ग के अवशेष अभी भी देखे जा सकते हैं। दो ऊंचे मंच और बढ़िया तराशी हुई दीवार की बड़ी–बड़ी शिलायें दुर्ग की भव्यता की याद दिलाती है। इसके बाहर 10 मी. चौड़ी और दो मी. गहरी खाई दुर्ग की सुरक्षा के लिये बनाई गई थी। यह दुर्ग ऐसी पहाड़ी पर स्थित था जिस के एक ओर ढंकार और शेष तीन और सुरक्षा के प्रबन्ध थे। पश्चिम की ओर ऊंची चट्टानें थीं। खाई से 200 मी. दूर देवता का मन्दिर था। पहाड़ी की ढलानों पर लगभग 300 मी. दूर कुछ अन्य भवनों के अवशेष हैं। दुर्ग के मध्य भाग में पिति ठाकुर का आवास था। इस दुर्ग को राजा सिद्ध सिंह (1500– 1546 ई.) ने युद्ध में जीता और धवस्त कर दिया।

रूमसु दुर्ग

यह भी पिति ठाकुर का सात मंजिलों वाला दुर्ग था। पास ही ठाकुर का थाना था। रूमसु नगर से लगभग 5 कि.मी. दूर हैं। यह दुर्ग भी ऊंचे स्थल पर था। जो प्राकृतिक रूप में सुरक्षित था तथा यहां से दूर–दूर तक का क्षेत्र देखा जा सकता था ताकि आने वाले खतरे का पता लग सके। पिति ठाकुरों का व्यापारिक मार्ग भी इन ऊंचाईयों से गुजरता था तथा इन ऊंचाईयों का जलवायु भी उनके लिये उपयुक्त था। इसलिये इनके दुर्ग तथा आवास 7000 से 8000 फीट की ऊंचाईयों पर ही मिलते हैं।

बजौरा दुर्ग

बजौरा कुल्लू से 13 कि.मी. दूरी पर है। जहां बुर्ज शैली के लगभग आठ दुर्ग थे। वर्तमान सड़क बनने से पूर्व सारा यातायात (मंडी, कांगड़ा इत्यादि से) दुलची जिसे अब कण्ढी जोत कहते हैं, द्वारा हुआ करता था। यह जोत सारा वर्ष खुला रहता है तथा कम ऊंचा है। इसकी ऊंचाई 2788 मीटर है। बजौरा कुल्लू की ओर पहला महत्वशाली स्थान था जहां खुला मैदान होने के कारण शत्रुओं को रोका जा सकता था। इसलिये बजौरा कई युद्धों का साक्षी रहा। अंग्रेजों ने कुछ दुर्गो को सराय बनाने के लिये धवस्त किया और उसी सामान का निर्माण में प्रयोग किया। अब वहां वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय चल रहा है। कुछ दुर्ग चाय का बाग लगाते समय धवस्त किये गये और पत्थरों का सीमा पर डंगा लगाया गया। शेष के पत्थर तथा लकड़ी स्थानीय लोग भवन निर्माण के लिये ले गये।

लगघाटी के दुर्ग

शोझागढ़

यह गढ़ ऊंची घाटी पर सरवरी नदी के बाये तट पर, भालठा खानी पांधे गांवों के सिरे पर बनाया गया था। यह अति महत्वशाली एवं दृढ़ दुर्ग था। यहां से सुलतानपुर कुल्लू राजधानी कोटा–अगली शाड़ (ढालपुर) तारागढ़ तथा सारीगढ़ पर एक साथ नजर रखी जा सकती थी।यहां से बंदरोल तक सीधी सड़क थी। सरवरी के किनारे से दुर्ग तक समतल पत्थर की शिलायें लगाकर रास्ता पक्का बनाया गया था। बंदरोल से ब्यासर हो कर लगघाटी को घेरा जा सकता था। बंदरोल से नीचे उतर कर कुल्लू को घेरा जा सकता था। जोग चन्द को राजा जगत सिंह (1637–1662 ई.) ने युद्ध में हराया और शोझागढ़ को धवस्त किया।

तारापुर गढ़

यह मण्डी और कुल्लू के बीच महत्वशाली गढ़ था जो भल्याणी गांव से 5 कि.मी. दूरी पर पहाड़ी की चोटी पर स्थित था। भल्याण से तारापुर गढ़ के मध्य एक झील है और वहां 9 डुआर (प्राकृतिक गुफायें) हैं। ये गुफायें सेनाओं के लिये वर्षा एवं हिमपात में आश्रय स्थल थे। झील का पानी प्रयोग करके तथा यहां आवास कर सेनाये लंबे समय तक रूक सकती थीं। गढ़ के दोनों ओर ढलानें हैं। एक ओर मण्डी है और दूसरी ओर कुल्लू। मण्डी सैना ने कुल्लू पर इस रास्ते से आक्रमण कई बार किया। आक्रमण होने पर करनाल बजा कर आक्रमण का संदेश भल्याणी, डुघीलग और वहां से उसी प्रकार (कुल्लू को) सन्देश सुलतानपुर भेजा जाता था। करनाल या श्रृंगा इस अवसर पर विशेष सांकेतिक भाषा में बजाया जाता था। करनाल या श्रृंगा सुनते ही पुरूष बचाव की तैयारी में जुट जाते थे। शेष सभी सुरक्षित स्थानों को पलायन कर जाते थे। इस समय अवशेष के रूप में कुछ दीवारे टूटी फुटी अवस्था में हैं।

खशिया कोट हलाण

हलाण नगर के निकट है। यह रामण गांव में स्थित है। 1905ई. में इसकी उपर की दो मंजिलें टेढ़ी हो गई थीं इसलिये गिरा दी गई। इस समय इसकी पांच मंजिलें हैं उपर की दो मंजिलों में तीन ओर ब्राम्दा है। छत स्लेट की ढलानदार है। पूर्व दिशा में कोई ब्राम्दा नहीं। खिड़कियां उतर और दक्षिण की ओर है। पश्चिम की ओर द्वार हैद्वार वाली मंजिल में खिड़कियां नहीं है।

दुर्गों का प्रबन्ध

गढ़ में सभी रहने वाले अधिकारी एवं कर्मचारी गढ़िया कहलाते थे। दुर्गों के प्रबन्ध के लिये अधिकारी इस प्रकार नियुक्त होते थें :–

1. **दारोगा–** यह दुर्ग का सबसें बड़ा अधिकारी होता था। जो वजीरी के मुख्य से सीधा संपर्क रखता था। अन्य गढ़ के सभी अधिकारी उसी से आज्ञायें प्राप्त करते थे। गढ़ का प्रबन्ध के लिये वही उतरदायी होता था।

2. **भण्डारी–** यह दुर्ग के सामान का विवरण रखता था। सामान देना, लेना तथा उसका प्रबन्ध करना इसी का उतरदायित्व था।

3. **काईथ–** यह दुर्ग का कोषाध्यक्ष होता था। आय तथा व्यय का हिसाब रखना तथा लिपिक का कार्य पत्र व्यवहार करना इसके कार्य थे।

4. **कामदार–** पहरेदारों का मुख्य होता था। पहरेदारों की नियुक्ति तथा पहरे में परिवर्तन यही करता था। युद्ध के समय गढ़ की सुरक्षा करना इसी के कार्य थे।

5. **ग्वाला–** गढ़ में दूध का प्रबन्ध करना तथा दूध धारू पशुओं की देख रेख करना इसके कार्य थे।

6. **कर्मचारी–** यह अन्य अधिकारियों के आदेशों का पालन करते थे तथा सहायता करते थे।

गढ़ों के पहरे का प्रबन्ध

गढ़ों के निकट के ग्रामीण बारी–बारी से पहरे का कार्य निभाते थे। प्रत्येक ग्राम के परिवारों को पहरे का कार्य निभाने के लिये दिन निश्चित कर सूचना दी जाती थी जो बारी आने पर स्वयं उपस्थित हो जाते थे। कार्य न निभाने पर कड़ी सज़ा दी जाती थी। शस्त्र गढ़ों में ही रखे जाते थे।

दुर्गों पर होने वाले व्यय का प्रबन्ध

दुर्गों के नाम कृषि भूमि होती थी। जिससे होने वाली आय दुर्ग के लिये खर्च की जाती थी। खेती बेगार द्वारा की जाती थी। किले के लिये खेती करने वालों को पहरे या किले के अन्य कामों से छूट दी जाती थी। आवश्यकता पड़ने पर कर उगाही भी की जाती थी। गढ़ियों का ग्रामीणों पर नियंत्रण होता था। किले की भूमि पर कृषि करने पर किले के काम से 5 दिन की छुट्टी दी जाती थी।

25. शासन प्रबन्ध

सारा राज्य उत्तम प्रशासन की दृष्टि से बजीरियों, कोठियों तथा फाटियों में बांटा गया था। राजा जगत सिंह के समय कोठियों की संख्या अधिक हो गई। प्रबन्ध के लिये इन्हें बजीरियों में बांटा और बजीरों के अधीन रखा।

बजीरियाँ

बजीरियां सर्वप्रथम राजा जगत सिंह के समय बनाई गई। कुछ कोठियों को मिला कर एक बजीरी बनती थी क्योंकि इनका प्रबन्ध बजीरों को सोंपा जाता था। इसलिये ही यह प्रशासनिक इकाई बजीरी कहलाई। बजीरियों की संख्या सात थी। जिनका विवरण नीचे दिया जाता है:–

बजीरी परोल

रोहतांग से फोजल, मलाणा से जिया तक (पार्वती नदी के दाहिने ओर) का क्षेत्र बजीरी परोल में सम्मिलित था। इसमें 497 वर्गमील का क्षेत्र सम्मिलित था।

बजीरी रूपी

पार्वती नदी की घाटी के बाई ओर तथा मलाणा का क्षेत्र मणीकर्ण कोठी किन्नौर तथा सैंज नाला तक का क्षेत्र (भूईन गड़सा घाटी) इसमें सम्मिलित थे। इसमें 667 वर्ग मील क्षेत्र सम्मिलित था।

वजीरी सिराज

इसमें बाहरी तथा भीतरी सिराज के क्षेत्र (वर्तमान आनी तथा बन्जार उपमण्डल) इसमें सम्मिलित थे। सैंज नदी के दक्षिण छोर से जलोड़ी जोत तक (भीतरी सिराज) 299 वर्ग मील और उससे आगे बाहरी सिराज – जलोड़ी से सतलुज तक 257 वर्ग मील का क्षेत्र इस वजीरी में था।

बजीरी लग सारी

फोजल नदी से सरवरी नदी तक, व्यास नदी के दाहिने किनारे का भू–भाग। कुल 93 वर्ग मील का क्षेत्र इसमें सम्मिलित था।

वजीरी लग महाराजा

बजीरी लग महाराजा सरवरी से बजौरा तक का भू भाग। जिसमें कोठी तारापुर, डुघीलग, चोपारसा, महाराजा, खोखन तथा बजौरा सम्मिलित थे। क्षेत्रफल 89 वर्ग मील था।

वजीरी लाहुल

नदी चन्द्रा तथा भागा की घाटियां तथा पटन जिसे ब्रिटिश लाहुल कहा जाता है इसमें सम्मिलित था। बाद में राजा मान सिंह ने स्पिति घाटी जीती और उसे भी लाहुल बजीरी में ही रखा। तंदी में इसका मुख्यालय था। यहां दरोगा, कानूनगो, हाकिम तथा लेखा अधिकारी थे। एक एक अधिकारी जुंडा तथा गोहरमा में भी होता था।

वजीरी भंगाल

इसमें छोटा भंगाल तथा बड़ा भंगाल के क्षेत्र सम्मिलित थे। वजीरियां कोठियों में विभाजित थीं।

कोठियां

कुल्लू बोली में कोठा अन्न के ढेर को कहा जाता है। जिस समय कर अन्न तथा वस्तु के रुप में लिया जाता था, कर उगाहने के लिये स्थान निर्धारित था। सारा क्षेत्र जिसका अन्न एक ही स्थान पर इकट्ठा किया जाता था, कोठी कहलाया। जे. बी. लेयाल ने अपनी बन्दोबस्त की रिपोर्ट में लिखा है कि कुल्लू की कोठियां ठाकुरों के क्षेत्रों के अनुसार ही बनी रहीं। इसमें स्पष्ट है कि कोठी के लोग प्रशासनिक रुप में पहले ही से आपस में जुड़े थे। कोठियों की संख्या राजाओं की विजय के साथ बढ़ती रहीं। कोठी का मुख्य नेगी होता था। सिराज में 25 कोठी में 26 नेगी थे। स्पिति में नोना होता था। कठार अनाज इकट्ठा करने के लिए होते थे। अनाज के लिए मिट्टी के दराठ और बांस के पेडू होते थे। अंग्रेजो के समय कोठियां इस प्रकार थीं। रूपी घाटी– 6, सिराज – 25, लाहुल स्पिति – 5 इस समय कुल्लू में कोठियां 48 हैं।

फाटियां

फाटियां बाद में बनी प्रतीत होती है। कोठियां फाटियों में बंटी हैं। प्रशासनिक दृष्टि से एक फाटी एक मूल इकाई या गांव है। फाटी शब्द का अर्थ तोड़ना है। कोठियों को तोड़ कर बनी इकाई फाटी कहलाई। परन्तु शब्द संरचना पर यह तर्क ठीक नहीं लगता। ऐसा भी विचार है कि फांट से ही फाटियां बनी। फांट राजस्व के अतिरिक्त आक्रमणकारी को देने के लिये कर होता था। यह प्रति परिवार लिया जाता था। सिक्खों को देने के लिये फांट छः रुपये थी। जिस क्षेत्र के सभी परिवार फांट एक स्थान पर जमा कराते थे वह स्थान फाटी कहलाया। फांट इकट्ठी करने के लिये पालसरा नियुक्त थे। क्योंकि यह कर निर्धारित समय पर देना आवश्यक होता था, इसलिये कोठी

से छोटी इकाई बनाई गई, ताकि कार्य सुगमता से किया जा सके। फाटियों के नाम भी गढ़ों या प्रमुख गांव के आधार पर रखे गये। 1911–12 का बन्दोबस्त फाटियों पर आधारित था। इस समय फाटियां 70 है। फाटी टीका की तरह एक प्रशासनिक इकाई है। फाटी का मुख्य नम्बरदार होता था। उसका सहायक चौकीदार होता था।

प्रशासनिक अधिकारी

बजीर

बजीरी का प्रमुख बजीर कहलाता था। बोधू पुरोहित को राजा द्वारा दिये गये पट्टे (जिसकी प्रति पुस्तक में दी गई है) से पता चलता है कि चौंतड़ा का बजीर मुख्यामन्त्री होता था। राजा अजीत सिंह के समय इस पद पर सौभा राम नियुक्त था। परोल का बजीर श्याम चन्द, रुपी का लज्जे राम, लग का हुकमू तथा वीणी राम, बदाह का बजीर महतू तथा घमणू थे। इससे पता चलता है कि एक बजीरी में दो बजीर भी नियुक्त थे। बदाह सम्भवतः महाराजा लग बजीरी का केन्द्र होगा।

अन्य अधिकारी :

नेगी	कोठी का प्रमुख अधिकारी।
हाजरी	उपस्थिति लगाने वाला।
चाहा	पहरेदार।
पंजोहडू	डयोढ़ी चाकर।
जलालू	रीछ पकड़ने वाला।
अहीर	दूधवाला।
पालसरा	किलादार।
पणिहारी	पानी वाला।
भण्डारी	खजांची।
कठयाला	गोदाम का अधिकारी।
काईथ	लिपिक।
जिनसाली	सैनिक भण्डार वाला।
बटवाल	चपड़ासी।
चाकर	सेवक—नौकर।
डेहलीत	चोबदार।
बतौंगडू	बेगार पर लगाने वाला
बांठ	रसोईया।
डांगू	छोटा चोबदार।

जलहैरु	आबदार।
मिसल	कम्पनी सेना।
मेहता	कर उगाहने वाला।
कामदार	पहरेदारों का मुखिया।
गणकारु	पशु गिनने वाला।
हरकारा	पत्र पहुंचाने वाला
पंजौली	राजा के लिये दूध, दही इक्ट्ठा करने वाला
जताली	सूचना देने वाला

इनके अतिरिक्त अन्य अधिकारी थे :

1. घंरटा 2. चराकसी 3. सखसिया 4. तरबीरु।

नेगी के कार्य (अंग्रेजों के समय)

नेगी का मुख्य कार्य कर, तिरणी इत्यादि उगाहना था। जिस पर उसे पंजोतरा (5 प्रतिशत धन) मिलता था। वह साधारण पेड़ों को कर ले काटने की आज्ञा देता था। पाले घरों में कुलियों का प्रबन्ध करता था तथा अधिकारियों के ठहरने का प्रबन्ध करता था। एक समय मे पाले घर में 6 कुली रख सकता था। जिसके लिये उसे एक कुली पर चार आना प्रति वर्ष दिये जाते थे। वह सरकार ओर कोठी की प्रजा के मध्य कड़ी का कार्य करता था। उसकी पुष्टि पर ही जमीनें बही में व्यक्ति के नाम चढ़ती थी। वसीयत तथा व्यक्ति की पहचान करने में उसकी साक्षी प्रमाणक मानी जाती थी।

26. राजस्व प्रणाली

राजस्व राणों और ठाकुरों के समय में मन मर्जी से लिया जाता था तथा निश्चित न था। यह अन्न या वस्तुओं के रुप में लिया जाता था। आरम्भ में राजा भी ऐसा करते थे। परन्तु राजा मान सिंह ने इसे बदल दिया। लद्दाख से सीमा निर्धारण कर लौटने के पश्चात वह पांच मास इसी कार्य में लगा रहा। उसने नजरी जमीन की पैमाईश करवाई। कर निर्धारण के लिये जिउला और भार प्रणाली आरम्भ की। उसने नजरी वीघा और बिस्वा भी निश्चित किया। भूमि की उपज का अनुमान लगाने के लिए प्रत्येक कोठी में भूमि बीजाई तथा उपज अनुसार कर निर्धारित किया। जितनी भूमि में बीस घानी का बीज आया उसे वीघा कहा गया। एक घानी बीज वाला टुकड़ा बिस्वा कहलाया। राजा सारी भूमि का स्वामी माना जाता था। सारी उपजाऊ भूमि से वह कर उगाहता था। समस्त उस्र भूमि भी उसके स्वामित्व में रहती थी। वनों पर भी राजा का अधिकार था। वृक्ष काटने के लिये उसकी आज्ञा लेनी पड़ती थी। राजा सैनिक और असैनिक सेवा प्रजा से लेता था। भूमि की उपज का अनुमान लगाने के लिये प्रत्येक कोठी में भूमि बीजाई और कर उपज अनुसार निर्धारण किया। प्रत्येक कृषक की भूमि का विवरण क्षेत्र तथा घासनियों वहियों मे दर्ज कीं। प्रत्येक कोठी का एक चैक या खियोट की रूप रेखा तैयार की जिसे चैहणी कोठी के भंडार में रखा। जो राजा जीत सिंह के समय तक उपलब्ध था। इनके लिये दो कायथ उपलब्ध थे। विवाद पर कृषक वहां से विवरण ले सकता था। तीन प्रकार की कृषि योग्य भूमि मानी गई 1. सिंचित रोपा, 2. असिंचित वाथल, 3. एक फसली कूटला। भूमि का रिकार्ड रखने के लिये हर कोठी में कायथ नियुक्त हुआ।

ज्योला तथा भार प्रणाली

ज्योला (जीने योग्य) एक परिवार के निर्वाह योग्य भूमि को ज्योला कहते थे। कुछ व्यक्तियों को एक से अधिक ज्योले दिये गये थे। वे एक से अधिक कार्य निभाते थे। जेउले दो प्रकार के होते थे। अछुतों के लिए 6 भार बीज के तथा अन्य के लिए 12 भार बीज का जेउला था। उपज की मापन इकाई पत्था तथा भार थे। एक पत्था में 28 छंटांक चावल या माश आते थे। एक छटांक 50 ग्राम की होती है। अतः एक पत्था में एक किलो 600 ग्राम वस्तु आती हैं। एक भार में 16 पत्थे होते है। कई स्थानों में भार 18 पत्थे का भी होता है। एक भार में जौ 15 किलो तथा माश 26 किलो आते हैं। 20 भार का एक खार तथा 20 खार का एक खरशु होता था। ज्योला निर्धारित करते समय भूमि के प्रकार का ध्यान रखा जाता था।

कर की दर

जिस भूमि में कर 20 पत्था लगता था, कर एक भार होता था। 6 भार कर तथा 12 भार कर वाली भूमियां ज्योला कहलाती थी। राजा के पास चाकरी एक बर्ष करने पर एक ज्योला पर कर नहीं लिया जाता था। 6 मास चाकरी पर आधा ज्योला कर मुक्त होता था। युद्ध के समय सैनिक तथा शान्ति के समय सड़क या भवन निर्माण पर लगे व्यक्तियों के ज्योले कर मुक्त होते थे। परन्तु ज्योला के स्वामियों को चार रुपया "बैठागनी" (घर बैठने का कर) देना पड़ता थ यदि वह राजा की चाकरी न करता था। सींचित भूमि का चार कांसी का ज्योला होता था। 4 पत्था बीज की एक कांसी होती थी। एक कांसी पर चावल 2 से 5 भार तक कर था जो उपज देख कर लिया जाता था। भूमियां अब्बल, दोम या सोम प्रकार की मानी जाती थीं।

एक ज्योले पर अन्न के स्थान पर अन्य वस्तुऐं भी ली जाती थीं। कुल्लू के प्रति ज्योला एक रसाकडू (बकरा) या एक रुपया, तेल या घी पांच सेर कच्चा (1.3/4 कि. ग्रा.)या दो सेर घी, 2 सेर तेल तथा एक रुपया नकद लिया जाता था। यह दर 18 भार तक होता था। इससे अधिक भूमियों का इस प्रकार का था:

गेहूं या दाल दो भार, मूंग एक पत्था, मसूर एक पत्था या एक रुपया तथा पांच ढब्बे (पैसे) सनरेटा 6 पत्थे, घास 18 पुल्ले तथा एक रस्सी। रस्सी का मूल्य एक पैसा (ढब्बा) भी दे सकता था। सिराज में यह दर अधिक थी। प्रति ज्योला रसोकडू तीन या एक रुपया चार आना, सेर कच्चा तेल, दो सेर कच्चा घी, चार सेर चना या आलू छः सेर, रीठे 6 पत्था, रस्सी 4 नग। एक सेर कच्चा 350 ग्राम तेल के बराबर होता था।

राजा सारी भूमि का स्वामी था। घासनियां बनाना या नये खेत खोदने पर नजराना प्रस्तुत करना पड़ता था। कर प्राप्ति का उतरदायित्व बजीरी में बजीर तथा कोठी में नेगी पर होता था। इनकी नियुक्ति राजा करता था। इन्हें परिश्रमिक दिया जाता था। कर का 1/7 भाग मुआफियों का होता था।

अन्य कर

घराट लगाना, मछली पकड़ना, शिकार करना या पकड़ना तथा भेड़ें चराने के लिये कर देना पड़ता था। गैर कृषि लोहार, बढ़ई, जुलाहा, कुम्हार, सुनार, मोची आदि भी कर देते थे या चाकरी करते थे। भेड़ों को लाहुल में चराने का कर "तिरनी" कहलाता था। यह एक पैसा प्रति भेड़ था। दूध बेचने वालों पर कार चोपड़ी कर प्रति गाय एक सेर कच्चा तथा प्रति भैंस चार सैर कच्चा घी के रुप में लिया जाता था। जगात खाने पर प्रति घोड़ा/ खच्चर

माल पर एक आना कर था। इनके अतिरिक्त कोल्हु लगाने तथा चलाने तथा चक्का पत्थर (स्लेट) निकालने पर भी कर लिया जाता था। मादक पदार्थों लुगड़ी तथा चरस निकालने पर भी कर लिया जाता था। रास्ते एक गांव के लोग दूसरे गांव तक बनाते थे।

राजस्व लाहुल में

लाहुल के लिये लाख प्रणाली थी। 20 पत्था उपज का एक लाख था। कुछ लाख से ज्योला बनता था। इस आधार पर कर लिया जाता था। 20 भार अन्न का एक खार होता था। 20 लाख से एक भार बनता है।

घोड़ों का प्रबन्ध

जिनके पास घोड़ी होती थी, बछेरा होने पर राजा को देना पड़ता था। बछेरी उसी की होती थी। बछेरे बजीरों को पालने के लिये दिये जाते थे। जिन्हें दो ज्योले इसी कार्य के लिये दिये जाते थे। राजा आवश्यकता पर उससे घोड़े मांगता था। यदि छोटी आयु में घोड़ा मर जाता तो बजीर को 40 रुपये प्रति घोड़ा दण्ड देना पड़ता था। यदि घोड़ी का स्वामी बछेरा रखना चाहे तो उसे राजा को 15 रुपये देने पड़ते थे। राजा ने 300 वीघा भूमि घोड़ों को पालने के लिये रामधार (भूईन) में रखी थी। भेखली धार लम्बी झोड़ भी घोड़ों के घास के लिये तथा चरने के लिये सुरक्षित रखी गई थीं। घोड़े पर 2 आने प्रति बर्ष प्रति पशु कर था। खानी चका पर कर नकद भी लिया जाता था। प्रति माह एक ढऊआ या ढब्बा (पैसा) कर था। सारा वर्ष घराट चलाने वाले को 12 आना 6 मास वाले को 6 आना तथा 3 मास चलाने वाले को 3 आना कर था। प्रति मास कथा या जग होने पर कर दो आना अतिरिक्त देना पड़ता था।

सिक्खों के समय राजस्व

सिक्खों ने यही राजस्व प्रणाली अपनाई। परन्तु नेगी के स्थान पर कारदार नियुक्त किये। नई कर दर निर्धारित इस प्रकार की: सिंचित भूमि के एक भार उपज एक रुपया कर तथा असिंचित भूमि के तीन भार पर एक रुपया कर निश्चित किया। सिक्ख कुल्लू से एक लाख 80 हजार रुपये कर रुप में प्राप्त करते थे।परन्तु सिराज में प्रति भार 3 रूपये कर लगाया।

राजस्व अंग्रेजों के समय

आरम्भ में राजस्व इसी दर से लिया गया। परन्तु 1868 ई. में पहला सरसरी बन्दोबस्त कराया तथा नई दरें निश्चित कीं। कर उगाहने का कार्य पुनः नेगी को दिया गया। 1890–91 ई. तथा 1911–12 ई. में बन्दोबस्त पुन

विस्तार से किये गये। आजादी से पूर्व 1845 ई. में भी बन्दोबस्त आरम्भ किया गया था जो 1952 ई. में पूर्ण हुआ।

इस अनुसार कुल्लू पांच क्षेत्रों में बांटा गया और कर निर्धारित किया गया। ये थे कुल्लू, लाहुल स्पिति, सिराज, बाहरी सिराज तथा रुपी। सिंचित भूमि के लगान दर भिन्न–भिन्न निश्चित किये गये। उपज के अनुसार भूमि की आगे श्रेणियां बनाई। जंगल का बन्दोबस्त 1878 ई. में किया गया था।

बेगार

बेगार कर का एक विकल्प

बेगार का अर्थ जबरन कराया गया श्रम था। बेगार के लिये सामन्ती तथा उप निवेशक राज्यों के साथ भोगौलिक संरचना की महत्वशाली भूमिका रही। बेगार हर स्वस्थ व्यक्ति से ली जाती थी। जो राजस्व तथा कर व्यवस्था का एक अनिवार्य अंग थी। धन के अभाव में कर के रूप में श्रम लिया जाता था। अतः इसे कर का विकल्प भी कहा जा सकता है। लोगों की आर्थिक अवस्था अच्छी न थी। धन के अभाव में प्रत्येक परिवार से एक व्यक्ति इसे शरीरिक श्रम द्वारा भुगतान करता था। शासक के दिन प्रतिदिन के निजी कार्यों, गृह उत्सव, विवाह और मृत्यु के समय बेगार के लिये प्रत्येक गांव से बेगारी बारी आने पर स्वयं उपस्थित हो जाते थे। सड़क, राजभवन या पुल निर्माण के लिये बेगार के लिये दिन निश्चित कर बेगारी बुलाये जाते थे। बेगार के दिनों में खाना भी बेगारी अपने पास से खाते थे। शासक यात्रा पर जाता था तो उसकी सुरक्षा तथा सामान ले जाने के लिये बेगार देनी पड़ती थी। बेगार पर कुल्लू बोली में एक व्यंग इस प्रकार है:–

कंमादी गैरी डुगड़ी कौशी। खांदी गैरी जौगड़ी मौसी।।

(काम करने वाली कोई और, खाने वाली कोई और)। राजा के निजी कार्य पर प्रतिदिन आठ व्यक्ति आते थे। जो बेगार नहीं देते, वे घास, लकड़ी या सामान लाते थे। मृत्यु, उत्सव तथा विवाह पर 50 बेगारी एक ही समय आते थे। यात्रा पर 20 व्यक्ति जाते थे। शिकार पर हेड़ा के लिये भी बेगारी बुलाये जाते थे।

बेगार अंग्रेजों के समय

बेगार अंग्रेजों के समय भी जारी रही। बेगार न देने पर नेगी या नम्बरदार तेहसीलदार के पास शिकायत करता था। जो उस व्यक्ति को जुर्माना करता था। जुर्माना न देने पर सजा होती थी। सड़कों की कमी के कारण,

मानव सामान ढोने का एक व्यक्ति बेगार वर्ष में दो बार और प्रत्येक बारी पर दो दिन निभाता था। अंग्रेजों के समय में एक पड़ाव (पांच से आठ मील) से अधिक दूरी के लिये परिश्रमिक दिया जाता था। परन्तु यह राशि बहुत कम होती थी। एक पड़ाव से कम दूरी के लिये कुछ नहीं मिलता था।

बेगार एक अभिशाप

यात्रा मे बेगारी को कोई सुविधा नहीं मिलती थी। रोटी पकाने का प्रश्न ही नहीं था। लोग रातें खुलें में या पाले घरों में बिताते थे, यहां बिछाने के लिये धान का घास और ओढ़ने के लिये अपना पट्टू होता था। रात्री पड़ाव पर अधिकारियों के लिये भोजन तथा बिस्तर की व्यवस्था, दही, घी, कोयला लकड़ी तथा घोड़ों के लिये घास स्थानीय लोगों से इकट्ठा किया जाता था। यह प्रबन्ध स्थानीय नम्बरदार का होता था। साधारण बहाने से बेगारियों से दुर्व्यवहार किया जाता था। कई बार पिटाई भी की जाती थी।

बेगार की समाप्ति के लिये प्रयास

1928 ई. में लार्ड इरविन वायसराय हिन्द कुल्लू आये महाराजा कोठी के दो व्यक्ति गेहरू और खेखु बेगार के विरूद्ध प्रार्थना पत्र ले बवैली में निर्जन स्थान पर सड़क के किनारे पेड़ों पर जा छूपे। इनमें खेखु वायसराय की कार के आने पर सड़क पर कूद गया और प्रार्थना पत्र वायसराय की गोद में डाल दिया। दोनों को पकड़ लिया गया। उन्हें कुछ दिनों के पश्चात छोड़ दिया। इसके चार मास बाद कुल्लू में बेगार समाप्ति की आज्ञा प्राप्त हुई। बेगार फिर भी चलती रही। परन्तु अधिकारियों का व्यवहार बदल गया। बेगारियों से दुर्व्यवहार में कमी आई। यह सदियों से चली आ रही परम्परा थी जिस का उल्लेख बाजिबउलअर्ज में किया गया था। इसे सरकारी मान्यता मिली हुई थी जिसका अन्त स्वतन्त्रता के साथ हुआ।

27. न्याय पद्धति

पुराने समय से समाज को नियन्त्रित रखने के लिये कुल्लू में ग्राम देवता का सहारा लिया जाता रहा। देवता के रुष्ठ होने, देवता द्वारा अपनी अध्यात्मिक शक्तियों से दिये जाने वाले दण्ड के भोगने तथा कष्ट सहने के डर से अनैतिक कार्य बहुत कम हुआ करते थे। किसी अनैतिक कार्य में किसी का हाथ होने का शक दूर करने के लिये या सच्चाई जानने के लिये देवता के नाम से कसमें ली जाती हैं। कुल्लू से आठ कि. मी. दूर (कौशु नारायण) है। जिसे कई (कसमी नारायण) भी कहते हैं। जहां शपथ लेने के लिये न्यायालय से भी अभियोग ले जाये जाते हैं। जगती पौट नगर तथा निरमण्ड में शिव मन्दिर भी इसी कार्य के लिये प्रसिद्ध हैं। ऐसी जनधारणा है कि जो व्यक्ति इन मन्दिरों में झूठी कसमें खाते हैं। उन्हें देव दण्ड भोगना पड़ता है तथा उसका झूठ बोलने पर देवता अनिष्ठ करता है। ग्राम देवता को छू कर या मूर्ति पर मोहरा धो कर पानी पीने से कसमें ली जाती हैं। इनके कई बार चमत्कारी परिणाम निकलते हैं। कई बार दोनों पक्ष समझौता कर लेते हैं या उन में से एक दावा छोड़ देता है। कई बार चोरी हुआ माल तक वापस आ जाता है, यदि चोर कसम खा लेने वालों से हो।

ग्राम सभा

न्याय के लिये ग्राम सभा का भी सहारा लिया जाता है। यह ग्राम सभा प्रत्येक परिवार के मुख्य पर आधारित होती है। ऐसी सभा पीड़ित पक्ष बुलाता है। सभायें देवस्थल पर बुलाई जाती हैं। इन सभाओं में दोनों पक्षों को ध्यान से सुना जाता है तथा तर्क–वितर्क की समीक्षा कर निर्णय दिया जाता है। ऐसी सभायें अति प्रभावी होती हैं। अपने निर्णय को मनवाने के लिये इनके पास जाति बहिष्कार का सशक्त शस्त्र होता है जिसे कुल्लू भाषा में "उगू" कहा जाता है। ऐसी सभाओं में प्रतिष्ठित व्यक्तियों की भूमिका महत्वशाली होती है।

पंच फैसला

कई बार दोनों पक्ष पंच फैसले के लिये भी अपने झगड़े प्रस्तुत करते हैं। बंटबारा, विवाह, आदि विवादों पर दोनों पक्ष अपनी ओर से एक या दो व्यक्तियों को चुन लेते हैं और अपने झगड़े का निपटारा उसके निर्णय के अनुसार करते है। इस स्थिति में समझौते के लिये बीच का रास्ता निकाला जाता है।

नेगी द्वारा झगड़ों का निपटारा

स्वतन्त्रता के पूर्व नेगी, नम्बरदार भी विवाद उत्पन्न होने पर फैसला करवा दिया करते थे। क्योंकि प्रशासन द्वारा इस समय इन्हें अत्याधिक महत्व दिया जाता था और उन द्वारा दी गई गवाहों को विशेष मान्यता मिलती थी। स्वतन्त्रता के पश्चात निर्वाचित पंचायतें बनी है जहां छोटे झगड़ों का निर्णय किया जाता है।

मलाणा को विशिष्ट न्याय पद्वति

मलाणा जनपद की अपनी विशिष्ट पद्धति है। जिसके बारे में जानना सभी के लिये रुचिकर होगा। मलाणा के लोगों ने गणतन्त्र पद्धति प्रशासन तथा न्याय प्रक्रिया में अपनाई और उस परम्परा को बाहरी प्रभाव से सुरक्षित बनाए रखा। प्रशासनिक तथा न्यायिक कार्य एक ही सभा निभाती है। जिसके गठन के बारे में पंचायत अधीन लिखा जा चुका है। केवल यहां न्याय प्रक्रिया दी जाती है।

न्याय चाहने वाला व्यक्ति हारचा (चबूतरा) के निकट आग जलाता है। ज्येषटांग (ऊपरी सदन) के जिस सदस्य को इसके बारे सबसे पहले पता लगता है, वह उसे जाकर आश्वासन देता है कि उसके पक्ष को सुनने के लिये ज्येषटांग की जल्दी बैठक बुला ली जायेगी। ज्येषटांग की बैठक में उस व्यक्ति की बात को सुना जाता है तथा निर्णय किया जाता है। यदि बात उनसे न सुलझे तो ग्राम सभा (कनिष्टांग) या कोर ;साधारणद्ध सभा के सम्मुख अभियोग रखा जाता है। कोर की बैठक बुलाने के लिये पोगलदार, हारचा के सिरे पर खड़ा हो कर एक पत्थर पर पांव रख कर और जोर से पुकारता है, हो अ अ अ...... भुरुए हो अ अ अ...... द्रोही घटक द्रोही...... (देवता की कसम) पुकार लगाता है। वह रुक–रुक कर तीन आवाजें लगाता है। आवाजे देवता के नाम से लगाई जाती है। पुकार सुनते ही प्रत्येक परिवार से एक व्यक्ति (मुखिया) अपना काम वहीं छोड़कर तीसरी पुकार की समाप्ति तक हारचा के पास पहुंच जाता है। देर करने पर जुर्माना देना पड़ता है। सभी निर्णय देवता के नाम से किये जाते हैं। जुर्म के अनुसार जुर्माना निश्चित है। सारी प्रक्रिया में बहस, जिरह, तर्क–वितर्क के लिए अवसर दिया जाता है।

जुर्माना आदि पोगलदार ज्येष्टांग के सम्मुख लेते हैं क्योंकि निर्णय पर अमल कराने का अधिकार पोगलदार को ही मिलता है। वादी तथा प्रतिवादी अपने पक्ष रखने के लिए किसी व्यक्ति को मुखत्यार भी दे सकता हैं जिसकी फीस रुपये 7 हैं। यदि कोर तथा ज्येष्टांग भी मिल कर कोई निर्णय न कर सके तो अभियोग देवता जमलू के आध्यात्मिक न्यायालय में अन्तिम निर्णय के लिये प्रस्तुत होता है।

आध्यात्मिक न्यायालय की प्रक्रिया

आध्यात्मिक न्यायालय में पोगलदार दो बकरे, बराबर आयु, स्वास्थ्य तथा कद के लाते हैं। इन्हें माता नरोल के स्थान पर बांध देते हैं। फिर विष युक्त बूटी पीसी जाती है। विष के दो समान भाग किये जाते है। फिर दोनों बकरों की पिछली टोगें चीर कर विष बूटी उसमें भर दी जाती है। वादी तथा प्रतिवादी अपने बंधे हुये बकरों के पास जाहणूं के भार ऊंधे मुंह बैठ जाते हैं। दोनों के उपर पट्टू डाल दिया जाता है। जिस पक्ष का बकरा पहले मरता है वह हार जाता है जिसकी घोषणा ज्येष्टांग के सदस्य करते हैं। हारने वाले के सिर पर कपड़ा बांधा जाता है और वह लज्जित होकर चला जाता है। जीतने वाला देवता और ज्येष्टांग को नमस्कार करता है और अपने सहयोगियों सहित प्रसन्नता मनाता है। इसके पश्चात दोनों पक्षों को बुला कर देवता सिंहासन के सम्मुख उनकी मित्रता करवा दी जाती है ताकि शत्रुता न रहे। जीतने वाला हारने वाले को घर ले जाता है और उसका सत्कार करता है।

यहां के लोग सरकारी कार्यालय / न्यायालय में जाना अपराध मानते हैं और अपने न्याय पर निष्ठा से चलते हैं। अंग्रेजों के समय एक गूर आहिटु गांव से निकाला गया। उसने सरकारी सहायता से गांव में पुनः प्रवेश पा लिया। परन्तु ग्राम वासियों ने उसका सामाजिक बहिष्कार जारी रखा और वह घुल–घुल कर मर गया। मृत्यु दण्ड के लिये व्यक्ति को पट्टू में डाल कर पत्थरों से बांध कर नाले में डालते थे क्योंकि पहले ग्राम न्यायालय मृत्यु दण्ड भी देता था। 1846 ई. में गांव के प्रधान शुकरु ने अंग्रेजी सेना को अधिकार करने के लिये बुलाया। लोगों ने उसका बहिष्कार किया।

प्रायः जुर्माना एक टका किया जाता है। चोरी करने पर माल का दोगुना दिया जाता है। जुर्माना न देने पर घर का सारा सामान जब्त कर दिया जाता है। देने पर वापस कर दिया जाता है। देवता की चोरी करने पर गांव से निकाल देते हैं। न्यायालय जाने पर समाज से बहिष्कार किया जाता था। शराब पीने पर जुर्माना किया जाता था। मलाणा में जुर्माना दर निर्णय होने पर देवता के कोष में टक्का जमा करना पड़ता था। अब दर बदल गया है।

हलाण की न्याय पद्धति

यह पद्धति प्राचीन समय से चल रही है। इस समय हलाण में पांच गांव है। प्रत्येक गांव से एक जठेरा, एक मुंशी (लेखक) और शैशु (मुखिया) सन्देश वाहक चुने जाते हैं। ये तीनों मिल कर चौंतड़ा कहलाते हैं। अभियोग कर्ता (वादी) जठेरे के पास फीस जमा करा कर मुंशी की पोथी में अपनी शिकायत दर्ज कराता है। जठेरा, मुंशी और शैशु निश्चित दिन को दोनों पक्षों

को सुनते हैं। वे देवता के स्थान पर इकट्ठे होते हैं। वादी और प्रतिवादी को एक किनारे भेज कर इस पर विचार विमर्श करते हैं और फिर निर्णय देते हैं। निर्णय पर अपील सभी जठेरों की सभी के पास की जाती है। इसकी फीस पहले से दुगनी होती है। यदि फिर निर्णय से वादी संतुष्ट न हो तो प्रतिघर का मुख्य सौह में इकटठे होते हैं। इसे रायत कहते हैं। इसका निर्णय अन्तिम तथा बहुमत से किया जाता है। न मानने वाले का सामाजिक बहिष्कार किया जाता है।

न्याय ठाकुरों राणाओं के समय

केन्द्रीय शक्ति राजा के रूप में उभरने से पूर्व इस आंचल में राणाओं और ठाकुरों का राज था जिसकी आज्ञा ही कानून थी। वही सर्वोच्च न्याय अधिकारी तथा दण्ड अधिकारी होता था।

न्याय राजाओं के अधीन

एक अंग्रेजी शिकारी टाईक ने अपनी पुस्तक "इनक्वैस्ट ऑफ गैम–1927" में लिखा है कि जगती पट (नगर) में भी दोनों पक्ष बकरे को छोड़ते थे जिस पक्ष का बकरा मन्दिर को पहले छूता था वह पक्ष जीत जाता था। राजतन्त्र आने पर राजा द्वारा अभियोग सुने जाते तथा निर्णय दिये जाते थे। राजा को परमात्मा का प्रतिनिधि समझा जाता था। उसके सम्मुख झूठ बोलना पाप समझा जाता था। दोषी पाये जाने पर कठोर दण्ड दिये जाते थे इसी कारण लोग अपने झगड़े पंच फैसले या ग्राम सभा में निपटा लिया करते थे। राजाओं ने इस क्षेत्र को बजीरियों में बांटा था। जिसके मुख्य को बजीरी में पूरे न्यायिक अधिकार प्राप्त थे। उनके विरुद्ध अपील राजा के पास होती थी। कुल्लू अंग्रेज क्षेत्र के अधीन आने पर राजा ठाकुर सिंह के अधिकार बजीरी रुपी तक सीमित कर दिये गये। उसके पुत्र ज्ञान सिंह को राजा के स्थान पर राये की उपाधि दी और तीन बर्ष तक उसे न्यायिक और प्रशासनिक अधिकारों से वंचित रखा। परन्तु ये अधिकार पुर्नविचार करने पर दे दिये गये। राये दलीप सिंह, राये मेघ सिंह तथा राये भगवन्त सिंह को 1948 ई. तक न्यायिक शक्तियां प्राप्त रहीं।

न्याय अंग्रेजों के अधीन

1845 ई. में अंग्रेज सरकार द्वारा एक सहायक आयुक्त नियुक्त हुआ जिसका कार्यालय नगर था। उसके अधीन तहसीलदार हुआ करता था। यह जमीन सम्बन्धी तथा फौजदारी विवादों का निपटारा करता था। दीवानी अभियोग के लिये सब जज नियुक्त था। सभी अपीलें न्यायालय धर्मशाला जिला मुख्यालय में हुआ करती थीं।

1925 ई. से पूर्व सभी जिला कार्यालय नगर में थे। 1925 ई. में कुछ कार्यालय कुल्लू लाये गये परन्तु उपायुक्त कार्यालय 1946 ई. तक 7 मास तक नगर में और 5 मास तक कुल्लू में होता था। 1946 ई. के पश्चात स्थाई रुप में कुल्लू जिला हेडक्वार्टर बना।

स्वतन्त्रता पश्चात न्यायिक सेवा

न्यायिक सेवाओं में स्वतन्त्रता पश्चात विशेष विस्तार हुआ। इस समय 204 पंचायतें है। एक प्रथम श्रेणी न्यायधीश, एक सैशन जज, दीवानी तथा फौजदारी झगड़ों के निपटारा के लिये नियुक्त है। जिला लाहुल के न्यायधीश का कार्यालय भी कुल्लू में है। अन्य अभियोगों के लिये जिलाधीश, तीन मण्डल अधिकारी, चार तहसीलदार, तीन नाइव तहसीलदार के न्यायालय भी है। न्यायिक परिसर कुल्लू विस्तृत हो गया है जो 1 करोड़ 20 लाख से 1999 ई. में बन कर तैयार हुआ। मनाली में पृथक न्यायक परिसर बना तथा पृथक न्यायधीश नियुक्त 1997 ई. में हुआ है।

28. पंचायत पद्धति

प्राचीन काल से स्थानीय समस्याओं के समाधान के लिये इस आंचल में पंचायत पद्धति प्रचलित थीं। ये पंचायतें आज की तरह निर्वाचित नहीं होती थीं। प्रत्येक परिवार का मुख्य इसका सदस्य होता था। आवश्यकता अनुसार इसकी बैठक बुला ली जाती थी। ये बैठकें देवस्थल पर ही प्रायः की जाती थीं। इन पंचायतों के अधीन जीवत एक गणतन्त्र प्रणाली थी। केवल लोग अपने को ग्राम देवता के अधीन मानते थे। ग्राम देवता न किसी सत्ता को अपने उपर मानता था और न किसी बाहरी सत्ता को ललकारता था। स्थानीय शासन स्वतन्त्र था। गांव की आत्मनिर्भरता में ही उसके स्वराज्य की अटूट झलक विद्यमान थी। खेत से खाद्य पदार्थ, अन्न के बदले जूते, मिट्टी के बर्तन तथा लोहे का सामान प्राप्त करते थे और इतना ही आर्थिक विनिमय होता था। पत्थर लोहा के टकराव से आग, जुगणियों (शल्ली) से रोशनी प्राप्त करते थे। केवल नमक बाहर से लाया जाता था।

आपसी झगड़ों के निपटारे के लिये तथा स्थानीय समस्याओं के समाधान एवं प्रबन्ध के लिये ग्राम पंचायतें थीं। इन पंचायतों की कार्य प्रणाली गठन की प्रक्रिया बड़ी रोचक एवं उन्नत थी। नियमित एवं अनुशासनात्मक जीवन जीने के लिये गणतन्त्र पद्धति अपनाई गई। ऐसे गणतन्त्र का उदाहरण शायद ही संसार में कहीं मिले। हजारों साल बीतने पर मलाणा की पंचायत पद्धति ज्यों की त्यों चली आ रही है। जिसका वर्णन बड़ा रोचक है। मलाणा गांव में नगर और जरी से पंहुचा जाता है। यह अति दुर्गम घाटी है। इसी कारण से यह स्थान बाहरी प्रभाव से सुरक्षित रहा। मलाणा नगर से 12 मील दूर है और स्थान की ऊंचाई 9000 फुट है।

मलाणा पंचायत का गठन

मलाणा में 125 घर और जनसंख्या 1500 के लगभग है। गांव दो भागों में बंटा है सौरा बेढ़ तथा धारा बेढ़। इनमें चार चुघ (वंश) है। 1. धमयाणी 2. नगवाणी 3. दुराणी 4. पलचाणी। इनसे प्रतिनिधि सर्वसम्मति से नियुक्त किये जाते हैं। मलाणा जनपद के दो सदन है। 1. ज्येष्टांग (ऊपरी सदन) , 2. कनिष्टांग (लोअर सदन) कनिष्टांग को "कोर" भी कहा जाता है। इसमें प्रत्येक घर का मुख्य भाग ले सकता है। इसलिये इसे ग्राम सभा भी कहते हैं। मत का अधिकार घर के मुख्य को ही होता है। मत देने वाले को "चाकर" और न देने वाल को "हुई" कहते हैं। ज्येष्टांग में ग्यारह सदस्य होते हैं। जिनमें तीन सदस्य पुजारी, कारदार (कर्मिष्ट) तथा गूर आजीवन तथा शेष आठ चुने हुए होते हैं। तीन स्थाई सदस्यों को मुण्डी कहते हैं। ये तीनों देवता

द्वारा चुने जाते हैं। आठ अस्थाई सदस्यों (जठेरा) चुघों से चुने जाते हैं। इसके चुनाव में मुकाबला किया जाता है परन्तु परम्परा एक मत की है। इन आठ सदस्यों का कार्य काल निश्चित नहीं। एक सदस्य के पद त्याग करने पर या निकाले जाने पर सभी सदस्य मुक्त समझे जाते है और इनका पुनः चुनाव कराया जाता है। परन्तु चुने जाने पर तीन मास तक कोई सदस्य पद त्याग नहीं कर सकता। चुनाव के समय किसी सदस्य को स्थान छोड़ने की आज्ञा नहीं होती है।

इन ज्येष्टांग के सदस्यों के कार्य एवं मन्त्रणा के लिये एक विशेष चबूतरा है जिसे "हारचा" कहते है। इसमें सात बड़े पत्थर लगे हुए हैं। सेवा निवृत सदस्य इस पर बैठ नहीं सकते। इन्हें परम्परा अनुसार हारचा से नीचे उतरना पड़ता है। तुरन्त बाद ग्राम सभा द्वारा अगले आठ सदस्य चुने जाते हैं। नव निर्वाचित सदस्यों को बड़ा पुजारी हाथ पकड़ कर चबूतरे पर बिठाता है। ये देवता तथा जनपद के प्रति वफादार रहने की सर्वप्रथम प्रतिज्ञा लेते हैं जिसके लिये उसी समय काटे गये बकरे या भेड़ के लहू से माथे पर टीका लगाते है। पुजारी नगवाणी चुघ से चुना जाता है। देवताओं के पश्चात यह सबसे बड़ा अधिकारी होता है।

कर्मिष्ट धमयाणी चुघ से चुना जाता है। देवता की आय व्यय तथा अन्य कार्य की देख रेख यही करता है। गूर दूराणी या पलचाणी चुघ में किसी एक से ही हो सकता है। गूर चुनने के लिये विशेष प्रक्रिया है। इसमें देवता की आत्मा प्रवेश करती है। उसमें कम्पन होती है और देवता गूर की घोषणा करता है। परन्तु बात यहां समाप्त नहीं होती। उसकी परीक्षा ली जाती है। एक बड़ा गड्ढा खोदा जाता है। उसमें गूर उतर जाता है उसे अन्न और एक दीपक दे दिया जाता है। गडढे के मुख को तख्तों से ढांप दिया जाता है। तख्ते पर मिट्टी की मोटी परत डाल दी जाती है। मिट्टी में हल चलाया जाता है और सरसों बीज दी जाती है। निश्चित समय बीतने पर गड्ढे को निकाला जाता है। यदि गूर जीवित हो तो उसे कन्धे पर बिठा देवता के सिंहासन पर ले जाते हैं। देवता की ओर से उसे पगड़ी पहनाई जाती है। फिर चबूतरे पर ले जा उसे काटी गई भेड़ या बकरी के लहू से टीका करते हैं और देवता के प्रति वफादारी की शपथ दिलातें हैं। गूर का विशेष स्थान है। देवता गूर के माध्यम से ही बात करता है और आदेश देता है।

गांव के सारे प्रबन्ध की जिम्मेदारी ज्येष्टांग की होती है। गांव की प्रगति देव कार्य, न्याय कार्य इत्यादि यही करते हैं। ज्येष्टांग की सहायता के लिये चार पोगलदार होते हैं जिन्हें प्रतिबर्ष देव कोष से एक रुपये वेतन मिलता है। इनका कार्य पोलिस का होता है। ये ज्येष्टांग के आदेशों का पालन

करवाते हैं। जुर्माना प्राप्त करते हैं। शान्ति बनाये रखते हैं। ज्येष्टांग कोई कार्य कोर की इच्छा विरुद्ध नहीं करता, न ही कर सकता है। ज्येष्टांग के विरुद्ध अविश्वास प्रकट किया जा सकता है जो उन पर कलंक या दोष माना जाता है। कारदार, पुजारी तथा गूर को एक–एक सहायक भी दिया जाता है।

निरमण्ड की पंचायत पद्धति

निरमण्ड गांव (बाहरी सिराज) तथा परशुराम मन्दिर के प्रबन्ध के लिये भी चुनी हुई पंचायत कार्य करती है। निरमण्ड ब्राह्मणों का गांव है जिसमें पांच प्रमुख गोत्रों के ब्राह्मण पृथक–पृथक स्थान पर बसे हैं। जहां उनके लिये पृथक–पृथक अपना जल स्रोत तथा अपने इष्ट देव के मन्दिर हैं। प्रत्येक गोत्र से एक–एक ब्राह्मण पंचायत के लिये चुना जाता था। प्रत्येक गोत्र के लोग अपने इष्ट देव के सम्मुख इकट्ठे होते थे तथा अपना प्रमुख चुनते थे। इन पांच प्रमुखों से ग्राम पंचायत बनती थी। ये पांच अपने में से एक को कारदार चुनते थे जो पंचायत तथा ग्राम मुखिया होता था। यह पांचों मिल कर गांव तथा परशुराम मन्दिर के प्रबन्ध करते थे। लोगों को न्याय देते थे। अभियोग सुनते थे। दण्ड देते थे। समस्याओं को सुलझाते थे।

पंचायत की सार्वजनिक सभाओं के लिये एक गोलाकार पत्थर का चबूतरा परशुराम मन्दिर के सम्मुख है। पंचों के आपसी मन्त्रणा के लिये मन्दिर का एक कमरा प्रयोग किया जाता था। गांव का अपना कारागार था। कारदार की फांसी तक के अधिकार थे। कारदार धर्म दण्ड के आधार पर शासन चलाता था। वह पंचायत प्रणाली परशुराम जी द्वारा चलाई गई मानी जाती है। मन्दिर का प्रबन्ध अभी भी पंचों के अधीन है परन्तु ग्राम प्रबन्ध अब सरकार की ओर से निर्वाचित पंचायत के अधीन है। इस समय कुल्लू जिला में निर्वाचित 204 पंचायते कार्य कर रही है।

विकास खण्ड तथा पंचायतें

1. विकास खण्ड कुल्लू

पंचायतें : 1. बन्दरोल, 2. जन्दौड़, 3. बनौगी, 4, सारी, 5. डुघीलग, 6. फलाण, 7. ढुंगरी गाड़, 8. मानगढ़, 9. माशना, 10. चौपारसा, 11. ब्राह्मण, 12. भल्याणी, 13. भूमतीर, 14. पीज, 15. शिलानाल, 16. खड़ीहार, 17. बड़ाहार, 18. शिला राजगिरी, 19. मौहल, 20. भुलंग, 21. शमशी, 22. खोखन, 23. न्यूल, 24, बजौरा, 25. हाट, 26. रोट, 27. तलाड़ा, 28. पारली, 29. ज्येष्टा, 30. मंझली, 31. दियार, 32. नरैश, 33. वल्ह, 34. शिलीहार, 35. छंयौर, 37. रटोचा, 38. चौंग, 39. कलैहली,

40. जलूग्रां, 41. शाट, 42. ब्राधा, 43. जरी, 44. वरशैणी, 45. मणीकर्ण, 46. कैशावरी, 47. रैला, 48. भलाण, 49. पीणी।

2. विकास खण्ड नगर

पंचायतें : 1. पलचान, 2. बुरुआ, 3. शनाग, 4, वशिष्ट, 5. मनाली, 6. नसोगी, 7.शेलीऩ, 8. प्रीणी, 9. जगतसुख, 10. गोजरा, 11. करजां, 12. हलान (1), 13. नगर, 14. बराण, 15. पनगां, 16. रियाड़ा, 17. बड़ाग्रां, 18. हलान (2), 19. कटराई, 20. दुआड़ा, 21. पिछलीहार, 22. हुरंग, 23. मंडलगढ़, 24, देवगढ़, 25. शिरढ़, 26. बैंची, 27. नथान, 28. अरछण्डी, 29. जाणा, 30. गाहर, 31. कराड़सू, 32. काईस, 33. न्यूली, 34. पूईद, 35.सयोगी, 37. मलाणा।

3. विकास खण्ड बंजार

पंचायतें : 1. कोटला, 2. चकूरठ़ा, 3. कनौन, 4, धऊगी, 5. दशाहड़, 6. बनोगी, 7. सचैहऩ, 8. गाड़ापारली, 9. शैंशर, 10. शांघड़, 11. मंगलौर, 12. थाटीबीड़, 13. गोपालपुर, 14. देउठा, 15. चनौन, 16. पलाहच, 17. कलवारीं, 18. शिकारी, 19. बाहु, 20. खाबल, 21. मोहनी, 22. सराज, 23. तांदी, 24, खाड़ागाड़, 25. चैहनी़, 26. शरबी, 27. शिल्ली, 28. नौहांडा, 29. तुंग।

4. विकास खण्ड निरमण्ड

पंचायतें : 1. वायल, 2. सराहऩ, 3. डीम, 4, कुशवा, 5. कोट़, 6. सरघा, 7. नौऱ, 8. अरसु, 9. बाड़ी, 10. तुनऩ, 11. खरगा, 12. पौशना़, 13. निशानी, 14. राहणु, 15. घाटु, 16. धमोग, 17. निरमण्ड, 18. वाहवा, 19. भालसी, 20. गडेज, 21. शिल्ली, 22. लोट, 23. दोराह़, 24, नीथर।

5. विकास खण्ड आनी

पंचायतें : 1. करशईगाड़, 2. लगौटी, 3. टकरासी, 4. विशलधार, 5. मोहर, 6. कराड़, 7. रोपा, 8. कुगंश, 9. कराना, 10. लझेरी, 11. खणी, 12. कोहिला, 13. कमांद, 14. बुछेर, 15. वखनाओं, 16. चौबाई, 17. देउठी, 18. जावन, 19. तलूना, 20. आनी, 21. डिंगीधार, 22. बेहना, 23. दलाश, 24. ब्यूंगल, 25. पलेही, 26. कुठेड़।

दिसम्बर 1995 में नये पंचायत /नगरपालिका अधिनियम अनुसार चुनाव कराये गये जिसमें 30 प्रतिशत महिलाओं को प्रतिनिधित्व दिया गया। अब दो से अधिक सन्तान वाला ;पुरूष या महिलाद्ध चुनाव में उम्मीदवार नहीं हो सकता है।

29. साहित्य

साहित्य की दृष्टि से कुल्लू बहुत पिछड़ा है। अब इस ओर कुछ प्रयास हुये है। कुल्लू साहित्य को तीन श्रेणी में बांटा गया है:
1. कुल्लू क्षेत्र में सृजित साहित्य 2. अनूदित साहित्य 3. लोक साहित्य।

मौलिक रचनायें

कुल्लू क्षेत्र के प्राचीन साहित्य की खोज करते समय कई संस्कृत में पाण्डुलिपियां देखने को मिलीं।ये सभी पाण्डुलिपियां मुद्रण तथा शिक्षा सुविधा के अभाव में कुछ विद्याओं को जीवित रखने का प्रयास था। यह निश्चय से कहा जा सकता है कि उथल–पुथ्ल, अभाव–अनिश्चय तथा शोषण के काल में भी यह विद्यायें इस क्षेत्र में जीवित रहीं। हस्त लिखित महाभारत, दुर्गा सप्तशति, रत्नाकर, आयुर्वेद, ज्योतिष आदि कई रचनायें देखने को मिलीं।

कुलान्त पीठ महात्मय

यह संस्कृत कीं रचना है। इसे ब्रहमाण्ड पुराण का एक भाग माना जाता है। परन्तु गीता प्रैस द्वारा छापे गये ब्रहमाण्ड पुराण में यह अध्याय नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि इसकी रचना कुल्लू में ही हुई। इसमें कुल्लू क्षेत्र की सीमाओं, स्थानों, प्रमुख नदियों,पहाड़ों पर्वतों, तीर्थों इत्यादि का सही वर्णन है। इस का उल्लेख सबसे पहले कुल्लू के उपायुक्त हारकूट ने अपनी पुस्तक में किया है। परन्तु इसकी प्रति पुरोहित चन्द्रशेखर ने "सोमसी" पत्रिका में छपवा कर इसे सभी की जानकारी में लाया। इस महात्मय के सात–अध्याय हैं। लेखक की शैली सुन्दर तथा भाषा पर पकड़ अच्छी है।

अनुदित साहित्य

कुछ ग्रन्थ कुल्लू के राजाओं ने विशेष प्रयत्नों से बनवाये थे। यह ग्रंथ अब कई संग्राहलयों में बहुमूल्य निधि के रुप में रखे गये हैं। ये टांकरी के प्राचीनतम ग्रंथों में से भी हैं। इसलिये इनका महत्व और भी बढ़ जाता है।

सुन्दर श्रृंगार

इसका लेखक शाहजहां का दरवारी कवि राय सुन्दर दास था। इसमें श्रृंगारिक कवितायें है। ग्रन्थ का आकार 20 गुना 45 सै. मी. है। इसके अस्सी (80) पृष्ठ है। यह ग्रन्थ 1788 ई. में बनाया गया। इसे टांकरी में राजा प्रीतम सिंह ने सचित्र बनवाया। यह ग्रन्थ चण्डीगढ़ संग्राहलय में रखा है। राजा प्रीतम सिंह के समय रचित अन्य ग्रन्थ पद्म पुराण, मन्त्र देव प्रकाशित, श्री राम गीता, बाल काण्ड (तुलसी कृत) है।

मधुमालती

यह ग्रंथ अति लोकप्रिय हुआ है इसकी तीन प्रतियां विभिन्न संग्राहलयों में है। एक प्रति कुल्लू में ही है। इस ग्रन्थ को भी राजा प्रीतम सिंह ने 1794 ई. में बनवाया था। इसका लेखक चर्तुभुज दास है। यह राजा चन्द्रसैन की पुत्री मालती तथा मंत्री पुत्र मधु की प्रेम कथा है। मालती मधु पर मोहित हो जाती है। वह अति सुन्दर था। दोनो राम सरोवर तट पर गन्धर्व विवाह कर लेते है। राजा उन्हें मारना चाहता है पर सफल नहीं होता। अन्त में ये सफल जीवन व्यतीत करते हैं। इसमें पृष्ठ 206 हैं। आकार 6 इंच गुणा 9 इंच है। मूल काव्य मंझन का है। यह 17 वीं शताब्दी की रचना है। कुल चित्र 58 है जिनमें 34 बड़े तथा 24 छोटे हैं।

भागवत पुराण

1799 ई. में इस ग्रंथ को भी राजा प्रीतम सिंह ने टांकरी में लिखवाया। इसमें सुन्दर ढंग से भागवत पुराण का अनुवाद किया गया है। यह राष्ट्रीय संग्राहलय दिल्ली की सम्पति है। ऊपर लिखे तीनों ग्रंथों का चित्रण शाहजहां के दरबार के चित्रकार भगवान ने किया है। चित्रकला के नीचे चित्रों का वर्णन है। शांगरी रामायण, रास पंचध्यायी तथा दुर्गा सप्तशती शाक्त धर्म की प्रसिद्ध पुस्तक है।

टांकरी में अनुदित अन्य ग्रंथ

कुल्लू में वैषणव मत आने से इसके प्रचार प्रसार के कार्य भी हुये। इस मत के प्रसारक तथा प्रचारक भगत खिन्दू और उसका बेटा रामरत्न हुये। ये बुरुआ के रहने वाले थे और बड़े विद्वान थे। इन्होंने कई ग्रंथों का टांकरी में अनुवाद किया। भगत खिन्दू बड़ा धनी था। उसके धन के बारे में कहावत प्रसिद्ध है:

"बरुआ रे गट्टे होर खिन्दू रे टक्के रा अन्त नहीं"। उसने बुरुआ से दशौर तक सीढ़ियां बनवाई थीं।उन द्वारा अनुदित कृतियां नीचे दी जाती हैं:— 1. राम चलितर — तुलसी दास रचित रामायण कथा 2. रामायण कथा 3. महाभारत कथा 4. कृष्ण चलितर 5. राम लीला।

रामचलितर एक बड़ी पुस्तक है। जिसका भार 8 कि. 700 ग्राम है। इसमें कागज हाथ से बना लगा है। इसकी जिल्द काकड़ के चमड़े की है। रामायण के सभी कांण्ड (उतर काण्ड से लंका काण्ड तक) इसमें है।

इनके अतिरिक्त हस्त लिखित विविध अन्य पुस्तकें भी हैं। जिनकी संख्या 20 के लगभग होगी। इन में राजनीति पर वजीर के गुण, वास्तु कला पर, बागा कराना, कोक शस्त्र तथा ज्योतिष शास्त्र उल्लेखनीय हैं।

(यह कृतियां श्री खूब राम कराड़सु के पास हैं)

अन्य रचनायें

रसिक प्रिय – यह 1648 ई. की केशव दास कवि की रचना है। इसका लिपिकार महाराज कुमार इन्द्रजीत है।

रस मंजरी – मान कवि द्वारा रचित है। राग रूप में है। इसके साथ अन्य पांडुलिपियां संग्रहित हैं। लिपि टांकरी है।

कृष्ण तथा रास लीला – ये राग है। जिसकी रचना देई खीमी ने की हैं। भाषा बृज तथा अवधि है। इसमें राजा जगत सिंह तथा उसकी राजधानी मकराहड़ का वर्णन है।

सचित्रा गीता– इन्द्र शास्त्री पिपला आगे के पास इसकी दो प्रतियां देखी गई।

संतरणशील साहित्य

इस साहित्य में लोक गीत, लोक कथायें, भौउंरू, लामण इत्यादि सम्मिलित हैं। इस साहित्य पर कुल्लू गर्व कर सकता है। इस क्षेत्र का लोक साहित्य अति स्मृद्ध है।

लोक गीत

कुल्लू लोक गीत सरल भाषा में है तथा श्रवण प्रिय हैं। ये गीत किसी विशेष समाज या वातावरण से बंधे नहीं हैं। और जीवन के हर अंग को छुते हैं। ये गीत लोक मानस से पनपते है और हर वातावरण की देन है। ये अपनी धुनों के कारण तुरन्त सर्वप्रिय हो जाते हैं। एक गाना यदि लाड़ी शाऊनी का है तो दूसरा निरमण्ड की ब्राह्मणी का है। यदि एक लूहरी ढेक पर हुई दुर्घटना का वर्णन करता है तो दूसरा गाना देवता की स्तुति का है। इन गीतों से मनोरंजन ही नहीं होता, अपितु पहाड़ी जीवन की विषमताओं को भूलने में भी सहायता मिलती है।

लामण तथा भौंऊंरू

लामण तथा भौंऊंरु घर से दूर पर्वतों और घाटियों में गाये जाते हैं। लामण का मुख्य विषय प्रणय है। भोंऊंरु में हास्य–व्यंग्य, आशा–निराशा, संयोग–वियोग के उदाहरण मिलते हैं। ये लम्बी टेर के साथ गाये जाते हैं। इसलिये इनके लिये खुला वातावरण चाहिए। इनकी रचना दो पक्तियों में होती है। पहली पंक्ति अर्थहीन होती है और केवल छन्द बनाने का कार्य करती है। दूसरी पंक्ति में वास्तविक संदेश होता है। यह प्रश्नोतर शैली में भी गाये जाते

है। इन्हें एक समय में एक ही व्यक्ति गाता है। एक भौंऊरु का उदाहरण नीचे दिया जाता है :

भौंऊंरू

पानी रा डिमणू, जोड़ी मनाले पानी पिऊ।
जुन झूरला म्हारे कुल्लू बे, लाख बर्षा लोड़ी जिऊ।।

लामण

सूने जूही रा झुमकू, माथे पांधे री बिन्दी।
कोना पीछे रा डोल्हरु, झूरिये मूले दैली की सिंदी।।

लामण शैली में देव स्तुति भी की जाती है। जब देवता मन्दिर से बाहर लाया जाता था तो पहले उसकी स्तुति लामण गा कर की जाती थी। अब यह प्रथा समाप्त हो गई है।

लोक गाथाऐं

लोक गाथायें वीर रस या करुणा रस लिये हुए होती हैं। लोक गाथाओं में नायक अवश्य होता है। इनमें ऊंची उड़ान रोचकता से पूर्ण होती है तथा नायक द्वारा असम्भव घटनायें घटित कराई जाती हैं। कुल्लू क्षेत्र में वृतान्त सुनाती कुछ गाथओं के नाम दिये जाते हैं :

1. सुलतान चन्द का राजा जगत सिंह से सामना तथा सिर धड़ से अलग होने पर लड़ते रहने का वृतान्त।
2. खेखर से सुआन पर चढ़ते हुये, राजा मान सिंह के बजीर अंगद का कुम्हारसैन पर आक्रमण।
3. फोजल नदी में आई बाढ़ से आई विपदा।
4. बड़ाग्रां कुहल लाने के लिये रानी का बलिदान।
5. नाहन के राजा की कुल्लू राजा को चुनौती और दयारी बजीर द्वारा उसका उतर।
6. लड़ाई के लिये जाते गढ़िया :

आगे आगे चौले मेरे गढ़िया। पीछे हेसी रा बाजा।।

लोक कथायें

इसे श्रुति साहित्य भी कहा जाता है। यह साहित्य एक पीढ़ी से दूसरी पीढ़ी तक यात्रा करता चला जाता है। इसकी कथन शैली तथा विधा जन मानस से उपजती है। इसमें मिथिक का समावेश होता चला जाता है।

इसमें कल्पना सरल, शब्द सरल तथा रोचक होते है। कई पहले गाते हैं और फिर उस कथा को सुनाते हैं। जिससे रोचकता बढ़ जाती है। मुझे लेअकल राजा और अकलू वजीर की ऐसी कथा सुनने का अवसर बाहरी सिराज में मिला। कुल्लू की कथाओं में राक्षस कथाओं का बाहुल्य है। जिनमें राक्षस अति शक्तिशाली होता है। परन्तु मानव अपनी बुद्धि से उस पर हर बार विजय प्राप्त कर लेता है। परी कथाओं, देवता की कथायें, राजकुमार की कथायें, निर्वाह के लिये शर्ते पूरी करता हुआ राजकुमार की कथायें भी कही तथा सुनी जाती हैं। कुछ कथायें स्थानीय ठाकुर राणों की स्मृति भी बनाये हुये हैं। जैसे भोसल राणा की मूर्खता की कथायें। जैसे "12 पैठै, 18 डाहणी—भोसल राजे सार न जाणी।"

नवीन प्रयास

शिक्षा के प्रसार से जन मानस में साहित्यक चेतना आई है। सरकार की ओर से साहित्यिक गति विधियों को बढ़ावा देने के लिये कुल्लू में भाषा एवं संस्कृति विभाग का कार्यालय है। जो समय समय पर कवि सम्मेलन और साहित्यक गोषठियां करवाता रहता है। साहित्य एवं कला परिषद का गठन भी हुआ है। इस प्रकार नये लेखकों को प्रोत्साहन मिला हे। हिन्दी और पहाड़ी में कई पुस्तकें छप कर बाजार में आई हैं। जो विभिन्न विषयों को छूती है। इनमें देव संस्कृति, कुल्लू संस्कृति, कुल्लू इतिहास, कहानी संग्रह, कविता संग्रह तथा कुछ खोज पूर्ण संदर्भ ग्रन्थ हैं। कुछ त्रैमासिक स्थानीय पत्रिकायें भी बाजार में उपलब्ध है जिनमें स्थानीय लेखक अपनी लेखनी से पाठकों की साहित्य में रूचि बनाये हुये हैं।

30. चित्रकला

कुल्लू चित्रकला तीन रुपों में उपलब्ध हैं :

1. राजभवन सुल्तानपुर की दीवारों पर या स्यालकोटी कागज पर बनाये गये चित्र।
2. ग्रंथों में चित्र आंकन।
3. लोक चित्र कला — परम्परागत भीति चित्र अलपणा आदि।

चित्रकला (कुल्लू कलम)

कांगड़ा शैली की तरह कुल्लू चित्र शैली भी प्रसिद्ध हुई। पहाड़ी शैली की एक उप शैली कुल्लू कलम है। कुल्लू के राजाओं को चित्रकारों को आश्रय देने का श्रय जाता है। यह कार्य राजा जगत सिंह के समय में आरम्भ हो कर कई पीढ़ियों तक चलता रहा। ये चित्र राजभवन की दीवारों पर या पृथक स्यालकोटी कागज पर बनाये गये या सचित्र ग्रंथों में चित्रित किये गये। 17वीं शताब्दी के अन्तिम चरण में मुगल साम्राज्य के कुछ चित्रकार कुल्लू पंहुचे। इनमें प्रसिद्ध चित्रकार भगवान भी था।

कुल्लू शैली के चित्र कांगड़ा चम्बा तथा बसौली कलम से प्रभावित है। इनमें जड़ों, बीजों, फूल पतियों से बने रंगों का प्रयोग किया गया है। कुल्लू शैली में पशु, पक्षी, वृक्ष, बादल आदि के दृश्य प्रचूर मात्रा में दर्शाये गयें हैं। पशुओं में शेर, हिरण, हाथी, बैल तथा गाय, वृक्षों के सरु, पीपल, केला, वृक्षों से लिपटी लतायें, पक्षियों में तोता, चकोर, मैना, मोर—मोरनी, हंस के चित्रों का प्रयोग सज्जा देने के लिये किया गया है। रंगों में मुल्तानी मिट्टी, गेरू, हरमिचि, लाजर्व हरिताल, सिंगराफ, पेवड़ी, सिंदूर, सफेदा, नील, महावर तथा स्वर्ण रंग तथा मिश्रित रंगों का प्रयोग हुआ है।

कांगड़ा का राजा घमण्ड चन्द, राजा टेढ़ी सिंह का समयकालीन था। उसने कुल्लू पर आक्रमण किया था। उसके पश्चात कांगड़ा के चित्रकार कुल्लू आने लगे। इनमें चित्रकार सज्जनूं कुल्लू आया था। लालू राम नादौन (हमीरपुर) निवासी ऐसा कारीगर था जो भवन निर्माण के साथ चित्रकारी भी जानता था। रघुनाथ मन्दिर का उसने निर्माण किया और बाहर की ओर देवताओं के ठहरने के स्थान पर चित्रकारी की हुई थी। इस चित्रकारी के कारण इस स्थान का नाम ही चित्रकारी पड़ गया था। सुरक्षा के अभाव में ये चित्रकारी बाद में उखड़ गई। अब वहां अन्य भवन निर्मित हो गये हैं। सुखराम तथा हरदयाल मिस्त्री भी नादौन से ही थे जो 1905 ई. में राजभवन में हुई टूटफूट की मुरम्मत तथा चित्रों को पुनरोद्धार करते रहे।

मियाँ गवर्धन सिंह ने अपनी पुस्तक "हिमाचल प्रदेश की कला तथा वस्तुकला" नामक पुस्तक के पृष्ठ 85 में सी. फ्रेंच तथा डब्ल्यू. जी. आर्चर के सन्दर्भ से कुछ चित्रों का वर्णन किया है जो कुल्लू कलम के हैं :

1. देवदार वृक्ष की पृष्ठ भूमि में राधा तथा कृष्ण।
2. शतरंज खेलते हुये राजकुमार तथा राजकुमारी।
3. सांप को दूध पिलाती नारी।
4. दो मेंढों की लड़ाई देखती हुई नारी।
5. सुअर को भोजन खिलाती नारी। उसके नीचे "श्री रागनी मन्दोगरी" लिखा है। चित्र 19वीं शताब्दी का माना गया है।
6. डब्ल्यू. जी. आर्चर. ने अपनी पुस्तक "इण्डिया मिनिएचर" में एक कुल्लू कलम के चित्र का वर्णन किया है जिसमें एक युवती संगीत बजा रही है और चार हिरण मंत्र मुग्ध हो सुन रहें हैं। यह चित्र राष्ट्रीय संग्राहलय दिल्ली में है। इस चित्र पर चम्बा कलम या बसौली कलम का प्रभाव है। कुल्लू में चित्रकला राजा राज सिंह, जय सिंह तथा प्रीतम सिंह के समय विकसित हुई।
7. जे. सी. फ्रेंच ने "हिमालयन आर्ट" 1931 ई. में राजा शांगरी के पास 270 रामायण चित्रों के संग्रह का वर्णन किया है। ये चित्र अयोध्या, बाल, अर्णय किषिकन्धा लंका, सुन्दर तथा उतर काण्डों से सम्बन्धित थे। ये सभी चित्र एक कलाकार की कृतियां प्रतीत नहीं होती हैं क्योंकि इनके चित्र में भिन्नता है। ऐसा प्रतीत होता है कि बहुत से चित्रकार इनके लिये इकट्ठे कार्य करते रहे। इनका चित्रण राजा जगत सिंह तथा विधि सिंह के समय किया गया।एम. एस. रन्धावा के अनुसार इनके बनाने वाले कश्मीरी ब्राह्मण थे। इन चित्रों पर चम्बा तथा बसौली कलम का प्रभाव है सम्भवतः यही रामायण चित्र संग्रह "शांगरी रामायण" के नाम से जाना जाता हैं। इसके 23 पृष्ठ है। राजा रघुवीर सिंह ने इसे 1970 ई. में राष्ट्रीय संग्राहलय दिल्ली को बेच दिया था।
8. राजमहल में कुछ राजाओं के चित्र भी बने थे। जिन्हें मण्डी कलम के कलाकार नरोतम ने बनाया था। परन्तु 1963 ई. में इन चित्रों को आग से क्षति पंहुची। विक्रम सिंह का भीती चित्र अभी घोड़े पर विद्यमान।

राजभवन की दीवारों पर भी कुछ चित्र बने हैं जिनका वर्णन इस प्रकार है:

1. राम रावण युद्ध 2. गौएं चराता कृष्ण,
3. मत्स्यावतार (विष्णु) 4. दूध देती हुई कामधेनु गाय 5. राम विवाह

अन्य दीवारों के चित्र :

1. त्रिपुरा सुन्दरी का स्वर्ग (मणीद्वीप भवन में) यह सजनूं ने बनाया था।
2. पंच मुखी शिव की गोदी में बैठी पार्वती।

साधू ध्यान तथा पूजा करते हुये।

3. लक्ष्मी तथा सरस्वती अपने वाहनों पर बैठी हुई। जनसमूह उनके

4. दर्शन करते हुए।

ये चित्र सफेद प्लास्टर पर बने हुये हैं। सोने तथा रांगे के रंग प्रयोग किये हैं। रंग का मेल आकर्षक है।

सचित्र ग्रंथ

ग्रंथों का चित्रण कथानक को रुचिकर बनाने का धार्मिक भावना से प्रेरित होकर किया जाता था। सब से पहले विषय वस्तु या कथानक लिखी जाती थी। कथानक पर आधारित चित्र सबसे अन्त में चित्रित किये जाते थे। जिनके लिये स्थान छोड़ा जाता था।यह कई लोगों के सहयोग से बनते थे। लिखने वाला और लिखाने वाला पृथक–पृथक व्यक्ति होते थे। चित्र बाद में कलाकार पृष्ठ के कथानक के अनुसार बनाया करता था।

कुल्लू कलम के चित्रों से सचित्र ग्रन्थ नीचे दिये जाते हैं :

1. सुन्दर श्रृंगार

इसमें 64 श्रृंगारिक चित्र हैं। आकार 10 गुना 15 सें. मी. है। यह 1788 ई. में स्यालकोटी कागज में चित्रित किया गया है। इसमें आकृतियां कुल्लू लघु चित्रों के निकट हैं। इस समय यह ग्रंथ चण्डीगढ़ संग्राहलय की सम्पति है।

2. मधुमालती

यह ग्रंथ बहुत ही प्रसिद्ध हुआ। इसकी कई प्रतियां बनाई गई। इसमें श्रृंगार चित्र हैं क्योंकि मधुमालती एक प्रेम कथा है। इसकी एक प्रति लतीफी संगाहलय बम्बई, दूसरी जगदीश मितल हैदराबाद, तीसरे वोस्टन संग्राहलय अमेरिका में है। परन्तु एक प्रति स्थानीय व्यक्ति के पास उपलब्ध है। यह ग्रंथ 1794 ई. में चित्रित किया गया। इसे भगवान दास ने चित्रित किया है। काव्य कवि मंझन का है। काव्य के लिपिकार चतुर्भुज दास है। कुल चित्र 58 है। 34 बड़े तथा 24 छोटे चित्र हैं।

भागवत पुराण

यह राष्ट्रीय संग्राहलय नई दिल्ली में सुरक्षित है। यह ग्रंथ 1799 ई. में चित्रित हुआ। इस ग्रंथ के चित्रों में स्थानीय वेशभूषा का प्रयोग किया गया है। नारी लम्बी देह वाली हैं। जिन्होंने चोलियां पहनी हैं। वस्त्रों का अलंकरण है। ओढ़नी उलटे पल्लू की भान्ति पहनाई गई है। कुल्लू की स्त्रियां पहले

चोलियां ही पहनती थी। चटख हरे, लाल, पीले, हरमिचि रंगों का प्रयोग किया गया है। कई चित्रों में वृक्षों की अधिकता तथा अन्य आकृतियां कम हैं। लचीले तथा पतले बनाये गये हैं। इसे भी भगवान दास ने चित्रित किया।

अन्य चित्रित ग्रंथ

इनके अतिरिक्त दुर्गा सप्तशती, कृष्णलीला तथा रास पंचाध्यायी सचित्र ग्रंथ कुल्लू कलम के हैं। जो राष्ट्रीय संग्राहलय में उपलब्ध हैं।

सुन्दर श्रृंगार, भागवत पुराण, मधुमालती तथा रास पंचाध्यायी को शाहजहां के दरबार के चित्रकार भगवान ने चित्रित किया है। चित्रकार कुछ समय के लिये कुल्लू आया था।

चित्राकार भगवान के अन्य चित्रा

नायका भेद रुप, राम सीता विवाह, रुकमणी हरण तथा राजा विक्रम सिंह का चित्र। घोड़े पर बैठा चोबदार, घड़ीदार, झण्डेवाला और गायकों का दल, कृष्ण राधा की चोटी गूंथता हुआ।

लोक चित्रकला

अधिकतर यह चित्र कली, कच्चे मकानों में ही मिलती हैं जहां उत्सवों, पर्वों तथा मेलों के समय द्वार सज्जा के लिये भिन्न–भिन्न आकृतियां बनाई जाती हैं। गोबर तथा चिकनी मिट्टी से पहले लिपाई की जाती है। उस पर देवदार के फूलों के पराग/ चीड़ वृक्ष के फूलों के पराग (जो पीला होता है) या सफेद मिट्टी या लाल मिटटी का बहुलता से प्रयोग किया जाता है। द्वार पर पाशर्व रेखा बनाकर भिन्न–भिन्न आकृतियां सूर्य, चांद तारे, पशुपक्षी, पालकी पहिये, पांव बिंदियां, त्रिकोण, वर्ग, बेलबूटे, फूल मानव आदि बनाये जाते हैं। धार्मिक भावना के ऊपरी भाग के मध्य 'ऊँ' या स्वास्तिक के चिन्ह भी पाये जाते हैं। मंगल कार्यों में आंगन या घर के भीतर फर्श पर अल्पणा डाला जाता है। इसे 'देऊ थला' भी कहा जाता है। अल्पणा कच्चे पक्के दोनों प्रकार के घरों में डाला जाता है। पहले गोबर की लिपाई की जाती है। सूखने पर श्वेत मिट्टी या आटे के प्रयोग से इसे बनाते हैं। यह चकोर या गोलाकार होता है। प्रायः तीन–तीन रेखाओं को एक साथ खींचा जाता हैं। अल्पणा पर पूजा भी की जाती है।

31. जन समुदाय

मूल निवासी

कोली तथा कनैत कुल्लू के मूल निवासी माने जाते हैं। कोली कोल जाति से सम्बन्धित हैं। ऋग्वेदिक काल के राजा शाम्बर जिसे कोलितर भी कहा जाता था, से भी कोली जाति को जोड़ा जाता है। हाली, डूम, डागी, मेघ, नौड़, चनाल आदि जातियां कोली जाति की श्रेणीं में आती हैं। इस समय भी संख्या की दृष्टि से कोली कुल्लू की जनसंख्या का 30 प्रतिशत भाग हैं।

कनैतों ने कोलियों पर विजय पाई और कुल्लू क्षेत्र को कनैत प्रदेश में बदला। आज भी निरमण्ड में बूढ़ी दिवाली उत्सव मे, खशों और कोलियों में मशालों के साथ संघर्ष होता है जो मूल संघर्ष की पुनरावृति करता है। कनैत कुलिंदों के वंशज है। कुल्लू के कनैत आगे जाकर दो भागों में बंटे जो 'राहु' तथा 'खश' कहलाये। राहु वर्ग केवल कृष्क कार्य निभाता था। इसे राजतन्त्र में अधिक भाग न मिला। इसलिये इनके बारे अधिक सुनने को नहीं मिलता है। कुछ विद्वानों ने खशों को आर्यों की पूर्व शाखा माना है। जो उपनयन कर्मों के लोप होने या अध्ययन के लिये उचित आचार्य न मिलने से क्षुद्रत्व को प्राप्त हुये। डाक्टर डावराल ने उतराखण्ड के इतिहास में लिखा है कि कुल्लू तथा सिराज के राजपूत कनैत प्राचीन कुलिन्द जाति के वंशज हैं। कुल्लू गेजिटियर 1883–85 के अनुसार कनैत आदिम जाति है, जो अपने को राजपूत से सम्बन्धित करते हैं। इनकी विवाहिक परम्परायें, धार्मिक संस्कारों का अभाव, आजीवन के साधन, पशु पालन, तथा खेती बाड़ी, काठ तथा पत्थरों के बर्तनों का प्रयोग मापतोल का पैमाना पत्थर, सभी प्रमाण इनके खश होने की पुष्टि करते हैं। जैम्ज लायल के अनुसार कुल्लू के राजा ने कनैतों को आचार–विचार सुधारने के लिये कहा। यह भूभाग उनका मूल स्थान रहा और यहां इनका विकास हुआ। खश बाद में कामगार, कृषक, मजदूर और सिपाही के पर्यायवाची माने जाने लगे। 1950 ई. के पश्चात कुल्लू के कनैत ठाकुर माने गये तथा सरकारी रिकॉर्ड में भी इन्हें ठाकुर लिखा गया।

अन्य निवासी

अन्य दो महत्वशाली वर्ग राजपूत तथा ब्राह्मण हैं। राजपूतों में ठाकुर और राणा थे। परन्तु अब खश तथा राहु भी अपने को राणा तथा ठाकुर लिखते हैं। राजपूत विजेता या भगौड़ा के रुप में इस क्षेत्र में आये क्योंकि यह मैदानों की उथल पुथल की तुलना में सुरक्षित स्थान था।

जन्म तथा मृत्यु परिवार में होने पर शुद्धि संस्कार आवश्यक है। उस समय तक परिवार से मिलना वर्जित है। उसे 'जूठ' कहा जाता है। सभी सदस्यों को नहाना या कपड़े धोने पड़ते हैं। सम्भवत: जन्म के समय बच्चे तथा माँ को संक्रामक रोग से बचाने के लिये तथा मृत्यु के समय रोग संक्रमण से बचने के लिये यह नियम बनाया गया होगा। कहीं—कहीं शुद्धि के लिये बकरा काटा जाता है। प्रसूता स्त्री को घर की नीचली मंजिल में रखा जाता है सम्भवत: सर्दी से बचाव के लिये यह सामाजिक नियम बना दिया गया है मुर्दों को जलाते हैं। रोग, मुण्डन, संस्कार, नये घर बनाने पर भी बकरे की बलि दी जाती है। खुशी के मौके पर नाचते हैं। रीति रिवाजों में दृढ़ता है।

उत्सव

लोग मेलों और फूलों के शौकीन हैं। नाच तथा गानों में विशेष रुचि है। धार्मिक अनुष्ठानों का अभाव है। यहां के जन मानस ने अपनी संस्कृति बचाये रखी है। प्रत्येक संक्राति एक पारिवारिक उत्सव होता है। जिसे साजा कहा जाता है। शौरी (सायर) साजा तथा माघी साजा बहुत महत्वपूर्ण त्यौहार है। इन त्योंहारों पर उपहारों का आदान—प्रदान, आतिथ्य करना तथा कुशा तथा फूल प्रस्तुत कर बड़ों से आर्शीवाद प्राप्त करना त्योहार के अंग हैं। इसे ज... देना कहते हैं। बाहरी सिराज में शिवरात्री सबसे बड़ा उत्सव है। एक मास तक भक्ति गीत गाये जाते हैं और नाचते हैं। रात्री को यह कार्यक्रम बारी—बारी से में किया जाता है। शिवरात्री के दिन रोटी के उपहार का आदान—प्रदान किया जाता है। बकरे काटे जाते तथा मांस परोसा जाता है।

व्यवसाय

कुल्लू के लोगों का प्रमुख व्यवसाय खेती बाड़ी, बागवानी तथा पशुपालन है। खेती के कार्यों में स्त्रियों की प्रमुख भूमिका होती है। इसके अतिरिक्त जंगल में काम करना, जड़ी—बूटियों को निकालना, मधुमक्खी पालना, शाल, दुशाले तथा उसका बार्डर बुनना आदि व्यवसाय है। जंगल कटाई तथा ढुलाई के लिये कुल्लू के लोग जम्मू कशमीर, सिक्किम, भू... आदि दूरस्थ स्थानों को भी जाते हैं। 1935 ई. तक 800 कदम तक पीठ पर लकड़ी स्लीपर ले जाने पर एक टका दिया जाता था। कुल्लू शाल तथा टोपियां बनाना एक लघु उद्योग का रुप धारण कर चुका है। और यह अ... रोजगार का साधन बन गया है। किसान परिवारों के लिये फूलदार बार्डर के शाल बुनना आर्थिक स्थिति सुधारने में सहायक सिद्ध हुआ है। सिराज क्षेत्र

भांग के पौधे के छिलके की रस्सी से बनाई गई पूलें (जूती) की भी अच्छी मांग है।

शाल बनाना 1960 ई. के दशक से तेजी से कुटीर उद्योग के रुप में विकसित हुआ है। इस उद्योग के विकास के लिये भुट्ठी वीवर्ज संस्था का भी बड़ा योगदान है जिसने अपने उत्पादन का बढ़िया स्तर बनाये रखा। और साधारण जनता को कुल्लू शाल उपलब्ध करने के लिये कई केन्द्र खोले। कुछ लुधियाना से आयात किया माल भी कुल्लू शाल के नाम से बिक रहा है। परन्तु कुल्लू शाल ने अपनी पहचान तथा स्तर बनाये रखा है। पहली खड्डी निजी क्षेत्र में 1918 के लगभग श्री स्वामीदयाल ने कुल्लू में लगाई थी तथा यह शाल बुनाई व्यवसाय आरम्भ किया था।

पर्यटन के विकास के साथ होटलों का निर्माण होता जा रहा है। कई अतिथि गृह भी धड़ाधड़ खुल रहे है और होटल का कार्य एक उद्योग का रुप धारण कर चुका है। सरकार से भी प्रोत्साहन मिलने पर हजारों लोग इस व्यवसाय से जुड़ गये हैं।

वेशभूषा

लोग सादा, अच्छे नयन नक्श वाले तथा दरम्याना कद के हैं। कुल्लू की ऋतु ठंडी है इसलिये सारा बर्ष ऊनी कपड़े पहने जाते है।वर्तमान में पुरुषों का अन्य स्थानों के लिवास में कोई अन्तर नहीं परन्तु धोती का प्रयोग धार्मिक अनुष्ठानों में ही किया जाता है। पुराना पुरुषों का लिवास चोला, टोपा तथा सुथन था। कमर के चारों ओर डोरी (गाची) बांधी जाती थी। तह किया हुआ पट्टू "लाछु" कन्धे पर डालते थे। "खूंटला" बकरी के बालों को कोट भी प्रयोग किया जाता है।

स्त्रियां साड़ी आदि का प्रयोग नहीं करतीं। अपने वस्त्रों के उपर स्त्रियां पट्टू लगाती है। विशेष अवसरों पर फूल वाले पट्टू लगाये जाते हैं बाहरी सिराज में स्त्रियां वास्कट अवश्य पहनती है। सिर के आवरण 'दाठू' या 'थिपू' है। यह चौकोर रुमाल होता है। बाहरी सिराज में ब्राह्मण स्त्रियां लाल या पीले रंग का दाठू प्रयोग करती हैं। जिसमें सूहाग चिन्ह 'वुंगा' भी होता है। शेष जातियां काला दाठू लगाती हैं। जिसे थिपू कहते हैं विशेष अवसरों पर चोलू का प्रयोग किया जाता हैं। इसे कई स्थानों में झोगा भी कहते है। चोलू में चुनट भी डाले जाते थे तथा बाजू तंग होते थे। कई स्थानों पर थिपु के स्थान पर टोपी की तरह 'घुघली' भी स्त्रियों के लिये आवरण है। स्त्रियां टांगों का आवरण 'पाहुंचे' का प्रयोग पहले करती थीं। अब यह आवरण प्रयोग में नहीं लाया जाता है। पांव में अमीर जूते पहनते थे और निर्धन घास की पूलें लगाते

थे। पूलें आधे पांव की 'मैदू' तथा जाड़ू पूरे पांव की होती थी। बर्फ पर चलने के लिये रुचे होते थे जो बकरी के बालों से तैयारी किया जाता है। पुरुष तथा स्त्रियां दोनों चुड़ीदार पजामा प्रयोग में लाते हैं। राजा रेशमी, दरवारी सूती, साधारण व्यक्ति ऊनी कपड़े लगाते थे। दरवारी पगड़ी भी पहनते थे। नेगी चोगा प्रयोग करता था।

आभूषण

पुरुष तथा स्त्रियां दोनों ही गहने पहनते थे, पुरुष नृत्य के समय अब भी गहने पहन लेते हैं। कानों में मुरकी, बाले, उंगली में अंगूठी तथा बाजू में खानागुनू, सिर में टोपी पर तोड़ा, गले में कण्ठा पहनते हैं। परन्तु अब पुरुष कान, गला तथा बाजू में आभूषण नहीं पहनते हैं। स्त्रियों के आभूषणों में बड़ी विविधता है।

नाक के आभूषण :	नथ, फूल, ब्लाक, लौंग, तिल्ली, खुंडी, बेसरु, कुमशी, बालु।
सिर के आभूषण	तुनकी, तोड़ा, चक, टीका, कांघु।
कान के आभूषण	खुण्डीं, बाली, डेढू, नावी।
गले के आभूषण	चन्द्रहार, जौमाला, सिक्कों की माला, कंठी, लाकट, चम्पाकली, डामकू, कण्ठमाला।
पांव के आभूषण	पाजेब, झांझर।
बाजू के आभूषण	टोका, कागनू, मरिटड़ी, तोड़े, बाजूबन्दी।
उंगली के आभूषण	अंगूठी, छल्ला, मुंदरी, बिच्छुआ।
अन्य	पट्टू के लिये बूमणी।

स्वभाव

लोग शान्त स्वभाव के हैं। काम के समय परिश्रम करते हैं। खाली समय में आनन्द मनाते हैं। ह्यून्सांग ने अपनी पुस्तक सी. यू. की. में तथा शाहशूजा काबूल के अमीर में अपनी डायरी में लिखा है कि कुल्लू के लोग अच्छे स्वभाव के नहीं। कठोर तथा अखड़ हैं। काबूल का शाह अपनी जान बचाते फिर रहा था। उसे राजा कुल्लू ने अंग्रेजों तक पंहुचाने में सहायता दी जिसके लिये 80000 रुपये जुर्माना रंजीत सिंह द्वारा किया गया। सामान्य व्यक्ति यदि उससे दूर रहा होगा तो कारण समझा जा सकता है।

ह्यूनसांग के अनुभव राह चलते यात्री के थे। अज्ञात कुलशील को और देना कुल्लू वालों के स्वभाव के विरुद्ध है। ये दोनों अन्य धर्मों से थे। ग्राम देवता परम्परा ऐसे लोगों से मेल जोल बढ़ाने की आज्ञा नहीं देता। आई. सी. हरसकिन अधीक्षक हिल स्टेट्स ने 1846 ई. में भी अपनी रिपोर्ट में कुल्लू निवासियों को खुंखार तथा बदला लेने वाले लिखा है। अंग्रेजों ने सिखों से हुये टकराव के आधार पर ऐसा लिखा था। अन्यथा कुल्लू के लोग मिलनसार हैं तथा स्वभाव से कठोर नहीं। अतिथि सत्कार में मान समझते हैं। ग्राम मेलों में अनजान व्यक्ति की आव भगत करने में भी पीछे नहीं रहते।

बालों का संवारना

बालों के संवारने के कई तरीके थे। पुरुष पुराने समय में कान तक बाल रखते थे परन्तु सिर के मध्य भाग उस्तरे से साफ करते थे। जिसे झांवड़ी कहा जाता था। राजपूत मूंछे अवश्य रखते थे। स्त्रियां बालों को छोटी–छोटी लटें गूंथ कर इकट्ठा कर सात फुट का डोरा (परांदा) जिसे जुटू कहते हैं प्रयोग करती थीं। फिर सिर पर उसे इकट्ठा कर थिपू लगाया जाता था। उस पर चांदी या सोने की झांझर भी सजाई जाती थी। डोरा बाहर से लपेटा जाता था। अब पुरुष तथा स्त्री बालों को साधारण तरीके से संवारते हैं। यदि पुरुष सिर के सारे बाल काटे तो शिखा अवश्य रखते हैं। मृत्यु पर पुरुषों के सिर के बाल काटने का रिवाज है। घर के परिवार में या सगा रिशतेदार के मरने पर बाल उस्तरे से साफ किये जाते हैं और अन्य दूर के रिश्तेदार के मरने पर कैंची से बाल काटे जाते हैं जिससे अपने सगे होने या दूर के होने की पहचान हो जाती है।

32. धर्म

यहां धरती पूजा तथा प्राकृतिक पूजा के साथ–साथ भिन्न–भिन्न देवताओं को, ऋषि मुनियों, वीरनाथ, नागों, जोगनियों, अप्सराओं को पूजा जाता है। ये सभी ग्राम देवता के रुप में पूजे जाते हैं। कई स्थानीय देवता भी ग्राम देवता है। जैसे जरी का अग्नपाल जिसने राणा के आतंक से लोगों को मुक्ति दिलाई थी स्थानीय लोगों की श्रद्धा का पात्र बना और पूजा जाने लगा। कुल्लू निवासियों में धार्मिक कट्टरता नहीं। एक देवता को पूजने वाला दुसरे ग्राम देवता को पूरा सम्मान और आदर देगा। दूसरे धर्मों और सम्प्रदायों के प्रति भी धार्मिक सहिष्णुता है। यह देव पूजा पौराणिक धर्म से प्रभावित है।

पूज्य देवता

ग्राम देवता के रुप में पूजे जाने वाले ऋषि हैं : मनु, व्यास, वशिष्ठ, लोमष, श्रृंग, कपिल, मार्कण्डेय, परशुराम, नारद आदि। देवताओं में शिव का प्रमुख स्थान है जिसे महादेव या महादेऊ कहा जाता है। जैसे जुआणी महादेव, बिजली महादेव, जगेशवर महादेव, शमशर महादेव आदि। कई मन्दिरों में लिंग, कुछ में मूर्तियां तथा कुछ स्थानों में केवल मोहरे हैं। ब्रहमा तथा विष्णु भी ग्राम देवता है। आदि ब्रमहा का मन्दिर खोखन में है। गौहरी देवता या वीरनाथ भी अपनी भार्ता में अपने को ब्रंह्मा कहते हैं। कुछ इनको वीरनाथ के कारण नाथ पंथ से जोड़ते हैं। वैष्णव मत में मांस तथा शराब वर्जित है। परन्तु कुल्लू के विष्णु उपासकों को कोई ऐसा प्रतिबन्ध नहीं है। कुल्लू जिला में कई नागों के स्थान हैं। हलाण में वासुकी नाग का स्थान प्रमुख माना जाता है। नाग यहां सर्प ही नहीं आलौकिक शक्ति के देव भी हैं।

शिव के उपासकों के पश्चात् शक्ति उपासकों का स्थान है। अधिकतर देवियां दुर्गा रुप हैं। कई स्थानों में पार्वती ही दुर्गा है। हडिम्बा को भी दुर्गा रुप में ही पूजा जाता है। यह ग्राम देवी ही नही राज परिवार की कुल देवी भी है। दुर्गा के साथ जोगनियों की पूजा भी की जाती है। जोगनियों देवताओं की प्रेयसी, बहिने तथा सम्बन्धी हैं। कई घरों की छतों पर जोगनियों के स्थान बनाये गये हैं। ये जोगनियां विघ्न बाधायें करने वाली मानी जाती हैं।

कुल्लू में सूर्य पूजा भी प्रचलित है। बजौरा में सूर्य प्रतिमायें मिलीं हैं। इन ग्राम देवी देवताओं का पूजा विधि–विधान अपना है जो शास्त्रों की पूजा विधि से भिन्न है। सब मन्दिरों में बलि का विधान है कुछ बलियां सीधे देवता को दी जाती है। परन्तु जहां देवता बलि नहीं स्वीकारता वहां राक्षस, पिशाच आदि को शान्त करने के लिये बलि दी जाती है।

ग्राम देवता से जुड़ा जन जीवन

ग्राम देवता मेलों के समय रथों पर सवार होकर जाते हैं लोग इन्हें नचाते

है मनौती करते हैं और मनौती पूर्ण होने पर उसे आमन्त्रित करते है। देवता निमन्त्रण स्वीकार कर उपासक के घर अपने श्रद्धालुओं, गूर, पुजारी आदि के साथ जाता है देवता तीर्थ यात्रा के लिये भी जाता है और स्नान करता हैं। लोग सुख दुःख में देवता की शरण में जाते है। बर्षा लाने, बर्षा रोकने, रोग से मुक्ति आदि के लिये उससे प्रार्थना करते हैं। भविष्य के भय से अपने उपासकों को सचेत करता है तथा रक्षा करने का वचन देता है। देवता क्रुद्ध भी होता है। अपने को झंझोड़ कर क्रोध प्रकट करता है। क्रुद्ध होने पर प्राकृतिक प्रकोप भी लाता है। उसे शान्त भी करता है। उसे शान्त करने के लिये उससे क्षमा मांगते हैं तथा दण्ड रुप में कुछ देते हैं। देवता प्रश्न सुनता है और उतर देता है। देवता की आत्मा गूर में प्रवेश करती है। जिससे कम्पन उत्पन्न होता है और वह देवता की ओर से उत्तर देता है। मुसीबत से बचने के लिये प्रार्थना करते हैं। सहायता मांगते हैं। भूल पर क्षमा याचना करते हैं। मार्ग दर्शन लेते हैं। सुरक्षा के लिये आर्शीवाद मांगते हैं। अच्छी खेती के लिये भी उससे प्रार्थना करते है। फसल आने पर उसे रोट चढ़ाया जाता है। शौरी या सायरी साजा वास्तव में फसल पूजा का त्यौहार है। देवताओं में स्थान तथा मान के लिये संघर्ष भी होता है। जिससे उनके दर्जे का पता चलता है। बालूनाग जो लक्ष्मण का अवतार है और श्रृंग ऋषि का दो बार दशहरा पर रथ के पास स्थान के लिये संघर्ष हुआ। परन्तु निर्णय न हुआ। देवता मन्दिर में मोहरा नहीं होता और पूजा अर्चना भी प्रतिदिन नहीं होती। मोहरे पुजारी के घर या देवता के भण्डार में होते हैं। भण्डार मन्दिर से पृथक होते है। रथ विशेष समय पर ही सजाया जाता है। बाजा मंगला चरण देवता के जगाने के लिये होता है। देवता के भाई बहिन तथा पत्नियां होती है। गूर देवता का लौकिक माध्यम है। भोग के लिये हलवा, रोट, पूरी आदि भी प्रचलित है। संगम स्नान, तीर्थ स्नान बड़ा उतम माना जाता है। कई बार सारा गांव ग्राम देवता के साथ ऐसा यात्राओं को जाता है। शिखर पार करने पर पुष्प, द्रुव या धन शिखर पर रखते हैं। जलते घरों की अग्नि शान्त करने के लिये बलि चढ़ाना तथा रोटी खाने से पूर्व अग्नि को भेंट देने का भी विधान है।

अन्य धर्मों के अनुयायी

कुल्लू में अन्य धर्मों के अनुयायी भी हैं। कुल्लू शहर में सनातन धर्म सभा, आर्य समाज और गुरुद्वारा है। गुरुद्वारा मनाली गदाऊरी भून्तर तथा मणीकर्ण में भी है। बौद्धो के गोम्फा मनाली में है। कुछ समय पूर्व राधा स्वामी, निरंकारी तथा आनन्दपुर (मध्यप्रदेश) गुरुओं के स्थान पर कुल्लू में अस्तित्व में आये है। मुसलमानों की मस्जिद तथा ईसाईयों का गिरिजा भी कुल्लू में हैं।

33. भाषा

कुलूई या कुल्लवी

कुल्लू जिला की बोली कुलूई या कुलवी नाम से जानी जाती है। यह लगभग तीन लाख लोगों की बोली है। कुल्लू के 25 प्रतिशत लोग इस बोली को बोलते हैं। इस बोली का क्षेत्र उतर में लाहुल से उतर पश्चिम में कांगड़ा, पशिचम में मण्डी से, दक्षिण में शिमला तथा पूर्व में स्पिति से घिरा है। इस बोली का क्षेत्र 5455 वर्ग कि. मी. में फैला है। कुलूई एक समृद्ध बोली है। जिसमें शाब्दिक व्यापकता है। यह सरल भाषा है। थोड़े ही प्रयास से इसे सीखा और बोला जा सकता है। इसमें तत्सम तथा तद्भव दोनों शब्द हैं। परन्तु तद्भव शब्दों का बाहुल्य है। इसमें लिंग भेद के साथ प्रत्यय भेद नहीं होता। इस बोली में 'व' को 'च' तथा 'ल' को भिन्नता से बोलने के प्रचलन है तथा 'अ' को 'औ' में बदलने की प्रवृति है। जैसे 'घौरा बे चौलू' अर्थात घर को चला। इसके अतिरिक्त भाषा के रुप में विकसित होने के प्रमाण नहीं मिलते परन्तु बोल चाल की भाषा के रुप में भली प्रकार विकसित है। इसकी वाक्य व्यवस्था हिन्दी भाषा के अनुसार है।

कुलूई बोली के वैज्ञानिक तथा तुलनात्मक अध्ययन कुछ विद्वानों ने किया है।उसके अनुसार कुलूई में पहाड़ी भाषाओं के सभी गुण विद्यमान है। 'लिंग्विस्टिक सर्वे ऑफ इण्डिया' में डा. ग्रीयसन तथा पहाड़ी भाषा में मौलू राम ठाकुर ने मडियाली, कांगड़ी तथा चम्बयाली का भी मूलाधार कुलूई को माना है।यह बोली जिला कुल्लू के अतिरिक्त भंगाल के क्षेत्र कोट–श्वाड़ तथा मण्डी के सीमान्त क्षेत्रों में भी बोली जाती है।डा. ग्रीयसन ने कुलूई की तीन उन बोलियां– बाह्य सिराजी, भीतरी सिराजी तथा सैंजी माना है।परन्तु मौलूराम ठाकुर केवल दो उप बोलियां मानते हैं।सैंजी में उन्हें अलग उप बोली होने के गुण नहीं मिले।उनके अनुसार सैंजी भीतरी सिराजी का अभिन्न रुप है और भीतरी सिराजी और सैंजी में कोई अन्तर नहीं।महासु क्षेत्र तथा बाह्य सिराज की बोलियों में भी निकटता मिलती है। जैसे दोनों क्षेत्र के पहरावे में निकटता है।सीमान्त क्षेत्र में ऐसा प्रभाव अनिवार्य रुप से स्वत: ही हो जाता है।

कुल्लवी पर अन्य भाषाओं का प्रभाव

श्री मौलू राम ठाकुर ने कुलूई में मुण्डा भाषा का प्रभाव भी पाया। कुछ विद्वान किराती भाषा के सम्मिश्रण तथा अपभ्रंश से इस भाषा का उद्भव मानते हैं। यह भाषा संस्कृत निष्ट भी है। कुल्लू के लोगों को अपनी बोली में पीढ़ी दर पीढ़ी संस्कृत के शब्द विरासत में मिले हैं। परन्तु अधिकतर ये

संस्कृत शब्द तद्‌भव रुप ग्रहण कर गये हैं। कुछ शब्द अभी भी मूल रुप से बोले जा रहें हैं जिनका उदाहरण नीचे दिया गया है।

कुछ शब्द भोटिया तथा कुछ संस्कृत के अपभ्रंश शब्द है। मलाणा क्षेत्र की बोली भिन्न हैं। भाषा शास्त्रियों ने इसे कनाशी माना है। इसमें 50 प्रतिशत शब्द किराती भाषा के हैं। तथा मलाणा के अतिरिक्त कुल्लू में कई अन्य छोटी बड़ी घाटियां हैं। वहां के भिन्न सामाजिक तथा क्षेत्रीय परिवेश के कारण शब्दाबली, शब्दोच्चारण, बलाघात, स्वराघात में थोड़ा–थोड़ा परिवर्तन आ जाता है। यह परिवर्तन स्वाभाविक है।

कुलूई को वर्तमान रुप में पहुंचने के लिये एक लम्बी यात्रा पार करनी पड़ी। मूल निवासियों का विदेशियों या अन्य राजाओं से सम्पर्क से भाषा पर प्रभाव पड़ता गया। समय के साथ इसमें फारसी, अरबी, अंग्रेजी, मराठी, गुजराती, पंजाबी, गढ़वाली आदि भाषाओं के शब्द जुड़ गये हैं। इनमें से कुछ के उदांहरण नीचे दिये गये है।इन शब्दों को कुलूई ने अपनी विशिष्ट ध्वन्यात्मक परिवर्तन के साथ इस प्रकार आत्मसात कर लिया है कि इन्हें विदेशी शब्द नहीं कहा जा सकता।

संस्कृत शब्द (मूल रुप में)	:	अन्न, ऋषि, आत्मा आदर, श्लाघा, काया, काल, त्राण, द्रोह, मंत्र, दुष्ट, संगी, दोष, शूल, शिला इत्यादि।
संस्कृत शब्द (तद्‌भव रुप)		उपविश–वैश, यत्न–जतन, श्वेत–शैता, धर्ती–धौरती, ज्येष्ठ–जेठा, ग्राम–ग्रां, अमृत–अमरत।
फारसी		गाजिया–ग़ाज़ी, गरीबी, साफी, कारदार, खानदान इत्यादि।
अरबी		रिज़क, जबर, असल, उज़र, कसूर, मियाद, जब्त, इंतकाल इत्यादि।
तुर्की	:	दरोगा, मचलका, काबू इत्यादि।
संथाऌी	:	बातर, जिया इत्यादि।
किराती	:	बेटड़ी, सुथन, मुथू, फेटे, खाख, झूरी, छेका, रेटू, खशरा, टिपू (बूंद)
पंजाबी		नेड़े, औखा, मंजा, दिहाड़ा, डुघा इत्यादि।
गढ़वाली		पराल, गोरु, पाला इत्यादि।
भोजपुरी	:	जोई, ढबूआ, भूंई, मुण्ड इत्यादि।

कुलूई में अ को औ में बदलने की प्रवृति के उदाहरण :

खाण्ड—खौंड, बकरा—बौकरा, हाथ—हौथ, दान्त—दौन्द, आग—औग, घर—घौर इत्यादि।

कुल्लवी की लिपि

कुछ विद्वान टांकरी को इसकी लिपि मानकर इसे भाषा के घेरे में लाते हैं। परन्तु टांकरी सभी पहाड़ी बोलियों की लिपि रही है। राजाओं के समय टांकरी ही राज काज में प्रयोग होती रही। सभी राज आज्ञायें, दान पात्र आदि इसी में लिखे जाते थे। राज्य के भीतर जनता भी टांकरी लिपि का प्रयोग पत्र व्यवहार के लिये करती थी। मैंने भी श्री खूब राम ठाकुर कराड़सू के पास कुछ अनूदित रचनायें तथा पत्र देखे। पत्रों में ऋणपत्र, दानपत्र, पावती पत्र, निजी पत्र, राज पत्र, नियुक्ति पत्र है। इनकी भाषा कुलवी, कांगड़ी, मण्डयाली मिश्रित है जो वर्तमान कुलवी से बिल्कूल भिन्न प्रतीत होती है। जिसके दो उदाहरण भिन्नता स्पष्ट करने के लिये नीचे दिये जाते हैं। टांकरी लिपि का प्रचलन 17वीं शताःब्दी में आरम्भ हुआ।

टांकरी शारदा लिपि से निकली है। इससे पूर्व शारदा लिपि का प्रयोग होता था। देवनागरी का प्रयोग एवं प्रचलन भी था। इसे शास्त्री लिपि के नाम से जाना जाता था। राजाओं का संरक्षण समाप्त होने पर टांकरी लिपि का प्रचलन लुप्त प्रायः हो गया है। सामान्य जनता को भी इसमें रुचि नहीं है। पहाड़ी भाषा को सरकारी प्रोत्साहन मिलने तथा शिक्षा प्रसार से कुलवी में कवितायें, कहानियों, लेख देवनागरी लिपि में लिखे जाने तथा पत्र—पत्रिकाओं में छपने लगें हैं। जिससे इस बोली की शब्द स्मृद्धि तथा विस्तार हो रहा हैं।

टांकरी के उदाहरण

1. टांकरी में लिखी महाभारत कथा के आरम्भ में लिखने वाले और लिखाने वाले का परिचय इस प्रकार दिया है।

   "श्री महा रघु नाथ पूरे अस्थाने, श्री ब्यास गंगा जी क्षेत्रे, श्री राजा श्री महाराजा जीत सिंघा जी दे वर्तमाने, महाभारत कथा, खखनाली नेगी बरागी रामे, पढ़ने वाचने कथा लखाई। सं. 100 रे सौज प्रविष्टे 5, वरुए स्थाने खिन्दू रे जातके राम रत्ने लिखी।"

2. परोहित वोधू को दिये गये पट्टे का नवीकरण 1820 ई. में किया गया जो राजा अजीत सिंह ने 1804 ई० में उसे दिया था, इस प्रकार है:—

श्री जगत सिंघे, श्री विधि सिंघे, श्रीमान राज सिंघे, श्री जय सिंघे, श्री टेढ़ी सिंघे, श्री प्रीतम सिंघे, श्री वीर विक्रम सिंघे, इथी पिछले कागदे माफक जिहा पीछे ई खांदे वरतांदे आये, तिहा खाणा वरताणा। कृसन अरपण हस्तोदक करी दिता। श्री महाराजे प्रीतम सिंघे श्री महाराज विक्रमा सिंघे, श्री महाराजे श्री अजीत सिंघे रे ऐस प्रमाण, ऐह धर्म पालना। प्रोहता बोधे रे बंस प्रमाण ऐस सासण खाणा वरताणा। घराट खोरी रोपे प्रोहिता रे घरा कछ है, से श्री कृपा करी बगसे। चौंतड़े वजीरा सोभारामा, परोली को शयाम चन्दा रुपी की लजेरामा, लगा रे वजीरा, हूकमू बीणा राम, भंगाल वजीरा गेहतू, घंमनू तथा कठास कामदारा मिसलिये आयूदि से प्रोहता रे आदमी ओर सासणा (शाशन) कुसिये खेचल काग कोत नहीं करणी। जिहा पीछे लेई प्रोहता कच्छ आदमी हुन्दे हण। पिछले कागदा प्रमाण श्री रघुनाथ जी देखी आदमी सासण दा कागद बगसेआ। अरज प्रोहते वोधूए अपे किती। कागदा रा हुकम वजीरा सोभा रामें गी आवा, ता हूकमा प्रमाण कागद लिखेया। श्री समत 1877 दे फागण प्र. 2,3 लिखेया की नथूऐ सम।

34. चिकित्सा पद्धति तथा सुविधायें

परम्परागत रोगों की मुक्ति के लिये मानव सदा प्रयास करता रहा। रोगों के लक्षण तथा कारणों को उसने समझा और उससे छुटकारा पाने के लिये उपाय करता रहा। सही उपाय आगे चलकर चिकित्सा पद्धतियों में विकसित हुये। कुल्लू क्षेत्र में उपचार के सभी ढंग अपनाये जाते थे जिनका विवरण इस प्रकार है :

परम्परागत चिकित्सा पद्धतियां :-

मनोचिकित्सा

इसके अधीन जादू–टोना, टोटका, झाड़–फूंक, "डाली फेरना", जन्तर–मन्त्र उपचार, ग्रहनिवारण, देवता का दोष या खोट तथा उसके उपाय, पाप मुक्ति के लिये छिद्रा कराना, भूत निकालना, सरसों मंत्र कर देना आदि उपाय मनो चिकित्सा पर आधारित हैं।

सीर काटना

इस चिकित्सा में सीर काटनी तथा सींगा लगाना आते हैं। सीर (नाड़ी) कान या टखने की काटी जाती है। रीह के रोग के उपचार के लिये टखने के पास सीर काटते हैं तथा खून बहने दिया जाता है। अब यह कला लुप्त होती प्रतीत हो रही है।

सींगा लगाना

सींगा लगाने में जंगली घोरड़, करथ के सींगा और तेजधार उस्तरे का प्रयोग करते हैं। सींग के उपर सिरे में एक छेद होता है और यह बीच से खोखला होता है। सींग दर्द, चोट या सोजिश वाले स्थान पर लगाया जाता है। धमनियों और मुख्य नाड़ियों पर सींगा नहीं लगाया जाता है। सींग निश्चित स्थान पर रख कर मुख से अन्दर की हवा को चूसा जाता है जिससे सींग के अन्दर मांस का उभार बन जाता है। फिर हल्के से उस्तरे पर उंगली से चोट की जाती है और दो तीन चीरे लगाये जाते हैं। बच्चों को निमोनियां होने पर डायाफ्रार्म के उपर सींगा लगाया जाता है जिससे तुरन्त लाभ मिलता है।

अस्थि विशेषज्ञ

टूटी हुई हड्डियों को जोड़ने तथा खिसकी हड्डियों को बिठाने का कार्य करते थे। टूटी हड्डियों को चारो ओर लकड़ियों की खपचियां (चपटी बारीक लकड़ी) लगाकर बांधा जाता था। हड्डी खिसकने पर सहारा देकर धीरे– धीरे या झटके से हड्डियों को बिठाया जाता था। मालिश कर हड्डियों को सीधा किया जाता था।

मोच विशेषज्ञ

मोच कपड़े या सूत की अटी की सहायता से निकाली जाती है। क्रिया दो या तीन बार दोहराने से ठीक हो जाती हैं। पांव ईंट या इतने ही ऊंचे स्थान पर रखते हैं। फिर घुटने के नीचे से क्रिया आरम्भ कर उंगलियों से कपड़े को बाहर निकाल देते हैं।

मालिश विशेषज्ञ

पेट मालिश, सिर मालिश आदि के विशेषज्ञ होते थे। पेट की छोटी आंत खिसकने पर मालिश की जाती थी। सिर मालिश के भी विशेषज्ञ होते हैं जो सिरशूल, अनिद्रा, मानसिक थकान पर सिर की मालिश किया करते हैं।

फोड़ों का ईलाज

फोड़ों का ईलाज बूटियां घिस कर लगाने, पतियों पर मक्खन मिलाकर लगाने, बूटियां खिलाने या पका कर ठीक किया जाता था। ऐसे सभी विशेषज्ञ प्रशिक्षित नहीं होते थे। वे अनुभव के आधार पर कार्य करते थे या अपने गुरु से क्रियात्मक ज्ञान प्राप्त करते थे।

प्राकृतिक चिकित्सा

प्राकृतिक चिकित्सा में जल तथा मिट्टी का प्रयोग किया जाता है या परहेज या व्रत कराये जाते हैं। दर्द, थकान तथा पेट रोगों का उपचार गर्म जल से किया जाता है। किसी अंग में सूजन आने पर गरम पानी में नमक तथा बण्हा की पतियां डाल कर उपचार किया जाता है। हिम की डली आग से जलने या सूजन पर लगाते हैं।चरम रोग या कीटों के काटने पर मिट्टी का लेप लगाया जाता है। मिट्टी में कई बार बूटियां मिलाई जाती हैं। पेट रोगों के उपचार के लिए निराहार तथा फलाहार व्रत रखाये जाते हैं। कुछ रोगों के लिये परहेज भी बताये जाते हैं। जिसमें खाने तथा न खाने के पदार्थों को निश्चित किया जाता है। इसके साथ आसन, प्राणायाम या अन्य व्यायाम बताये जाते हैं। उबली सब्जियां भी खिलाई जाती हैं।

ओषधि चिकित्सा

यह क्षेत्र जड़ी बूटियों के लिये प्रसिद्ध है। परन्तु चन्द्रखणी की जड़ी बूटियां अधिक गुणकारी मानी जाती हैं। कहावत है :

शूपा कूणी री ओक्ती खण्डाधार री माटी।
उझी रे चाउल, सिराजी नाटी।।

शिलाजीत शाट नाला में मिलती है। नरविष कीड़े मारने की औषधि हैं। यह एक झाड़ी है। उसके नीले फूलों तथा पतों का प्रयोग करते हैं। सालम पंजा, पतीश, मीठा पतीश, कड़ू, सर्पगंधा, चिराईता, [illegible]

मुशकवाला, रसौंत लकड़ी इत्यादि कई जड़ी बूटियां हैं। राष्ट्र (अजवाईन), चोरा, बाच, काकड़ सिंगी इत्यादि। साग सब्जी, जंगलों में उगने वाले खुम्ब तथा फलों से भी उपचार किये जाते हैं। चिकित्सा के लिये परिवार प्रसिद्ध होते थे जो पीढ़ी दर पीढ़ी कई रोगी का उपचार किया करते थे। अभी भी बच्चों के सूखा रोग, मौसमी बुखार, बालों के रोग की दवाईयां कई परिवार देते हैं।आवशयकता होने पर जड़ी–बूटियां ताजा लाई जाती हैं। बण्हा, बसूटी तथा बरे (बाच) बूटियों को बड़ा महत्व दिया जाता था। कहावत है 'जहां बण्हा, बसूटी, बरें वहां आदमी क्यों मरें।' उपचार बिना शुल्क के किया जाता था। पैसा लेने से गुण समाप्ति का डर होता था। जड़ी 20 भादों के पश्चात निकाली जाती थी। उस समय से पूर्व जड़ी कच्ची समझी जाती है।

अंग्रेजों के समय चिकित्सा सुविधायें

1846 ई. में कुल्लू अंग्रेजी के अधीन आया। जन कल्याण के कार्य के लिये 1860 ई. में जिला बोर्ड कांगड़ा का गठन किया गया। पहली डिस्पैंसरी जिला बोर्ड द्वारा कुल्लू में खोली गई। उस समय बस्ती केवल सुल्तानपुर में ही थी। सम्भवतः यह डिस्पैंसरी सुलतानपुर में ही होगी। 1905 ई. में डिस्पैंसरी में नियुक्त डा. केदारनाथ एक डिस्पेंसर तथा स्टोर कीपर द्वारा भूंचाल पीड़ितों की सेवा का रिपोर्ट में वर्णन है।

1905 ई. के पश्चात ढालपूर डिंस्पैसरी ले जाई गई। 1920 ई. के लगभग इसे अस्पताल का दर्जा दिया गया तथा भवन निर्माण किया गया। रोगियों के आवास के लिये राये भगवन्त सिंह जागीरदार रुपी तथा जान्सन द्वारा दो मंजिल के आवासीय कक्ष बनवाये जिनमें अस्पताल कार्यालय था। 1924 ई. में मनाली में मिशन अस्पताल डा. कुटस की देख रेख में खोला गया। 1935 ई. में लार्ड तथा लेडी विलिंगटन बायसराय (भारत) कुल्लू आये। वे मिशन अस्पताल देखने भी गये जिसकी स्मृति में अस्पताल का नाम बदल कर "लेडी विलिंगटन अस्पताल" रखा गया। 1933 ई. में आर्युवैदिक डिस्पैंसरी मनाली में खोली गई जिसे बाद में बदल कर एलोपैथिक डिस्पैंसरी बना दिया गया। इसके पश्चात आनी, बन्जार, जरी, नगर में डिस्पेंसरियां खोली गई। यह स्थिति 1947 ई. तक रही।

स्वतन्त्रता के पश्चात् स्वास्थ्य सेवा

स्वतन्त्रता के पश्चात स्वास्थ्य सेवाओं में विशेष रुप से वृद्धि हुई। इस समय क्षेत्रीय अस्पताल, एक आयर्वेदिक अस्पताल और एक हौम्योपेथिक डिस्पेंसरी है। हर बीस हजार की जनसंख्या पर एक चिकित्सा केन्द्र तथा हर तीन हजार की जनसंख्या पर एक स्वास्थ्य उपकेन्द्र हैं। तदानुसार 17 प्राथमिक स्वास्थ्य केन्द्र तथा 99 स्वास्थ्य उपकेन्द्र हैं। इनके अतिरिक्त आयर्वेदिक 7

डिस्पैंसरियां, एक कुष्ट निवारण केन्द्र तथा 5 सामुदायिक विकास स्वास्थ्य केन्द्र हैं। जिला कार्यालय में दांत, हड्डियों, तपेदिक, मलेरिया तथा शिशु रोग आदि विशेषज्ञ है। जोनल अस्पताल 2000 ई. में बना।

जिला में इस समय 14 स्वास्थ्य सुधार कार्य चल रहे हैं। गिलढ, तपेदिक, मलेरिया, पेचिश, एड्स, अन्धापन, गलघोन्टू, काली खांसी, पोलियो आदि की रोकथाम इनमें प्रमुख हैं। प्राथमिकता के आधार पर परिवार नियोजन कार्यक्रम को बढ़ावा दिया जा रहा है। 1991 ई. में रुधिर कोष सुविधा भी उपलब्ध कराई गई है जिसमें रुधिर की जांच कर सूची भी बनाई गई है। 1972 ई. में जिला अस्पताल का मुख्य भवन बनकर तैयार हुआ जिसमें 110 बिस्तरों की क्षमता है। परन्तु 200 के लगभग रोगियों को आवास सुविधा दी जाती है। एक सराय भी है जिसमें दो हाल कमरे, एक पुरुषों तथा स्त्रियों के लिये बनाये गये। प्रत्येक में 10 बिस्तर लगते हैं। हाल के साथ एक रसोई घर, स्नानागार तथा शौचालय हैं। जिला अस्पताल के प्रांगन में 24 घण्टों खुली रहने वाली एक दवाईयों की दुकान भी है। 1977–78 ई. में शल्य चिकित्सा कक्ष भी उपलब्ध किया गया है। 2007ई॰ में एक और भवन बन कर तैयार हो गया है जिसमें 169 रोगियों के आवास की अतिरिक्त सुविधा होगी।

आर्युवैदिक तथा अन्य चिकित्सा सुविधायें

आर्युवैदिक विभाग जिला में 1955 ई. से कार्य कर रहा है। 1956 ई. के पश्चात इसका जिला कार्यालय बनाया गया। इस समय इसकी 65 डिस्पैंसरियां और कटराईं में 10 बिस्तरों वाला अस्पताल है जिसमें 4 डाक्टर नियुक्त है। अन्य सभी डिस्पैंसरियां दुर्गम स्थानों में स्थित हें।

निजी क्षेत्र में सुविधाएं :-

निजी क्षेत्र में अब कई चिकित्सालय खुल गए हैं जहां सभी सुविधायें उपलब्ध हैं। जिले के हर आंचल में निजी क्लीनिक तथा औषधियों की दुकानें हैं। इन से जनता को बड़ी राहत मिलती है। आर्थिक रूप में स्मर्थ व्यक्ति निजी क्षेत्र में उपचार को अधिमान देते हैं। शल्य चिकित्सा तथा दन्त चिकित्सा की सुविधायें भी हैं। आंख के आप्रेशन के लिये रूआडू तथा रायसन में दो अस्पताल हैं।

35. शिक्षा-प्रचार तथा प्रसार

आश्रम पद्धति

जहां जहां ऋषियों ने तप किया वहां उनके मन्दिर बने। जहां वे रहे उन स्थानों को आश्रमों का नाम मिला। ऋषि इन आश्रमों द्वारा अपने धर्म एवं संस्कृति का प्रचार प्रसार करते थे। इसी आश्रम पद्धति द्वारा ऋषियों ने वेदों के अनुपम ज्ञान को पीढ़ी दर पीढ़ी पहुंचाया तथा सुरक्षित रखा।यह गुरु शिष्य परम्परा द्वारा ही सम्भव हो सका। शिष्या गुरु के चरणों में बैठ कर शिक्षा ग्रहण करते थे। आश्रमों के कठोर नियमों का पालन कर धर्म ग्रन्थों और शास्त्रों का अध्ययन करते थे और जीवन के गूढ़ रहस्यों के बारे में ज्ञान प्राप्त करते थे।

समय के साथ ये आश्रम समाप्त हो गये। कुछ आश्रम आक्रमण से नष्ट हुये और कुछ को ऋषि स्वयं छोड़ गये। जैसे सहस्र बाहू ने वशिष्ट के आश्रम को जलाया। परशुराम अपने पापों के प्रायश्चित के लिये काश्यप ऋषि और उसके गोत्रियों को आश्रम दान कर समुद्र तट पर चले गये। निरमण्ड परशुराम का आश्रम था जहां उनका मन्दिर है। निरमण्ड के सभी ब्राह्मण काश्यप गोत्र के हैं। परशुराम द्वारा माता का सिर काटने से ही स्थान का नाम निरमण्ड पड़ा। इसी प्रकार आश्रम समाप्त होते चले गये।

गुरू शिष्य परम्परा

आश्रम पद्धति की समाप्ति पर विद्वान घरों में शिक्षा देने लगे। गुरु के पास एक या दो हस्त लिखित पुस्तकें होती थीं जिन्हें शिष्य कण्ठस्थ कर लिया करते थे। कुल्लू के बहुत से ब्राह्मण परिवारों में पांडुलिपियां अभी भी विद्यमान हैं। विषय ज्योतिष, आर्युविज्ञान, तन्त्र–मन्त्र, यज्ञ विधि एवं संस्कार थे। भाषा संस्कृत होती थी। यों भी कुल्लू भाषा संस्कृत निष्ट होने से यहां संस्कृत के प्रचार तथा प्रसार की पुष्टि होती है।

बौद्ध मठों द्वारा शिक्षा

बुद्ध धर्म के आगमन से इस पद्धति का भी ह्रास हुआ। हेवनसांग ने अपनी पुस्तक सी. यू. की. में लिखा है कि 7वीं शताब्दि में कुल्लू में महायान सम्प्रदाय के 20 संघारम (बोधमठ) थे। जहां 1000 भिक्षु शिक्षा ग्रहण करते थे। 15 अन्य धर्मों के मन्दिर तथा कई ऋषि मुनियों की कन्द्रायें थीं। हचिसन तथा वोगल ने इन संघारम की स्थिति कलाथ के आस पास मानी है। जहां अभी भी अबलोकेतश्वर की एक मूरत कपिल मुनि के मन्दिर में विद्यमान है।

परिवार में ही शिक्षा

संस्कृत शिक्षा का कुल्लू में लोप नहीं हुआ। ब्राह्मण अपने पुत्रों को
तों मे ही ज्ञान देने लगे। शासन तन्त्र बदलता गया परन्तु शिक्षण कार्य सीमित
रूप में चलता रहा। राणों और ठाकुरों का काल अस्थिरता तथा असुरक्षा से
भरा था। इसलिये शिक्षण कार्य में और ह्रास आया। परन्तु उपरोक्त विद्या लुप्त
न हुई। विहंगमणि पाल के पांव की रेखा देख कर ही ज्वाला पंडित ने उसके
वंश के बारे में जाना और भविष्य की घोषणा भी की जो सत्य सिद्ध हुई।
राजतन्त्र आने से राजाओं के पास अवश्यमेव विद्वानों को महत्व मिलता होगा।
क्योंकि पारिवारिक संस्कारों में इनकी आवश्यकता पड़ती होगी। परन्तु जन
साधारण अनपढ़ थे। राजाओं ने जन साधारण की शिक्षा दीक्षा के लिये कुछ न
किया। इस अवहेलना और उथल पुथल के काल में भी अपने परिवारों में
ब्राह्मण अगली पीढ़ी को ज्ञान देते रहे। विवाह जन्म, मृत्यु तथा अन्य संस्कारों
में मंत्रोच्चारण संस्कृत में होते रहे। टिपड़े, बर्षफल, जन्म कुण्डलियां संस्कृत में
बनते रहे। इसी काल देवनागरी शास्त्रिय लिपि कहलाई। बाहरवीं शताब्दी में
राज–काज की लिपि शारदा तथा सतारहवीं शताब्दी में टांकरी लिपि अपनाई
गई। इसी लिपि के साथ पहाड़ी भाषा में पत्र व्यवहार होने लगा। परन्तु जन
साधारण को पढ़ाने के लिये नियमित पाठशालायें न थीं। उस काल में कुछ
साहित्यक कृतियों का भी अनुवाद हुआ। राज कर्मचारी भी एक दूसरे से इस
भाषा में पत्र व्यवहार करते थे। राज आज्ञाओं एवं दान पत्र इसी भाषा में जारी
किये जाते थे। जिसमें आभास मिलता है कि इस भाषा का प्रचुर प्रसार प्रचार
हुआ होगा।

शिक्षा अग्रेंजो के समय

1846 ई. में कुल्लू अंग्रेजों के अधीन आ गया। इसे जिला कांगड़ा का उप मण्डल बनाया गया। शिक्षा के प्रचार एवं प्रसार के लिये जिला बोर्ड का गठन हुआ। 1858 ई. में पहला प्राथमिक पाठशाला जिसमें प्रथम से चतुर्थ तक चार श्रेणियों होती थीं, सुलतानपुर में खोली गई। इस स्कूल को 1879 में वर्नेकूलर स्कूल छः श्रेणी तक बना दिया गया।1915 ई. में इसे मिडल बना दिया गया। 1925 ई. में इसी स्कूल को लड़कियों का वर्नेकूलर मिडिल स्कूल कर दिया गया और ढालपुर में एंगलों वर्नेकूलर लड़कों के लिए स्कूल बनाया गया। राजा कुल्लू ने स्कूल के लिये ढालपूर में 'रानी के रोपे' नाम भूमि दान में दी। इसी स्थान पर वर्तमान सीनियर सैकेंडरी विद्यालय स्थित है। 1855 ई. में बंजार में प्राथमिक पाठशाला खोली गई। कुल्लू जिला के मुख्य अन्य स्थानों भून्तर, दलाश, निरमण्ड, मनाली, कटराई आदि में भी वर्नेकूलर

पाठशालायें खोली गई। ग्रामीण अंचलों में प्राथमिक पाठशालायें कोठी के नाम से खोली जाती थीं। साधारण जनता को शिक्षा में रुचि न थी। जिस गांव में अधिक विद्यार्थी होते थे पाठशालायें उसी गांव में कार्य करती थीं। आवश्यकता अनुसार पाठशालाओं का स्थान बदला जाता था। 1924 ई. में पहला जिला बोर्ड हाई स्कूल ढालपुर में खोला गया जो 1928 ई. में सरकारी नियन्त्रण में ले लिया गया। 1947 में कुल्लू जिला में एक हाई स्कूल पांच माध्यमिक तथा 25 के लगभग प्राथमिक स्कूल थे। सभी का शिक्षा माध्यम उर्दू था।

स्वतन्त्रता के पश्चात शिक्षा

स्वतन्त्रता के पश्चात शिक्षा का विशेष प्रचार प्रसार आरम्भ हुआ। 1957ई में पहला शिक्षा सर्वेक्षण किया गया तथा शिक्षण संस्थानों के खोलने तथा विकास की योजना बनाई गई। लड़कियों के मिडल स्कूल सुलतानपुर को हाई बना दिया गया। 1957 ई. में ही जिला बोर्ड के सभी स्कूल सरकार ने ले लिये। 1952 ई. मं सहायक जिला निरीक्षक कुल्लू में नियुक्त हुआ। 1960 ई. में उपजिला शिक्षा अधिकारी का कार्यालय कुल्लू में खुला। 1963 ई. में पूर्ण जिला बनने पर जिला शिक्षा अधिकारी की नियुक्ति हुई। इसी समय छः खण्ड शिक्षा अधिकारी भी नियुक्त हुये। 1963 ई. में लड़कियों के स्कूल को समाप्त कर ढालपुर में सह शिक्षा आरम्भ की गई। 1958 ई. से प्राथमिक अध्यापक प्रशिक्षण के लिये जूनियर बेसिक स्कूल आरम्भ किया गया था। परन्तु उसके लिये कोई भवन न था। अतः सुलतानपुर का भवन बेसिक स्कूल के लिये दे दिया गया। 1966 ई. में शिक्षा सम्बन्धी दूसरा सर्वेक्षण किया गया। 1967 ई. में ढालपुर में महाविद्यालय आरम्भ किया गया। जे. बी. टी. स्कूल का भवन महाविद्यालय के लिये दिया गया। यह भवन अभी तक महाविद्यालय के पास ही है। 1992 ई. में महाविद्यालय में विद्यार्थी संख्या 1800 थी।

तीसरा शिक्षा सर्वेक्षण 1976 ई. में किया गया। नये स्कूल खोले गये। जिस कारण शिक्षित व्यक्तियों की संख्या 25 प्रतिशत हो गई। परन्तु जनता की रूचि शिक्षा में अधिक न हुई। विशेष कर लड़कियों का शिक्षा का आंकड़ा बहुत कम था। 75 प्रतिशत जनसंख्या अनपढ़ थी। अब हर दो कि. मी. पर एक प्राथमिक, हर पांच कि. मी. पर माध्यमिक तथा हर दस कि. मी. पर एक उच्च विद्यालय देने के लक्ष्य को सामने रखा गया। नई संस्थायें सर्वेक्षण के आधार पर खोली जाने लगी। विधान सभा सदस्य के परामर्श अनुसार इसमें परिवर्तन भी किया जाता था। 1.11.81 में लड़कियों का उच्च विद्यालय सुलतानपुर में पुनः बनाया गया। 1987 में एक प्रौढ़ शिक्षा सर्वेक्षण

किया गया। 14–15 आयु वर्ग के अनपढ़ों के आंकड़े इकट्ठे कर शिक्षा प्रसार की योजना बनाई गई। परिणाम स्वरुप 1991 तक शिक्षित संख्या 43 प्रतिशत तक जा पंहुची। इस समय शिक्षा संस्थानों का संख्या इस प्रकार है।

सरकारी		संख्या
1.	महाविद्यालय	4
2.	उच्च विद्यालय	51
3.	माध्यमिक पाठशालायें	107
4.	प्राथमिक पाठशालायें	727
5.	संस्कृत विद्यालय	2
6.	वरिषठ माध्यमिक विद्यालय	31

कुल्लू महाविद्यालय में सांध्याकालीन कक्षायें एमए की 1988 से चलाई जा रही हैं। महाविद्यालय में लड़कियों का होस्टल भी हैं। 2001 में जिला अधिकारी का पद समाप्त कर दिया गया। उसके स्थान पर उप निदेशक लगाये गये। 2006 ई. में एलिमंट्री शिक्षा प्रणाली आरम्भ की गई। प्रथम से आठवीं तक प्राथमिक विद्यालय तथा 9वीं से 12वीं श्रेणियां वाले वरिष्ठ विद्यालय माने गये। इसी वर्ष से प्रथम श्रेणी से अंग्रेजी भी पढाई जाने लगीं।

निजी क्षेत्र द्वारा शिक्षा के प्रयास

आर्य समाज द्वारा कार्य

1908 ई. में एक माध्यमिक पाठशाला खोली गई। जो 1928 ई. तक चलती रही। 1915 में लड़कियों के लिये प्राथमिक पाठशाला खोली। माध्यमिक पाठशाला में अंग्रेजी पढ़ाई जाती थी तथा पांचवी से आठवीं तक श्रेणियां थी। प्राथमिक पाठशाला 1948 तक कार्य करती रही। 1945 से 1947 तक सिलाई/कढ़ाई का विद्यालय लड़कियों के लिये दो बर्ष तक चलाया। इस समय भी एक उच्च पाठशाला अखाड़ा बाजार आर्य समाज में चल रही है। एक विद्यालय वाशिंग में 9 से 12 श्रेणी का हैं। इन विद्यालयो को चलाने का श्रेय श्री सत्यपाल भटनागर को जाता है जो स्वयं सेवा निवृत प्राचार्य हैं। उन्होंने विद्यालय बनाया और चलाया। वह आर्य समाज में 30 वर्षों तक विभिन्न पदों पर कार्य करते रहे।

सनातन धर्म सभा

1916 ई. से संस्कृत की प्राज्ञा की श्रेणियां चलाई गई। जो 1940 ई. तक चलती रहीं। आर्य समाज कुल्लू के मुकाबले पर एक माध्यमिक पाठशाला, 1910 ई. से चलाई गई जो 1918 ई. में बन्द कर दी गई। 1942

में रत्न तथा प्रभाकर की श्रेणियों आरम्भ की गई जो कई बर्षों तक चलती रही।

अन्य निजी क्षेत्रा की संस्थायें

डी. ऐ. बी. द्वारा कानवेंट पद्धति पर दो उच्च माध्यमिक विद्यालय जिला में चलाये जा रहें है जो क्रमश: मौहल, मनाली तथा बंजार में स्थित है। एक उच्च विद्यालय क्रिश्चन मिशनरियों द्वारा ढालपुर कुल्लू में चलाया जा रहा है। इनके अतिरिक्त निजी क्षेत्र में पांच प्राथमिक तथा माध्यमिक पाठशालायें और चल रहीं हैं। तिब्बतियों द्वारा एक वरिष्ठ माध्यमिक विद्यालय मनाली में तथा एक माध्यमिक स्कूल हनुमानी बाग ढालपुर में चलाया जा रहा है। विद्या भारती द्वारा स्कूल मनाली, रियाड़ा, पनगां, निरमण्ड तथा वांशिग आदि में चलाये जा रहे हैं। अंग्रेजी माध्यम के विद्यालयों की बाढ़ आ गई है। गांवों तथा शहरों में विद्यालय खुले हें।

व्यावसायिक शिक्षा

प्रत्येक गांव स्वतन्त्रता से पूर्व एक पूर्ण ईकाई था। जिनमें लोहार, नाई, बढ़ई, चमार, कुम्हार, जुलाहा इत्यादि सेवक हुआ करते थे। जो गांव के प्रत्येक परिवार के सदस्यों के लिये कार्य करते थे और फसल के समय निश्चित अन्न, दाल इत्यादि पारिश्रमिक के रूप में प्राप्त करते थे। इन कारीगिरों को प्रशिक्षण अपने परिवार में ही मिलता था। अर्थात व्यावसायिक शिक्षा पैतृक थी। 1928 ई. में उद्योग विभाग द्वारा शाल/पट्टू बुनाई तथा डिंजाईन बनाने का एक स्कूल ढालपुर में खोला गया। इसके साथ लड़कियों के लिये सिलाई कढ़ाई के प्रशिक्षण का भी यहां प्रबन्ध किया गया। यह प्रशिक्षण स्कूल अभी तक चला हुआ है। प्रशिक्षण एवं स्थानीय आवश्यकताओं के कारण पट्टू बार्डर तथा शाल बनाना कुल्लू का कुटीर उद्योग बन गया है।

1958 में प्राथमिक अध्यापकों के प्रशिाक्षण के लिये एक बेसिक ट्रेनिंग स्कूल खुला। जो 1972 तक चलता रहा। इसमें हर बर्ष 100 विद्यार्थी निकलते रहे। इसमें प्राथमिक पाठशालाओं के शिक्षकों की कमी दूर हो गई। 1997 ई. में नया प्रशिक्षण स्कूल जरड़ में पुन: खोला गया।

1952 में आई. टी. आई. (दस्तकारी, प्रशिक्षण संस्था) शमशी (कुल्लू) में आरम्भ हुई। इसमें स्टेनो ग्रफी, मोटर मैकेनिक, ड्राफ्समैन, इलेक्ट्रीशियन, वैलडर आदि 12 विधाओं के व्यावसायिक प्रशिक्षण का प्रवन्ध हैं। निजी क्षेत्र में दो बीएड कॉलेज़ खुले है। एक नर्सों के प्रशिक्षण का स्कूल है। इसी प्रकार आर्ट तथा क्राफ्ट अध्यापक के लिये भी एक विद्यालय खुला है।

36. मनोरंजन

मनोरंजन जीवन का उबाउळपन समाप्त कर नई चेतना का संचार करता है। जीने के प्रति रूचि तथा जोश बढ़ाता है। तनाव से मुक्त करता है। इस से पर्वतीय क्षेत्रीय की विषमताओं को झेलने में सहायता मिलती है तथा कार्य कुशलता बढ़ती है।

नृत्य- नाटी

कुल्लू के लोगों के बारे में कई लेखकों ने यह बात विशेष रूप से लिखी है कि ये फूलों तथा नाच के बहुत शौकीन हैं। यहां का कोई पर्व, त्यौहार या समारोह लोक नाच के बिना पूर्ण नहीं होता। शहनाई की धुन और वाद्य यन्त्रों की लय नाच के शौकीनों को अनायास ही आकर्षित करती है और उनके पांव थिरक उठते हैं। कुल्लू नाटी प्रायः एक वृत में किया जाता है जिसे "माला" कहा जाता है।

नाच के लिये वेश-भूषा तथा परम्परा

सामान्य अवसरों पर न तो कोई विशेष वेशभूषा पहनी जाती है और न ही निश्चित नर्तकों की संख्या होती है। परन्तु विशेष अवसर पर नर्तक नाच के लिये लिवास पहनते हैं। नृत्य प्रतियोगिता के लिये नर्तक दल की संख्या 12 से 16 तक होती है। पुरुष चूड़ीदार पाजामा, चोला, कलगी वाला टोपा तथा पटका लगाता है। स्त्रियां फूल वाला पट्टू ,थीपू तथा शेष सामान्य वस्त्र तथा गहने पहने होती हैं। पुरुष तथा स्त्रियां दोनों ही फूल मालाएं पहनते हैं।

नाटी में प्रतिष्ठित व्यक्तियों को स्थान आरम्भ में दिया जाता है। सबसे आगे नाचने वाले व्यक्ति को " धूरी या मुढिया" कहते हैं। सभी नृत्यों में लय तथा ताल महत्वशाली होते हैं। शहनाई की इसमें प्रमुख भूमिका होती है। कहावत है :-

वाज ढोलिया ढीली नाटी।
नाटी नी चौलदी हेसी घाटी।।

एक बार शहनाई (सनाल) स्वर होता है और फिर गीत की पंक्तियां नर्तक गाते हैं। यदि शहनाई न हो तो नर्तक दो दल आपस में बनाकर बारी-बारी पंक्तियां गाते हैं। गाते समय वाद्य यन्त्र धीमे और शहनाई के समय जोर से बजाये जाते हैं। ढोल, नगारा, नोपत, दराघ, भाणा, काहल, करनाल, शहनाई, दमामा, रणश्रृंगा, ढाढ, डफाल आदि वाद्ययंत्र होते हैं। नाटी के लिये लगभग 52 ताल हैं। प्रत्येक नृत्य में 5से 8 परिवर्तन किये जाते हैं।

कुल्लू नाच कई प्रकार के हैं:-

1. नाटी 2. तलवार नृत्य 3. लाम्बर नृत्य 4. पेखा नृत्य 5. लाहलड़ी 6. सांगला नृत्य 7. घूघती नृत्य 8. हुल्की नाटी 9. करथी नृत्य आदि।

नाटी

यह अत्याधिक सर्वप्रिय नृत्य है। नाटी कई प्रकार की होती है। ढीली नाटी, रुझका, वांठड़ा, लुडी, लाहुली, चम्बयाली, वाखली इत्यादि।

ढीली नाटी

यह ढीले ताल पर हाथ पकड़ कर या पृथक–पृथक नाची जाती है। इसमें पहले तीन पग दाहिने ओर लेते है और चौथे पग पर बाई टांग से पीछे हटते हैं। ढीली नाटी दो प्रकार की होती है। वेदारी तथा शोरी नाटी। इस नाटी में धार्मिक तथा सामाजिक गीत गाये जाते हैं। खड़ी नाटी भी इसी में आती है। इसके आठ पग होते है। यह आठ पगों में पूर्ण हो जाती है।

रुंझका

तेज ताल पर नाटी रुंझका कहलाती है। इसके पग ढीली नाटी के अनुसार होते हैं। दो पंक्तियों में इसे किया जाये तो दोहरी नाटी कहलाती है। पहले स्त्रियां इस नाच में भाग नहीं लेती थीं परन्तु प्रतियोगिताओं में इस नियम का पालन नहीं किया जाता है।

लुड्डी

लुड्डी नृत्य विशेष कर विवाह उत्सव पर किया जाता है तथा यह नृत्य स्त्रियों में अधिक लोक प्रिय है। प्रतियोगिताओं में नाटी लुड्डी से ही प्राय: आरम्भ की जाती है। इसमें हाथ कन्धे से उपर ले जाकर झटकते हैं। यह धीमी गति की नाटी है। यह नाटी एक पंक्ति में नाची जाती है।

लाहुली नाटी

इसमें हाथों को खुला कर नाचते हैं। पहला पग दाहिनी ओर लेते हैं और फिर वायां उसमें मिलाते हैं। यह वायां पांव आगे बढ़ाते हैं और दाहिना उसमें मिलाते हैं। यह दोनों धीमें या तेज गति से नाची जाती हैं।

चम्बयाली नाटी

इसमें पग चम्बयाली नाटी के अनुसार होने के कारण इसे चम्बयाली नाटी कहते हैं।

वाखली

वाखली नाटी में अधिक झटके देते हैं तथा बैठकर भी एक पग चलते हैं। यह नाटी अधिक कठिन है। तुनकी नाटी भी इसे ही कहते हैं।

वांठड़ा

यह विशेष ताल पर धीमी नाटी है। इसमें हाथ ओर टांग एक साथ हिलाये जाते हैं। यह लाहुली नृत्य के अधिक निकट है।

लाम्बर नृत्य

इस नृत्य में दो दल होते हैं। इसमें पहला पग दाहिनी ओर तथा तीन पग बाईं टांग से पीछे की ओर लिये जाते हैं। अगला कदम लम्बा लेकर पूर्व स्थिति में आ जाते हैं। इसमें ताली भी बजाई जाती है।

पेखा नृत्य

तेज गति का नृत्य है। दोनों स्त्रियां तथा पुरुष नाचते हैं।

सांगला नृत्य

इसमें स्त्रियां तथा पुरुष आमने सामने नाचते हैं। दोनों अर्ध वृत सा बनाते हैं तथा प्रश्नोतर के रुप में लोकगीत गाते है।

करथी नृत्य

इस नृत्य में नर्तक एक दूसरे का हाथ थामे अर्धवृत बनाते हैं। आरम्भ में नाच धीमी गति का होता है। परन्तु प्रगति के साथ गति आती है। इस नृत्य में पुरुष तथा स्त्रियां दोनों सम्मिलित होते हैं। यह शास्त्रीय नृत्य की तरह होता है।

लाहलड़ी नृत्य

यह स्त्रियों का लोकप्रिय नृत्य है। इसमें स्त्री नर्तक दल दो भागों में बंट जाता है। और आमने सामने खड़े हो जाते हैं। एक दल कमर झुका छोटे-छोटे कदमो से आगे बढ़ता है और हाथ से ताली बजाते हुये गीत गाता है। दूसरा दल उसी ताल पर पीछे हटता जाता है। गीत की दूसरी पंक्ति पर बढ़ने वाला दल हटता है और हटने वाला आगे बढ़ता है। यह क्रम चलता रहता है। चांदनी रात में मेलों तथा उत्सवों में लड़कियां लम्बे समय तक लाहलड़ी नृत्य करती रहती है। इसमें आगे बढ़ने वाला दल प्रशन भी करता है और पीछे हटने वाला बढ़ते समय उतर देता है।

हुलकी नृत्य

मेले या उत्सव की समाप्ति पर देवता को मन्दिर वापस ले जाने के पहले नाचा जाता है। वह एक प्रकार का देवता को विदाई और उत्सव के समापन का नृत्य है। इसके पश्चात देवता अपने मन्दिर में चला जाता है।

तलवार नृत्य

तलवार नृत्य दो प्रकार का होता है।

1. खड़ियात 2. खुला नाच।

खड़ियात

इसमें वाद्य यन्त्रों के विशिष्ठ तेज ताल पर दो व्यक्ति तलवार घुमाते और वार बचाते हुये स्थान बदलते हैं। खड़ियात नृत्य नाटी के आरम्भ या अन्त में किया जाता है। दो व्यक्ति तेजी से तलवारें लिये जाते हैं। वह नाच कुछ मिनटों का होता है। शेष नर्तक अपने स्थानों पर खड़े रुमाल हिलाते रहते हैं। खड़ियात खड़ग + आहत से बना तथा बिगड़ा शब्द है। जिसका अर्थ तलवार से मारना है।

खुला नाच

वाद्य यन्त्रों को ताल पर एक या दो व्यक्ति नाटी माला के भीतर या अकेले ही तलवार के साथ निरन्तर नाचते रहते हैं। इनके नाच के लिए कोई निश्चित नियम नहीं होता है।

लोक नाट्य परम्परा

कुल्लू की लोक नाट्य परम्परा समृद्धि तथा विशेष प्रथाओं से बंधी हुई है। इसका मूल आधार देव प्रथा ही है। देव पूजा में भी नाट्यात्मक पद्धति अपनाई जाती है। अतः प्राचीन काल से ही देव परम्परा और नाट्य परम्परा पीढ़ी दर पीढ़ी चली आ रही है। ये लोक नाट्य केवल मनोरंजन के साधन ही नहीं अपितु जन मानस को अच्छी सीख भी देतें है तथा कुशल नीति समझाते हैं। इन नाट्यों के लिये निर्धारित स्थान तथा दिन होते हैं। कुछ नाट्यों के पात्र भी निशिचत होते हैं। कुल्लू में नाट्य को खेल कहा जाता है। जैसे होरण खेल, देउ खेल, राखश खेल।

कुल्लू नाट्य को छः श्रेणियों में बांटा जा सकता है।

1. अभिनय प्रधान : होरण, निरशु आदि।
2. कथा प्रधान : रास लीला, राम लीला, चन्द्राउली।
3. देव नाट्य : देऊ खेल, शराणी, [illegible], बिठु।

4. अश्लील नाट्य : झीहरु, गिहणा, राखस खेल, गनेड़, बांढू, मड़वाला।
5. स्वांग : शोयरी स्वांग।
6. मखौटा नाट्य : फागली इत्यादि।

होरण (हिरन)

आगे पीछे दो व्यक्ति मिल कर हिरण बनाते हैं। ऊपर चित्रू (काला शवेत पट्टू डालते है। भांग के काष्ठ के सींग बांध कर हिरण के दायें और बायें एक पुरुष और स्त्री नाचते हैं। हिरण पुरुष तथा स्त्री वाद्य यन्त्रों के विशेष ताल पर नाचते हैं और गाते हैं। हिरण के सींग फूलों से सजाये होते हैं। यह अति लोक प्रिय नाट्य है। दायें वायें नाचने वाला पुरूष कान्ह कहलाता है। पुरूष या स्त्री साधारण या नाच के कपड़े पहने होती है। इनके साथ बाजा होता है। यह नाट्य अश्वनी शुक्ल पक्ष से आरम्भ होकर 15 पौष तक अभिनीत किया जाता है। यह गांव गांव घूमते हैं। लोग इन्हें अन्न धन देते हैं।

निरशु

निरशु में कई कलाकार स्वांग बनाकर आते हैं। जोगी, राजा, भगत, साहूकार, कृषक, कवि, वैद्य आदि। जन मानस के प्रश्नों उसके हसौड़ उत्तरों और अभिनय से कार्यक्रम आगे बढ़ता है। इसमें व्यंग्य भी किया जाता है। जिसका सभी रस लेते हैं। इसमें गाने द्वारा भी मनोरंजन किया जाता है। निरशु वैसाख मास में मनाया जाता है।

कथा प्रधान नाट्य

कुल्लू में रामलीला तथा रास लीला अभिनीत नहीं की जाती है। केवल कथा के रुप में सुनाई तथा गाई जाती है।

चन्द्राउली

चन्द्राउली में रास लीला अभिनीत की जाती है। इसका श्रीगणेश वैष्णव धर्म के आगमन के पश्चात हुआ। पहले कृष्ण के साथ हाथ पकड़ गोपियां वृत में नाचती हैं। ताल बदलने पर कृष्ण मध्य और गोपियां उसके चारों ओर नाचतीं हैं। चन्द्राउली मणीकर्ण रघुनाथ मन्दिर, राजा शिविर आदि में अभिनीत किया जाता है। चंद्राउली राधा की सहेली तथा कृष्ण की गोपियों से थी जो नृत्य में अति कुशल थी। यह कृष्ण की सेविका भीं थी।

देव नाट्य

ये मर्यादा में बंधे नाट्य है, तथा शक्तिपूजा का प्राचीनतम रुप भी है।

देऊ खेल

यह मन्दिर के आंगन में ही खेला जाता है। इसके पात्र गूर होते हैं। गूर (चेला) यह खेल लोहे की कटार, गुर्ज, शांकल (जंजीर), छड़, सूई, खण्डा, बरछा आदि से खेलता है। इसके लिये वाद्य यन्त्र विशेष ताल पर बजाये जाते हैं।गूर धीमी गति से नाचते हुए कई क्रियाऐं करते हैं।

कणांश

यह आयोजन भी देव मन्दिर परिसर में ही किया जाता है।यह सांयकाल में विशेष भाषा में मंगलाचरण है।इसमें कई व्यक्ति परम्परागत रुप में भाग लेते हैं।

शराणी

यह चैत्र मास में कंवारी लड़कियों का समारोह है जो मन्दिर में इकटठी हो कर देव स्तुति करती तथा प्रहसन खेलती हैं।वे अंन्न, धन "जूब" देकर इकट्ठा करती है। अन्तिम दिन इस अन्न धन से सहभोज किया जाता है।

अश्लील नाट्य

सभी अश्लील नाट्य पोष तथा माघ मास में अभिनीत होते हैं।

झीहरू

यह अश्लील संवाद तथा तुकबन्दी होती है। इसका प्रचलन शिक्षा प्रसार के साथ बन्द हो रहा है।

गिहणा

इसमें रात के समय व्यक्ति मशाल के प्रकाश में गांव का चक्कर लगाता है। आगे बाजा बजाया जाता है। इसके पश्चात एक स्थान पर इकट्ठे हो कर दूसरे गांव को अश्लील गालियां दी जाती हैं। यह प्रशा भी धीरे–धीरे बन्द होती जा रही है। इसे रुपी वैली में सदयाला कहते हैं।

नगेहड़

यह नाग हेड़ का बिगड़ा रुप है। इसमें एक व्यक्ति को सींग लगा, मूसल पर बिठा कन्धे पर उठाते हैं। वह व्यक्ति विदूषक की तरह व्यवहार

करता है। इसमें संवाद देव स्तुति से आरम्भ किये जाते है और अश्लील संवाद से समाप्त होते है।

स्वांग

किसी का रुप धारण कर उसकी नकल करना स्वांग कहलाता है। इसका मुख्य उददेश्य मनोरंजन है स्वांग का प्रदर्शन बहुत से स्थानों पर होता है।

मखौटा नृत्य

मखौटा नृत्य में मखौटा पहन कर अभिनय किया जाता है। यह नृत्य विशेष रुप से फागली में किया जाता है। इस में शस्त्रों का प्रयोग भी किया जाता है। इसमें देवता की राक्षस पर विजय या आपसी युद्ध के पश्चात संधि प्रदर्शित की जाती है।

विठू

यह भी देवताओं से जुड़ा लोक नाट्य है। देवताओं के आगे धूप के स्थान वेठर कुल्लू में जलाया जाता है। इस वैठर को लाने मास वैशाख के अन्तिम दिनों में जाते हैं। व्यक्ति की वापसी पर गूर और वैठर लाने वाले व्यक्ति में संवाद होता है। संवाद में अन्य व्यक्ति भी सम्मिलित हो जाते हैं। प्रश्नोत्तर बड़े मजेदार होते हैं। और इसका आनन्द उठाने के लिये अन्य ग्राम वासी भी उपस्थित होते हैं। कई देवताओं के गूर वैठर लाने जाते हैं। वापसी पर गांव से प्रवेश पर इनका देवता बाजा के साथ स्वयं स्वागत करता है।

जिले के मेले

फागली

फाल्गुन मास में मनाये जाने के कारण इस मेले को फागली कहते हैं। फागली से कुल्लू में मेलों का शुभारम्भ होता है। इसके पश्चात दशहरा तक कुल्लू जिला के किसी न किसी क्षेत्र में हर मास कोई मेला होता रहता है। यह फागली लाहुल या किन्नौर की फागली से भिन्न है। लाहुल की फागली चन्द्र पंचांग के अनुसार नव बर्ष का उत्सव है। जबकि कुल्लू जनपद में फागली

अपनी सांस्कृतिक पृष्ठभूमि लिये हुये हैं। फागली के समय सात दिन तक देवता की पूजा की जाती है। छाया में उगाई जौ की पीली पतियां देवताओं को भेंट करते हैं तथा स्त्रियां बालों में और पुरुष टोपियों में सजाते हैं। फागली जमलू के सभी मन्दिरों में मनायी जाती है।

मेले के दिन राक्षस और देवता में युद्ध दिखाया जाता है। राक्षस को शरीर पर जंगली रावल घास और मुख पर मुखौटे लगा कर बनाया जाता है।

देवता का प्रतिनिधित्व गूर करता है। विशेष ताल पर थेई—थेई, लेई—लेई, पर राक्षस खेल तथा देऊ खेल प्रदर्शित की जाती है जिसके अन्त में विजयी देवता होता हैं। इस क्षेत्र में राक्षस का नाम टुण्डी बताते हैं। राक्षस का एक हाथ न होने पर उसे टुण्डी कहा गया है। जिसने मनाली से अरछण्डी तक आतंक मचाया था। इसके आतंक से दुखी होकर लोग देवताओं की शरण में गये। देवता सीधे संर्घष में जीत न सके। द्युत क्रीड़ा में भी हारे। फिर उन्होंने अति सुन्दर स्त्री तिंवर छातिका (पिशाचिका) से विवाह का उसे प्रलोभन दिया। परन्तु शर्त रखी कि वह कुल्लू क्षेत्र छोड़ जायेगा जिसे वह मान गया। उसने अपना वचन निभाया और सभी ने उसके आतंक से छूटकारा पाया। फागली मेले में यही घटना दोहराई जाती है। जन श्रुति अनुसार मनु महाराज ने शांडिल्य मुनि की सहायता से उसे समाप्त कर दिया। इसलिये पहला फागली मेला मनु मन्दिर में होता है और अंतिम शांडिल देवता के स्थान शालीण में होता है। नीचले क्षेत्र में कोटलू की फागली प्रसिद्ध है। अन्य स्थानों में भी देव शक्ति का आसुरी शक्ति पर विजय के रुप में यह त्यौहार फागली मनाया जाता है। मलाणा, जाणा, सोईल, धारा, बनोगी, कुलग, कोटलू शांगचर आदि जमलू के सभी मन्दिरों में फागली मनायी जाती है।

बिरशु मेला

चैत्र और वैशााख मास में होने वाले मेले को बिरशु कहते हैं। चैत्र मास का जेठा (बड़ा)तथा वैशाख मास का कौन्हा(छोटा) बिरशु कहलाता है। बिरशु मेले सारे जिले कुल्लू में होते हैं। वैशाख संक्रांति की पूर्व सध्या पर घरों में पकवान पकाते हैं और बहू बेटियों को भेजे जाते हैं। मन्दिर में देव रथ सजाया जाता है। संक्रांति के दिन मन्दिर के बाहर लोग इकट्ठे होते हैं। देऊ खेल होती है तथा देव भार्था होती है। जिसमें देवता के उस जगह आने तथा पुराने इतिहास को दोहराया जाता है। यह बर्ष में होने वाली घटनाओं से भी सचेत करता है तथा अपने में आस्था रखने वालों पर उनकी रक्षा का वचन भी देता है। फिर देवता गांव का चक्कर लगाता है। प्रत्येक घर के लोग बाहर आकर देवता का अभिवादन करते हैं और आर्शीवाद प्राप्त करते है। अब देवता अपने स्थान पर लौटता है तो मेला आरम्भ होता है।

काहिका

काहिका कुल्लू क्षेत्र में मनाये जाने वाला विशेष मेला है। इसे प्रायश्चित यज्ञ भी कहा जाता है। इस मेला में नौड़ की विशेष भूमिका होती है जो मेला में पहले मरता है फिर देव कृपा से पुन: जीवित हो जाता है। यह मेला कहीं तीसरे, कहीं पांचवे तथा कहीं सातवे बर्ष और कहीं बारह बर्ष बाद

मनाया जाता है। कई स्थानों में मन्दिर निर्माण या मोहरे निर्माण या देव आज्ञा पर मनाया जाता है। कुल्लू में यह मेला तारापुर, मथान, लरांकेलो, दयार, भेखली, शिरढ़, दरपोईन, छमाहण, नरोगी, बशौणा, हवाई, त्यून आदि गांव में मनाया जाता है। पहला काहिका देवताओं ने रुमटू सौह में किया और दूसरा रुमसू (नगर) में किया। रुमटू चन्द्र खनी जोत पर है। यही स्थान था जहां से अठारह करडू की टोकरी उड़ी थी। काहिका समाज पर आने वाली विपत्तियों को दूर करने के लिये किया जाता है।

काहिका में देवदार के छोटे वृक्षों से वेदी बनाई जाती है। जिसके बीच नौड़ बैठता है। गूर देऊ खेल भी इसी स्थान पर करता है और नौड़ के चारों ओर चक्कर लगाता है। वेदी में ओखली के रुप में एक पात्र होता है। जिसमें जौ डालते हैं। नौड़ वेदी से चारों ओर जौ फैंकता है। जिसके ऊपर जौ गिरते हैं वह पवित्र हुआ समझा जाता हैं। बच्चों के जादु टोनों के बचाव के लिये मातायें जौ लेतीं हें। यहां सभी गुनाहों का प्रायश्चित भी किया जाता है। जिसे छिद्रा कहते हैं।

शिरढ़ काहिका

शिरढ़ काहिका वास्तव में ही प्रायश्चित का मेला है। नाग साधु के रुप में शिरढ़ आ रहा था कि उसे रास्ते में साथी के रुप में नौड़ मिल गया। दोनों खाने का प्रबन्ध करने लगे। साधु के रुप में नाग स्थानीय ठाकुर के पास आटा मांगने के लिये गया। और नौड़ को नमक आदि पीसने के कार्य में लगा गया। ठाकुरों ने उसे आटा न दिया और उसका अपमान किया जिससे साधू ऊपर हिमरी की ओर गया। वहां बर्षा द्वारा बाढ़ लाया ओर ठाकुर का नाश किया। परन्तु जब वापस आया तो देखा नौड़ भूख से मर गया है। देवता ने अपने आप को इस मृत्यु के लिये अपराधी माना और प्रायश्चित यज्ञ काहिका के रुप में किया।

हर काहिका में नौड़ की मृत्यु की पुनरावृति की जाती है और देवता इस प्रकार की घटना का वर्णन करता है। नौड़ मारने की क्रियाऐं हर स्थान में अलग—अलग हैं। शिरढ़ तथा दरपोईन में तीर चलाया जाता है। भेखली में मन्त्र से मारा जाता है। बशौणा, दयार, हवाई में चरणामृत पिलाकर नौड़ मारा जाता है। नौड़ मरने की परीक्षा कई चुपके से सुई चुभो कर या चुटकी काट कर लेते है। परन्तु नौड़ की मृत्यु को सभी पूर्ण मानते हैं।

अब विशेष प्रकार का बाजा बजाया जाता है। जिसकी धुन पर बाजा बजाने वाले और नौड़ को कन्धा देने वाले गूर तथा पुजारी विशेष नृत्य करते हुए मन्दिर की परिक्रमा करते हैं। देवता का कई बार जयघोष किया जाता है।

प्रायः तीसरी परिक्रमा में नौड़ जी उठता है। जिसे देवी चमत्कार माना जाता है। यदि नौड़ जिन्दा न हो तो उसकी विधवा को यह हक है कि वह देवता में लगा सारा सोना, चांदी लूट ले। नौड़ का जिन्दा न होना देव शक्ति का ह्रास माना जाता है। ऐसे मेलों के कारण लोगों की देवता के प्रति आस्था प्रगाढ़ होती है। जन श्रुति अनुसार एक बार आदि ब्रह्मा खोखन के काहिका में नौड़ की मौत हो गई। गहने ओर धातु नौड़ की पत्नी ले गई और देव रथ नौड़ के साथ जला दिया गया। कई स्थानों पर काहिका घन वाद्य से किया जाता है। घन वाद्य केवल घण्टी बजाना होता है। घन वाद्य से काहिका फुंगनी त्यून में होता है।

शाढ़ी जातर

यह उझी घाटी का एक बड़ा मेला है जो नगर में त्रिपुरा सुन्दरी के मन्दिर के सामने मनाया जाता है। यह मेला ज्येष्ठ मास में मनाया जाता है परन्तु देवी त्रिपुरा सुन्दरी की "सोह" (क्रीड़ा स्थल) शाढ़ी होने के कारण, इसे शाढ़ी जातर कहते हैं। यह मेला सात दिन तक चलता है परन्तु मुख्य रुप में तीन दिन ही होता है। जिस बर्ष शिरढ़ काहिका नहीं होता है उस बर्ष शाढ़ी जातर में बहुत भीड़ होती है। ढलवां भूमि पर अपनी विशिष्ठ वेशभूषा में बैठे दर्शक तथा देव प्रांगन में वाद्य ताल पर झूमते नृत्य करते लोग बडा अनुपम दृश्य प्रस्तुत करते हैं।

पीपल जातर

यह मेला अप्रैल मास के अन्तिम दिनों में ढालपूर के मैदान में मनाया जाता है।बिजली महादेव के 18 विरशु होते हैं। इनमें से एक विरशु यह मेला है।राय ज्ञान सिहं को पार्वती घाटी के पूर्ण अधिकार इस मेले से ठीक पहले मिले परन्तु उसे राजा के स्थान पर राये की उपाधि मिली। इस लिए खुशी मनाने के लिए उन्होनें इस मेले को अपनाया और विशेष रुप से दरबारी वैभव के साथ मेला स्थल तक जाते और बैठते थे। खेल स्टेडियम में एक पीपल का पेड़ था और उसके आगे चबूतरा होता था। चबूतरे पर वह अपने दरबारियों के साथ मेला देखते थे और पीपल के सामने नाटी होती थी। इस लिए मेले को "राये री जाच" कहा जाता है। पीपल के पेड़ से मेला "पीपल" जातर कहलाया। किसी समय इस मेले में 16 देवता भाग लेते थे परन्तु अब केवल एक या दो देवता ही आते हैं। इस मेले के समय ऋतु खुल जाती है। फसलों का कार्य भी नहीं होता है। इसलिये मेले के लिये उपयुक्त समय होता है। इस मेले का व्यापारिक महत्व भी है। लाहुल के लोग सर्दियां कुल्लू गुजार कर लौटने लगते हैं। वे अपनी आवश्यकता की वस्तुएं इस मेला

में खरीदते हैं। कुछ समय से इस मेले को बसन्तोत्सव के रुप में मनाने का प्रयास किया जा रहा हैं जिसमें कई सांस्कृतिक गतिविधियां भी होती हैं।

बूढ़ी दिवाली या दियाड़ी (बाहरी सिराजी)

यह दिवाली प्राचीन काल से कुल्लू क्षेत्र में मनाई जाती है। इस दिवाली का दीपावली से कोई सम्बन्ध नहीं है। यह दीपावली से ठीक एक मास बाद कार्तिक अमावस्या को मनाई जाती है। रात्री को भिन्न दिशाओं से मशालों लिए लोग आते हैं। जिस स्थान पर अग्नि प्रज्जवलित होती है पंहुच कर वे आपस में मशालों के साथ संघर्ष करते हैं। इसको इन्द्र तथा वृतासुर संघर्ष की पुनरावृति भी समझा जाता है। कुछ इसे सहस्र बाहू, परशुराम युद्ध से जोड़ते हैं। अन्य इसे खशों का कोलियों पर विजय संघर्ष की संज्ञा देते हैं। इस युद्ध में कोली और खश ही भाग लेते हैं। इस प्रकार दिवाली बाहरी सिराज में दलाश, खुन निरमण्ड तथा अन्य कई स्थानों में मनाई जाती है। इनमें सबसे अधिक प्रसिद्ध निरमण्ड की दियाली है।

निरमण्ड की बूढ़ी दियाली

यह दलाशनी अखाड़े में मनाई जाती है। पांच बड़े लकड़ियों का अलाव जलाया जाता हैं। ब्राह्मण वाद्य वादन के मध्य अग्नि पूजन करते हैं तथा नाच करते हैं। वे काव के नौ खण्ड गाते हैं। जिनमें रामायण महाभारत की घटनाओं का उल्लेख होता है। खश और कोली भिन्न दिशाओं से मशालें लिये आते हैं। पहले दानव आते है। यह पांच चक्कर लगा हट जाते हैं। गढ़िया के आने पर टकराव होता है। गढ़िया खश जाति के होते हैं। जिनका मुख्य गांव का ठाकुर होता है। गढ़िया तीसरे खण्ड पर प्रवेश करते हैं। इस समय काव का गाना बन्द कर दिया जाता है। फिर एक दूसरे पर जलती मशालों (डांगरियों) से वार करते हैं। दिन के समय अगले दो दिन मेला लगता है। पांडवों ने जब कौरवो पर विजय पाई तो लोगों ने इस प्रकार खुशियां मनाईं। इसमें महाभारत की पुनरावृति की जाती है। पहले दिन युद्ध होता है। दूसरे दिन चक्रव्यूह भेदन अभिमन्यु द्वारा होता है। अन्त में पांडव विजयी होते है। कुछ का विचार है कि वृतासुर ने अग्नि और जल पर अधिकार कर लिया। इसलिये उसे मारा गया। यह मेला उसी की पुनरावृति है।

दयाली पर्व (कुल्लू क्षेत्र)

यह पर्व पोष मास की अमावस्या को आरम्भ होता है। इस पर्व के बाद शर्द ऋतु की तीव्रता का अन्त समझा जाता है। कुल्लू उझी जिला में पहला दीपक जगती पॉट पर जलाया जाता है और पूजन किया जाता है। फिर

उसके पश्चात अन्य क्षेत्रों में यही क्रिया दोहराई जाती है।मनाली क्षेत्र में हिडिम्बा के पूजन से दियाली का आरम्भ होता है।

उस समय श्रद्धालु दोहराते हैं, "जय हिडिम्बा माई, तेरी खेल खेलनी लाई।" अन्य क्षेत्र के ग्राम वासी अपने –अपने देवता सहित बाजे के साथ टोलियों में आते है। जिस घर के आंगन में प्रवेश करते हैं, वह सभी की आवभगत करता है। इनके उपर अखरोटों की वर्षा की जाती है जिन्हें टोली में सम्मिलित व्यक्ति ही उठाते ओर खाते हैं। जहां विवाह या बच्चे का जन्म हुआ होता है वह इस पर्व को विशिष्टता से मनाते हें। उस दिन हर घर में पकवान पकाये जाते है तथा सम्बन्धी और मित्रों को बांटे जाते हैं।

नगर नगेड़

यह उत्सव पोष मास के अमावस्या के चार दिन पश्चात होता है। एक व्यक्ति जिसे जठयाली कहते है, के सिर पर पुराने समय से रखे हुये भेड़ के सींग लगाते हैं। उसे मूसल पर बैठा कर कन्धे पर उठाते हैं और गांव का चक्कर लगाते हैं। उसे भांग का चौरी मुठा करते हैं। जठयाली विदूषक की तरह व्यवहार करता है। यह कार्य देव स्तुति से आरम्भ होता है। जठयाली इस प्रकार के शब्दों का प्रयोग करता है। "हेसू मंगल केसू हाथ। हेसू मंगल राजा हाथ। धातरी हाथ हिरमा हाथ। हेसू मंगल केसू हाथ''। अन्य लोग इसे दोहराते हैं तथा नाचते हैं। इसके पीछे एक कहानी है। यहा एक वाईया राजा हुआ जिसकी रानी कभी हंसती नहीं थी। राजा ने उसे हंसाने के लिये ईनाम रखा। एक वजीर ने रानी के भाई को सींग लगाये और मूसल पर बिठा जलूस निकाला। शोर सुन कर रानी बाहर निकली। भाई को इस रुप में देख कर खूब हंसी। राजा ने हर बर्ष इस प्रकार जलूस निकालने की आज्ञा दी। अगले दिन गूठा (रस्सी) का खेल होता है। रस्से के एक ओर जाणा गांव निवासी "जन्याल" दूसरी ओर नगर गांव निवासी "नागरिक" होते हैं। रस्सा सांप का प्रतीक होता है। जिसका सिर जन्याल पकड़ते हैं और पूंछ नागरिक के हाथों में होती है। दोनों दल रस्सा पकड़े दौड़ते हैं। जो दल नियत स्थान पर पहले पंहुचता है वह जीता हुआ समझा जाता है। इस रस्म की पृष्ठ भूमि इस कथा से मिलती है।

एक बड़ा नाग दैत्य बड़ा गांव नदी पार से आया और उसने स्थानीय लोगों का जीना दूभर कर दिया। लोग तंग आकर जीव नारायण देवता की शरण में गये। देवता ने दोनों गांव के लोगों को इकट्ठे मिलकर दैत्य से लड़ने के लिये कहा। लोगों ने वैसा ही किया और दैत्य मारा गया। यह नाग वृत्रासुर था जिसके मरने की प्रसन्नता मनाई जाती है। ऐसे रस्से का खेल पारशा तथा लरांकेलो में भी किया जाता है। नगेड़ जिन्दौड़ में भी मनाई जाती है।

बन्जार मेला

बन्जार मेला ज्येषठ संक्रांति के दूसरे दिन मनाया जाता है।इसमें श्रृंगा ऋषि तथा इसी क्षेत्र के अन्य देवता सम्मिलित होते है।यह भीतरी सिराज का सबसे बड़ा मेला है जो तीन दिन तक मनाया जाता है। श्रृंगा ऋषि का मन्दिर बागी गांव में हैं। परन्तु मूल आश्रम संकीर्ण टीले पर है।ये विशुद्ध व्यापारिक मेला है।तथा पर्वतीय आंचलों में रहने वाले अपनी आवश्यकता की वस्तुऐं क्रय करके ले जाते हैं। यह स्थान उन्नसवीं शताब्दी के अन्तिम दशक तक उजाड़ था। जहां व्यापारी आकर सामान का क्रय विक्रय करते थे।धीरे–धीरे इस कार्य ने मेले का रुप लिया।फिर यहां बस्ती भी हो गई। यह स्थान कृषि योग्य भी न होने से बंजर कहलाता था और उसी से यहां का नाम बन्जार पड़ा।

भुंडा का त्यौहार

भारत में पहले नर बलि की प्रथा रही होगी। भुंडा को कुछ विद्वान भी नर बलि का त्यौहार मानते हैं। कुल्लू जिला में यह त्यौहार "बला" (भीतरी सिराज) तथा निरमण्ड (बाहरी सिराज) में प्रमुख रुप से मनाया जाता रहा। "बला" जहां मार्कण्डेय ऋषि और बाला सुन्दरी के मन्दिर हैं में भूंडा उत्सव मनाना बन्द कर दिया गया है। निरमण्ड में यह उत्सव अब भी मनाया जाता है। परन्तु मानव के स्थान पर अब बकरे को रस्से पर चढ़ाया जाता है। यह उत्सव हर बारह बर्ष के बाद मनाया जाता था। परन्तु निरमण्ड में भी तीस बर्ष के पश्चात इस उत्सव को मनाया गया। इस मेले में क्षेत्र के नाग देवताओं को छोड़कर शेष सभी देवता सम्मिलित होते हैं। इसमें नाग देवताओं का भाग लेना निशिद्ध है। अधिकतर विद्वान इसे प्रायश्चित यज्ञ मानते हैं। यहां नागों का आधिपत्य था। जिन्हें मारने के पश्चात यह यज्ञ किया गया।

इसकी पृष्ठ भूमि नागों और खशों से जोड़ी जाती है। खशों ने नागों पर विजय पाने के पश्चात इस त्यौहार को विजय उत्सव के रुप में मनाया था। भुण्डा में प्रयोग किये जाने वाले रस्से की आकृति भी नाग के समान होती है। जिसका एक सिरा मोटा तथा दूसरा पूंछ के समान पतला होता है। इस रस्से को खश जाति के विशेष वंश के प्रतिनिधि द्वारा ही बांधा जाता है। नौड़ जो रस्से पर बलि के लिये बैठता था नाग वंश का प्रतिनिधि माना जाता है। कुछ विद्वानों ने भुण्डा को रस्से पर फिसलने का खेल तथा अन्य ने इसका संस्कृत में शाब्दिक अर्थ निकाल खुशी का त्यौहार कहा है। परन्तु भुण्डा के विशेष अनुष्ठान और खतरों को सम्मुख रखते हुये इसे खेल या खुशी का त्यौहार नहीं माना जा सकता है।

निरमण्ड का भुण्डा

इसके लिये एक बर्ष पूर्व तैयारी आरम्भ होती है। छः मास पूर्व रस्सा के लिये विशेष घास मूंज काटनी पड़ती है। इस घास से 500 मीटर रस्सा "बेड़ा" बनाता' है। उसे पृथक कमरे में रखा जाता है। वह केवल एक समय भोजन करता है और एक दिन में सात हाथ रस्सा बनाता हैं।चुहों से रस्से की रक्षा के लिए उसे एक बिल्ली भी दी जाती है।चण्डी मन्दिर में यज्ञ आठ मास होता है। भुंडा के अन्त में एक नाथ का मुंह रंग कर मशालों द्वारा गांव के बाहर भगाया जाता हैं। सम्भवतः कालेश्वर मन्दिर नाथों का होगा जिस पर अब ब्राह्मणों का अधिकार होने से नाथों के निकालने की पुनरावृति होगी। निरमण्ड में भुण्डा बुढा देवता के नाम से किया जाता है। पहले दिन देवता यज्ञ स्थान पर अपने श्रद्धालुओं के साथ आता है। अगले दिन मन्दिरों की शिखा पर पूजा शिखा फेर दी जाती है। विचार है कि इससे नागों की प्रेतात्मायें शान्त होती है। फिर काली की पूजा की जाती है।

तीसरे दिन देवता को भोर होने से पूर्व कुर्पन नदी में स्नान के लिये ले जाया जाता है। रस्सा भी साथ ले जाते हैं। दोनों को नदी में स्नान कराया जाता है। वापसी पर रस्से के एक सिरे को उंचाई पर तथा दूसरे सिरे को नीचे निश्चित स्थानों पर बांध दिया जाता है। एक बजे के पश्चात बेड़ा को देवता की अरगलों पर बैठा कर लाया जाता है। रस्से पर काष्ठ घोड़ी रख कर सूत की डोरियों से बांधी जाती हैं बेड़ा को उस पर बिठा कर घोड़ी को रेत की थेलियों में संतुलित किया जाता है। और घोड़ी की डोरी काट दी जाती है। और वह बेड़ा के साथ तेजी से सरकती है। बेड़ा रस्से के दूसरे सिरे तक यदि पंहुच जाता तो यह जिस व्यक्ति की वस्तु को छुये उसे वह देनी पड़ती थी। यदि बेड़ा मर जाता तो उसका दाह संस्कार धूमधाम से किया जाता था। उसकी पत्नी को देवता की ओर से जमीन तथा धन निर्वाह के लिये दिया जाता था। जीवित बेड़ा को भी बड़ी धूमधाम से मेला स्थल को ले जाया जाता था। अब बेड़ा के स्थान पर बकरा काष्ठ घोड़ी पर बिठाया जाता है। चौथे दिन रंगोली सजाई जाती है। जहां पर परशुराम की पालकी लाई जाती हैं और भुण्डा समाप्ति की घोषणा की जाती है। अन्य सभी देवता उस मण्डप में प्रवेश कर अपने अपने स्थानों को लौट जाते हैं। मेला समाप्त हो जाता हैं। 1856 ई. में भुण्डा में बेड़ा की मृत्यु हो गई थी। उस समय के पश्चात बेड़ा पर बकरा चढ़ाया जाने लगा। अन्तिम भुण्डा 12 सितम्बर 1981 में मनाया गया था।

कुल्लू दशहरा

जिला में दशहरा ठाउवा (नगर) हरिपुर, वशिष्ठ, मणीकर्ण तथा कुल्लू (ढालपुर) में होता है। ठाउवा में एक दिन, हरिपुर में पांच दिन, मणीकर्ण और कुल्लू में सात–सात दिन का उत्सव होता है। वशिष्ठ के अतिरिक्त शेष सभी स्थानों पर रथ यात्रा भी निकाली जाती है। सतारहवीं शताब्दी में कुल्लू में वैष्णव मत का चलन हुआ। राजा की ओर से सभी वैष्णव उत्सव मनाये जाने लगे जिन में दशहरा प्रमुख है।वैष्णव मत के राजधर्म बनने और राम मूर्ति कुल्लू पंहुचने का वृतान्त राजा जगत सिंह के अधीन वर्णित है।

मूर्ति जुलाई 1651 ई. को मकराहड़ राजभवन पंहुची। मूर्ति के स्वागत में बड़ा उत्सव तथा यज्ञ किया गया। पहला दशहरा भी वहीं किया गया। नदी के पार लग राज्य था। इसलिये मकराहड़ सुरक्षित नहीं समझा गया। 1653 ई. में मूर्ति मणीकर्ण लाई गई और अर्धनारीश्वर शिव मन्दिर में रखी गई। 1660 ई. में मूर्ति कुल्लू में लाई गई। राम मूर्ति के साथ सीता तथा हनुमान की मूर्तियां भी लाई गई थी। उसी बर्ष से दशहरा वर्तमान रुप से मनाया जाने लगा। मन्दिर का निर्माण किया गया जिस के लिये नादौन से मिस्त्री विशेष रुप से बुलाया गया।

दशहरा की परम्परायें

कुल्लू दशहरा में शेष भारत की तरह न राम लीला दिखाई जाती है और न ही रावण, कुम्भकरण तथा मेघनाथ के पुतले जलाये जाते हैं। उत्सव अश्विन मास की शुक्ल दशमी को आरम्भ होता है जबकि सारे भारत में उस दिन यह समाप्त हो जाता है।ब्रह्मा, नारद, दरवासा, बिजली महादेव तथा गोहरी देवता प्रथम नवरात्रा को दशहरा के लिए आते हैं।

देवी हडिम्बा (मनाली) राजकुल की देवी के आगमन से कुल्लू दशहरा आरम्भ होता है। देवी का स्वागत राजा का प्रतिनिधि शहर के बाहर रामशिला में करता है। देवाधिदेव राम के अभिवादन के पश्चात हिडिम्बा राजभवन में ठहरती है जहां उसकी उपस्थिति में राजा शस्त्र पूजा करता है। उसके पश्चात रघुनाथ मन्दिर में नार सिंह का घोड़ा सजाया जाता है और राजा अश्व पूजा करता है। अब शोभा यात्रा की तैयारी की जाती है तथा राम मूर्ति को पालकी में सजाया जाता है। हिडिम्बा के आने पर राजमहल के सदस्य बाहर जाते है। यह हिडिम्बा का राजभवन पर अधिकार माना जाता है।गूर द्वारा उन्हें आमन्त्रित करने पर राजभवन उन्हें फिर सौंप दिया जाता है।राजा को रघुनाथ मन्दिर की ओर से बग्गा, राज परिवार को फरगल और सेवकों को फगु दिया जाता है।

रथों में सजे देवता सभी अंचलों से अपने श्रद्धालुओं के साथ आते हैं। रघुनाथ जी को अभिवादन कर राजा को आर्शीवाद दे, ढालपुर जाते हैं। दो देवता आमने सामने होने पर एक दूसरे के प्रति आदर बताते हैं तथा मिलते हैं। यह दृश्य अति रोंमाचकारी होता है।

शोभा तथा रथ यात्रायें

हिडिम्बा, जमदग्नि ऋषि, त्रिपुरा सुन्दरी, बिजली महादेव ढालपुर रघुनाथ जी के साथ जाते हैं। तीन बजे शोभा यात्रा आरम्भ होती है। सबसे आगे नेर सिंह का घोड़ा फिर कई प्रकार के वाद्य यन्त्रों की टोलियां रघुनाथ जी की पालकी, राजा की पालकी जिसमें राजगुरु किशन दास जी की खड़ाओं और मृगछाला होती है, देवता के रथ तथा श्रद्धालुओं की लम्बी पंक्ति बड़ा भव्य दृश्य प्रस्तुत करती हैं। लगभग 1.5 घण्टे में शोभा यात्रा ढालपुर पंहुचती है। जहां बारह पहियों का रथ सजा होता है। मूर्ति का रथ आरोहण करा पूजा की जाती है। सभी देवता तथा हजारों श्रद्धालु उस समय उपस्थित होतें हैं। दो रस्सों की सहायता से श्रद्धालू रथ को खींच कर उसे शिविर तक ले जाते हैं। जहां मूर्ति छः दिन तक रखी जाती है।राजा भी दशहरा के दिनों में ढालपुर में अपने शिविर में प्रवास करता है। रघुनाथ शिविर में दो समय आरती, रात को चन्द्रौली नृत्य, राम कीर्तन आदि होते रहते हैं। कई बार यहां जगती पुछ के लिये देवता भी इकट्ठा होते हैं। छठे दिन देवता दरबार (मुहल्ला) होता है। प्रातः कन्या पूजन तथा लंका के दिन दी जाने वाली बलियों के पशुओं का भी पूजन किया जाता है। मुहल्ले के दिन देवी वांठड़ा होता है।

लंका विजय तथा दशहरा समाप्ति

देवी की आरती उतार उसे उस खड्ग का स्पर्श कराया जाता है जिससे बलि दी जाती है। अन्तिम दिन राम मूर्ति को फिर आरोहण कराया जाता है और रथ को ढालपुर के अन्तिम छोर तक खींच कर ले जाते हैं। यह लंका विजय की पुनरावृति है। रथ के आगे हिडिम्बा होती है जिसे पांच पशुओं की बलियां (भैंसा, सुअर, मछली, मुर्गा तथा केंकड़ा) सार्वजनिक रुप से दी जाती है। बलियां लेकर हिडिम्बा तुरन्त लौट जाती है। भैंसा का सिर हिडिम्बा को दिया जाता है तथा रात कटराईं बिताती है। नदी व्यास के किनारे काटों के ढेर को आग लगा लंका दहन भी किया जाता है। जिनमें तीन किलटों पर सिर (खेपरे) लगा रावण, कुम्भकरण, मेघनाथ के प्रतीक बनाये जाते हैं। रावण का सिर निकालने में लोगों की होड़ लगी रहती है। जो व्यक्ति सिर लाकर राजा को प्रस्तुत करता है उसे दो रूपये दिये जाते हैं। यह प्रथा

सतारहवीं सदी से चली आ रही है। रावण का खेपरा आने पर ही सीता जी की मूर्ति रथ में रखी जाती है।

वापसी रथ मूल स्थान पर लाया जाता है। इस में अब सीता जी की मूर्ति भी साथ रखी जाती है। वहां से शोभा यात्रा द्वारा मन्दिर में राम सीता मूर्तियां लाई जाती हैं। मन्दिर में कमलासन पर रघुनाथ जी को बिठाया जाता है। आरती के पश्चात भोग लगाया जाता है। उनके विश्राम के साथ दशहरा समाप्त होता है। दशहरा से फागली तक कुल्लू में कोई भी मेला नहीं होता। ढालपुर में देवताओं के बैठने के स्थान निश्चित हैं।मलाणा के जमलू, अजिमल, सिंहमल, जीवनारायण, सौर नाग, शुक्कीनाग तंदला, देऊ री डोभी में बैठते हैं। तथा इनके चिन्ह ही आते हैं। ये नदी पार नहीं करते।

दशहरा में विशेष भूमिकायें

दशहरा में निभाई जाने वाली सभी रस्मों में बिजली महादेव तथा हिडिम्बा की उपस्थिति आवश्यक है। वैष्णव मत के आने से पूर्व शैव मत तथा शाकत मत का इस क्षेत्र में प्रभाव था। वैष्णव मत के प्रति विरोध उपजने से पूर्व ही उनके अनुयायियों का तुष्टीकरण कर दिया गया। बिजली महादेव शैव मत का तथा हिडिम्बा शाक्त मत का प्रतिनिधित्व करते हैं।

दैणीधार, हिलैणी, बन्दल तथा सियोगी गांव के लोग दशहरा में रथ के लिये रस्सा तैयार करते, मुरम्मत करते, तथा सात दिन रघुनाथ जी के शिविर में कार्य निभाते थे।जिसके लिये उन्हें राजा की ओर से मुआफियां मिली थी। दैणीधार के निवासी अब भी यह कार्य निभाते हैं। शेष गांव के लोग भूमि नियमों के कारण अब भू स्वामी बन जाने पर कार्य निभाना छोड़ गये हैं। खणी पांधे के लोग लंका दहन के लिये कांटे तथा रावण आदि के बुतों के लिये किलटे तथा मिट्टी के सिर (खेपरे) लाते हैं। रावण का सिर लाने का कार्य सारी के लोग ही करते हैं।

दशहरा मनाने की आवश्यकता तथा लोकप्रियता के कारण

वैष्णव धर्म को सर्व धर्म प्रधान बनाने के लिये ऐसे उत्सव की आवश्यकता थी जिसमें सभी कुल्लू क्षेत्र के देवता रघुनाथ जी को देवाधिदेव मानते। इस के लिए दशहरा उपयुक्त उत्सव था।कुल्लू निवासी स्वभाव से ही मेलों के शौकीन है।दशहरा की शोभा यात्रा, रथ का दृश्य तथा इस अवधि में होने वाले तमाशों ने उन्हें अनायास ही आकर्षित किया। ग्राम देवता ग्रामीण जीवन का केन्द्र बिन्दु होता है। देवताओं को राजाओं से मुआफिआ मिली

जिनका लाभ गांव वाले उठाते रहे। राज आज्ञा मिलते ही सभी उत्सव में सम्मिलित होने लगे।

कुल्लू के एक ओर तिब्बत, समरकन्द, लद्दाख, यारकन्द, लाहुल तथा स्पिति से जुड़े होने और दूसरी ओर मैदानों से जुड़ा होने के कारण दशहरा व्यापारिक मेला में बदल गया। दूर-दूर से लोग इसमें आकर सम्मिलित होने लगे। राजा मान सिंह के समय यह व्यापारिक मेला बना। कुल्लू दशहरा ऐसे समय होता है। जब ऋतु न अधिक ठण्डी न अधिक गर्म होती है। बर्ष के ये अन्तिम सुखद दिन होते हैं। बर्षा इन दिनों इस क्षेत्र में नहीं होती है और चांदनी रातें होती है। सभी स्थानों में दशहरा समाप्त होने से सभी दर्शक और व्यापारी मैदानों से आ सकते हैं। ऊंचे स्थानों में अभी फसल नहीं होती। सभी दर्रे (जोत) खुले होते हैं। लाहुल तथा ऊंचे स्थानों के लोग भी आ सकते हैं।

दशहरा में व्यावधान

दशहरा में पहले पांच दिन दोपहर के बाद राजा की शोभा यात्रा निकलती है जिसका परम्परागत रास्ता कला केन्द्र के मध्य से हो कर जाता है। 1971 ई. में इस रास्ता के रोके जाने से बड़ा विवाद हो गया। पुलिस की गोली से एक व्यक्ति मारा गया। इस कारण 1972 तथा 1973 ई. में मूर्ति रघुनाथ जी की ढालपुर न लाई गई। दशहरा की रौनक समाप्त होने लगी। 1974 ई. में समझौता हो जाने पर दशहरा परम्परागत ढंग से फिर मनाया जाने लगा। रास्ते का अधिकार यथा पूर्व रखा गया।1848 ई. में कुल्लू का राज्य शांगरी तथा रूपी घरानों मे बंट जाने से भी दशहरा नहीं हुआ था।

दशहरा अब और तब

एक समय था जब दशहरा में मलाणा का जमलू कमांद के पराशर ऋषि के अतिरिक्त सभी देवता आते थे। भेखली देवी अपने मन्दिर से कुछ दूरी तक आती है। जहां से ढालपुर दिखाई देता है और रघुनाथ जी के लिये केसर कटोरी भेजती है। 2005 ई. में 194 देवता दशहरा में सम्मिलित हुए।

बीस पच्चीस देवता सरवरी के किनारे बैठते थे। कुछ डोभी (खराहल) तक अठारह करडू की सोह तक आते हैं जहां राजा रुपी जाकर पूजा करता था। 1935 ई. तक मुहल्ले के दिन सभी देवताओं की उपस्थिति अनिवार्य थी। एक समय था जब तेल मिट्टी के दीपक हर स्थान पर टिमटिमाते थे। राजा के यहां भी तेल मिट्टी की पीतल की मशालें होती थीं। जिसमें बार-बार तेल डालना पड़ता था। बाद में पैट्रोमैक्स (गैस) आये जिससे कहीं कहीं रोशनी की जाती थी। अब मेला मैदान बिजली के बल्बों से जगमगाता है।

आजकल कलाकेन्द्र सांस्कृतिक गतिविधियों के कारण दशहरा में मुख्य आकर्षण बन जाता है। हजारों दर्शक वहां बैठे देश विदेश के नृत्य तथा मनोरंजक कार्यक्रम देखते हैं। परन्तु पहले रघुनाथ मन्दिर में रास लीला होती थी तथा चन्द्राउली नाचती थी। यह कार्यक्रम अयोध्या के आये चोबे के अधीन होता था। राजा कुल्लू तथा शांगरी के शिविरों में दिन में नाटियां तथा देवता दरबार तथा रात्री को रास लीला होती थी। होरण (हिरण) नचाया जाता था। लोग अपने अपने डेरों के साथ नाचा करते थे। लड़कियां लाहलड़ी नाच करती थी। अब खेलों में मुक्केबाजी, वालीबाल इत्यादि होते हैं। तब रस्सा कशी, कबड्डी तथा पोलो खेल हुआ करते थे। दौड़ भी हुआ करती थी। अब पशु मण्डी ढालपुर के अन्तिम छोर में लगती है। पहले नदी के किनार लगती थी। अब एक जैसी चीजों की दुकानों के बाजार बनाए जाते है। पहले जिसका जहां दिल करता दुकान लगा लेता था। जिस पर कोई टैक्स न होता था। गांव के लोग पट्टू, पटिटयां, अखरोट, जड़ी बूटियां बेचने को लाते थे। यारकन्द आदि से घोड़े गुदमें कालीन सोना चांदी तथा निमदें बिकने के लिये आते थे। लाहुल के लोग ऊन तथा पश्म भी बेचने के लिये लाते थे और घोड़े किलटे सूप छाननी लोहे का सामान तथा अन्य जरुरत की वस्तुएं खरीद कर ले जाते थे।

मेलों का प्रबन्ध तथा सरकार द्वारा सहायता

1920 से 1966ई तक मेले का प्रबन्ध जिला बोर्ड कांगड़ा करता रहा, अब नगरपालिका करती है। 5000 रुपये अनुदान दशहरा के लिये 1966 से पूर्व मिलता था। 1997 में देवताओं का नजराना 15 प्रतिशत बढ़ाया गया। अब देवताओं को मन्दिर से चलने तथा वापस लौटने तक के लिये परिश्रमिक दिया जाता हैं। 2004 ई. में कुल व्यय 1471700/– रूपये था। 1966ई में यह मेला राज्य स्तरीय तथा 1970 ई में अन्तर राष्ट्रीय घोषित किया गया।

37. मन्दिर-देवता-मूतियां और रथ

वास्तुकला की दृष्टि से कुल्लू में मन्दिरों की दो शैलियां है।

1. शिखर शैली 2. खश शैली

शिखर शैली के मन्दिर

शिखर शैली के कुल मन्दिर कुल्लू में 19 के लगभग हैं। इस शैली के मन्दिर नीचे से चौकोर तथा उपर से गुबन्द का रुप धारण कर लेते है। शिखर गोलाकार पत्थरों से बना होता है जिस पर बेल बूटों, अप्सराओं, नर्तकियों मानव या देव आकृतियां बनी होती हैं हर आकृति को योजना बद्ध तरीके से स्थान दिया गया होता है। झण्डा लगाने के लिये विशेष छिद्र वाले पत्थर रखे जाते हैं। कुल्लू के शिखर शैली के मन्दिरों में प्राय: मण्डप नहीं बनाये गये हैं। प्रवेश द्वार पर गंगा यमुना की आकृतियां बनी हुई हैं।

शिखर शैली के प्रमुख मन्दिर इस प्रकार हैं:—

1.	विश्वेश्वर महादेव	बजौरा
2.	मुरलीधर मन्दिर	ठावा(नगर)
3.	गौरी शंकर मन्दिर	जगतसुख
4.	मुरलीधर मन्दिर	सरसेई
5.	राम मन्दिर	मणीकर्ण
6.	रघुनाथ मन्दिर	मणीकर्ण
7.	गौरी शंकर मन्दिर	दशाल
8.	गौरी शंकर मन्दिर	नगर
9.	शिव मन्दिर	सजला
10.	चतुर्भज मन्दिर	नगर
11.	रघुनाथ मन्दिर	कुल्लू
12.	राम मन्दिर	वशिष्ठ
13.	शिव मन्दिर	निरमण्ड
14.	दोचा मोचा मन्दिर	हरिपुर
15.	चण्डी मन्दिर	निरमण्ड
16.	शिव मन्दिर	बेहना
17.	मुरलीधर मन्दिर	सुलतानपुर
18.	लक्ष्मीनारायण मन्दिर	नगर
19.	विष्णु मन्दिर	नगर
20.	सालिग्राम मन्दिर	कराड़सु
21.	सीता राम मन्दिर	सेऊबाग

खश शैली के मन्दिर

खश शैली के मन्दिर तीन श्रेणियों में बांटे जा सकते हैं :

1. ढलवां छत शैली
2. मेरु पैगोडा शैली
3. ढलवां मेरु संयोजन छत शैली

ये सभी मन्दिर नीचे से समान आयताकार या चौकोर होते हैं। परन्तु इनके छप्पर भिन्न–भिन्न शैलियों के होते हैं। सभी मन्दिरों के आगे खुला स्थान होता है। जहां देवताओं के मेले लगते हैं। दीवारें लकड़ी या पत्थर से बनाई जाती हैं। जिन पर लिपाई तथा पुताई की जाती हैं। कुछ काठ–कूणी मन्दिर है। ढलवां छत शैली के मन्दिरों में बीच में शिखर होता है। छते वायें तथा दायें तरफ ढलवां होती हैं। गर्भगृह के चारों ओर कहीं ब्रामदा भी होता है। जिसे बैठने तथा परिक्रमा के लिये प्रयोग करते हैं। कुल्लू के अधिकतर मन्दिर इसी शैली के हैं। चुगेरसी देवी मन्दिर (दुर्गा) चौंग चार ढलवां छत का मन्दिर है। शेष साधारण एक छत वाले मन्दिर है। छतों पर स्लेट या लकड़ी के फलक प्रयोग किये गयें हैं।

मैरू (पैगोडा) शैली के मन्दिर

इस शैली के मन्दिरों के उपर कई छतें होती हैं। सबसे नीचे की छत बड़ी उसके बाद की छत नीचे की छत से छोटी होती जाती है। अन्तिम छत छतरी के आकार की होती है। छतें पत्थर, स्लेट या लकड़ी की बनी होती है।

कुल्लू के पैगोडा शैली के ये मन्दिर है:–

1.	आदि ब्रह्मा मन्दिर खोखन	चार छत
2.	त्रिजुगी नारायण मन्दिर दयार	तीन छत
3.	मनु मन्दिर (शैंशर) सैंज	पांच छत
4.	त्रिपुरा सुन्दरी मन्दिर नगर	तीन छत
5.	केशियोल मन्दिर अरसु	तीन छत
6.	हडिम्बा मन्दिर मनाली	चार छत
7.	वीरनाथ मन्दिर हुरला	तीन छत
8.	पराशर ऋषि मन्दिर कमांद	तीन छत

ढलवां मैरू संयोजन छत मन्दिर

इस शैली में छत ढलवां होती हैं। परन्तु शिखर के मध्य या किनारे पर एक छोटा सा मैरु या पैगोडा बना होता है। इसका उदाहरण हमें धनेश्वरी देवी मन्दिर नीथर (बाहरी सिराज) में मिलता है।

कुछ विशिष्ठ मन्दिर

विशवेश्वर मन्दिर : बजौरा

कुल्लू क्षेत्र में यह शिखर शैली का सबसे बड़ा मन्दिर है। ऐसा विचार है कि यह नौवीं शताब्दी में बनाया गया है। जिसका पुर्ननिर्माण 1673 ई. में मण्डी के राजा श्याम सेन ने कराया। इसके बारे मन्दिर के द्वार पर टांकरी में शिल्प लेख है। इसमें वर्गाकार तराशे हुये पत्थर लगाये गये हैं। मन्दिर का द्वार पूर्व की ओर खुलता है। जिसके भीतर लिंग स्थापित है। इसके आगे कोई मण्डप नहीं है। प्रवेश द्वार पर गंगा यमुना तथा बेल बूटें बने हैं। बाहरी परिधि में पश्चिम में विष्णु, दक्षिण में गणेश, उत्तर में दुर्गा की मूर्तियां हैं। गणेश की मूर्ति सबसे सुन्दर हैं। मूर्तियां कुछ विकृत हो गईं हैं। हेचिसन तथा बोगल के अनुसार इन्हें हानि राजा घमण्ड चन्द कांगड़ा के रुहेल सैनिकों ने पंहुचाई थी। परन्तु स्थानीय लोग देख रेख के अभाव में बच्चों द्वारा तोड़ फोड़ विकृति का कारण बताते हैं। अब मन्दिर पुरातत्व विभाग के अधीन है। शिव लिंग भी खण्डित हो चुका है। ऐसा अनुमान है कि शंकराचार्य की पंचदेवोपासना पद्धति अधीन इस मन्दिर का निर्माण किया गया है। पंच देव पद्धति में पांच देवताओं को एक ही स्थान पर रख कर पूजा जाता है।

मनु महाराज मन्दिर मनाली

यह मन्दिर मनाली शहर से 1.5 कि.मी. की दूरी पर है। मनु महाराज की मूर्ति धौनी चौनी नाम के व्यक्ति के आंगन में दबी मिली। मूल मन्दिर वहीं बनाया गया। इसके चारों ओर नई शैली का मन्दिर बनाया गया है।

ढुंगरी मन्दिर मनाली

यह मेरु शैली का चार छत वाला मन्दिर है। ऊंचाई 80 फीट है। इसे 1553 ई. में राजा बहादुर सिंह ने बनाया था। यह देवी हडिम्बा का मन्दिर है। ऐसी धारण है कि इस स्थान में देवी हडिम्बा ने तप किया था। राक्षस कुल में जन्मी देवी हडिम्बा महान नारी थी। अपनी दिव्यता के कारण कुल्लू घाटी में दुर्गा या काली के रुप में पूजी जाती है। कुल्लू राजकुल की वंश देवी है।

मन्दिर में प्रवेश के लिये चार खम्बों पर टिका बराम्दा है। शेष तीन ओर पांच–पांच खम्बे हैं। द्वार और खम्बों पर ब्रह्मा, विष्णु, महेश, काली, दुर्गा, गणेश, अप्सराओं, गन्धर्व, पक्षी तथा पशु खुदे हैं। प्रवेश द्वार के बाईं ओर चरण युगल है। जहां दीपक जलता रहता हैं मन्दिर के अन्दर दुर्गा की 60 से. मी. पत्थर की मूर्ति है। देवी चरण 10 से. मी. हैं। ढुंगरी जाच ज्येष्ठ

संक्रांति को होती है। मन्दिर के अन्दर शिला है। शिला को ही ढुंगर कहा जाता है। इसी लिये इसे ढुंगरी मन्दिर कहा जाता है।

गौरी शंकर मन्दिर दशाल

शिखर शैली का मन्दिर है। जिसका निर्माण नवीं शताब्दी में हुआ है। यह बजौरा के मन्दिर से छोटा है। प्रवेश द्वार पर गंगा यमुना के चित्र बनें हैं। बाहर का भाग कलात्मक है। बीच में गौरी शंकर की मूर्ति स्थापित है।

पराशर ऋषि मन्दिर कमांद

शिखर शैली का मन्दिर है। ऊंची पहाड़ी पर स्थित है। इस मन्दिर पर काष्ठ कला भी अद्‌भुत है। जनश्रृति अनुसार इस मन्दिर को एक कारीगर ने बारह बर्ष की आयु में बनाना आरम्भ किया और बूढ़े होने तक इसे बनाता रहा। पराशर ऋषि का रथ करण्डू शैली का है। यहां उत्सव माघ के दस से सोलह प्रविष्टे तक होता है। पहली रात को गूर द्वारा देऊ खेल की जाती है। रात जागरण श्रद्धालुओं द्वारा किया जाता हैं तथा नाटी होती है। अगले दिन से मेला लगता है। फिर भण्डारा किया जाता है। वैशाखी पर्व पर भी यहां मेला लगता है।

संध्यादेवी मन्दिर जगतसुख

यह खश शैली का मन्दिर है। इसका निर्माण राजा उर्धन पाल ने कराया था। अनुमान है कि इसका पुर्ननिर्माण 1428 ई. में हुआ। उससे पूर्व यह वल्लभी शैली का मन्दिर था। अभी भी प्रवेश द्वार प्राचीन शैली का है। जिसमें गणेश की मूर्ति भी है। जो कला की दृष्टि से विशेष महत्व रखती है। यह मन्दिर मूल रूप में द्राविड़ शैली से प्रभावित था। इसका मूल जंघा भाग ही शेष हैं। इसका तीसरी बार निर्माण 19वीं शताब्दी में हुआ। चारों ओर प्रदक्षिणा पथ हैं। दीवारों पर भी देवी देवताओं की मूर्तियां है। काष्ठ कला भी उत्तम है। प्रवेश द्वार के ऊपर गणेश की मूर्ति बनी है। अन्दर संध्या देवी की पंचमुख, एक चतुर्भज मूर्ति और एक महर्षि मूर्ति है।

निरमण्ड के मन्दिर

परशुराम मन्दिर निरमण्ड

यह मन्दिर दुर्ग के समान हैं। भीतर परशुराम की त्रिमुखी मूर्ति है। दो मुख चांदी के ओर एक सोने का है। एक माथे पर हीरे की तीसरी आंख लगी है। पास फर्शा मुंदड़ी इत्यादि रखें हैं। मन्दिर में कई कमरें हैं। जिनमें राजाओं और ठाकुरों द्वारा दी गई मूर्तियां और भुण्डा का सामान है। मूर्ति को कशमीर

की रानी आग्रतला ने ईसा से नौ सौ बर्ष पूर्व भेंट किया था। ऊंचाई 60 सै. मी. चौड़ाई 45 सै. मी. है। शरीर पर चांदी मढ़ी हुई है। आकृति बैठे पुरुष की है। परशुराम कोठी में एक गुफा है। इस गुफा में परशुराम समाधि लगाते थे।

अम्बिका देवी मन्दिर

माता का वध करने के पश्चात परशुराम ने नरमेध यज्ञ किया और पिता के आर्शीवाद से वह सिर फिर जुड़ गया। माता की स्मृति मे परशुराम ने तब अम्बिका मन्दिर की स्थापना की। प्रवेश द्वार पर दो भिड़े हुये पशुओं की पत्थर की आकृतियां बड़ी कलात्मक है। मंडी राजा उग्रसैन की रानी ने स्वास्थ्य लाभ पर वहां हार भेंट किया था तथा मन्दिर की दशा सुधारी थी। स्पिति के राजा समर सेन की पत्नी ने राजा की जीत पर एक ताम्र पत्र और हार यहां भेंट किया था। इस मन्दिर के ऊपर ताम्बे की चादरें लगी है। जिन्हें खनेरटू के राणा ने भेंट किया है। मन्दिर में मां अम्बिका की 3/4 मीटर की मूर्ति है। सामने शेरों की जोड़ी है। ताम्रपत्र 32 गुना 20 सैं. मी. का है।

अन्य मन्दिर

अम्बिका मन्दिर की स्थापना के पश्चात बड़ा यज्ञ हुआ जिसके लिये विद्वान ब्राह्मण काशी अयोध्या काश्मीर तथा शिवकाशी से लाये गये। ये ब्राह्मण पृथक पृथक मुहल्लों में रहे। जहां इन्होंने अपने इष्ट देवों के मन्दिर बनाये। ये मन्दिर हैं जाहर पीर मन्दिर, दरवेश्वर मन्दिर (शिव) सत्य नारायण मन्दिर, चण्डी मन्दिर तथा शिवालय। ये सभी मन्दिर दर्शनीय हैं। इनमें से कुछ की अवस्था जीर्ण है।

जगती पौट

जगती का अर्थ समस्त देवताओं का सांझा स्थान है। जगती पट अठारह करडू का केन्द्रीय स्थान माना जाता है। यह नगर दुर्ग परिसर में स्थित है। यहां पर एक 8गुना 5 फीट गुना 6ईंच घनाभ पत्थर है। यहां की पुछ (प्रश्नोतरी) सबसे बड़ी पुछ कहलाती है। विपत्ति के समय देवता यहां इकट्ठे होते हैं। जन कल्याण तथा विपत्ति निवारण के बारे कार्य करते है। अपने को निर्दोष सिद्ध करने के लिये यहां के लोगों द्वारा शपथ भी ली जाती है। दन्त कथा अनुसार देवताओं ने नगर में अपना निवास स्थान बनाने का निर्णय लिया। उन्होंने अपने को मधु मक्खियों में परिवर्तित किया और देऊ टिब्बा से एक शिला को काट कर उड़ते हुये द्राम ढांक से यहां लाये और स्थापित की। अन्य जन श्रुति अनुसार यह शिला द्राम ढांक भृगुतुंग से लाई गई है। भृगुतुंग के नीचे बाहंग की ओर द्राम ढांक है। पहले यह शिला देऊ

टिब्बा पर थी जो देवताओं का स्थान था। कुछ विद्वानों का विचार था कि जोगनियों ने यह शिला लाई थी। ग्राम राज्य के पश्चात गण राज्य स्थापित हुआ तो इसे मुख्य स्थान बनाया गया। जगती पट का मन्दिर 1.5.99 को बन कर तैयार हुआ। इस पर की गई लकड़ी की खुदाई अति सुन्दर है। जगती पॉट पर निर्णय हिडिम्बा देवी, पंचवीर तथा कारदारों की उपस्थिति में पांसें फैंक कर किया जाता है।

कुल्लू में पूज्य देवता

कुल्लू के देवताओं का अध्ययन करने पर इस निर्णय पर आसानी से पंहुचा जा सकता है कि इस क्षेत्र में पहले शिव तथा शक्ति की पूजा होती थी। देवियों में यहां भागा सिद्ध, काली चामुण्डा, त्रिपुरा सुन्दरी, भोटन्ती (तारा), कोटली, दोचा–मोचा, हडिम्बा, शब्बरी, संध्या, भुवनेश्वरी, जगन्नाथी तथा अम्बिका पूजी जाती हैं। इनके मन्दिर स्थान तथा रथ हैं। शिव के भी मन्दिर स्थान तथा रथ हैं। शिव को महादेव या महादेऊ कहा जाता है। यह देवता वराण, रोट, पलाईच, सियाल, लरां, छाकी, बड़ाग्रां बनौन, जुआणी, मथाण, शमशर, दलाश आदि स्थानों में है।

इनके अतिरिक्त ऋषि, राजवंश के विशिष्ठ व्यक्ति, पौराणिक देवता तथा स्थानीय देवता इस क्षेत्र में पूजे जाते हैं। कुल्लू क्षेत्र में पूजे जाने वाले पौराणिक देवता है:– लक्ष्मी, विष्णू, शिव, पार्वती, ब्रह्मा आदि हैं।

ऋषियों में मनु, जमदग्नि, वशिष्ठ, व्यास, पराशर, लोमश, शुकदेव, परशुराम, मार्कण्डय, शांडिल, कार्तिक स्वामी, धोम्य, कपिल मुनि, श्रृंगी, दुर्वासा, नारद, गौतम, गर्ग ऋषि आदि हैं। राजवंशों से राम कृष्ण आदि हैं।

स्थानीय देवताओं में कुछ विद्वानों का विचार है कि ये कुल देवता थे जो बाद में ग्राम देवता के रुप में पूजे जाने लगे। कुछ का विचार है कि ये गण मुख्य योद्धा, वीर, ठाकुर, प्रतिष्ठित पुरुष थे जो ग्राम देवता के रूप में पूजे जाने लगे। सभी नारायण देवता विष्णु रुप है।

नाग तथा उनके मन्दिर

नाग पूजा खश संस्कृति की देन है। यहां नागों के कई मन्दिर हैं। नागों की मूर्तियां हैं। नाग पुरुष रथ में स्थापित किये गये हैं। ये सभी बासुकी नाग के पुत्र माने गये हें। एक दन्त कथा के अनुसार इन सभी नागों की उत्पति गोशाल में हुई। वासुकी नाग ने मानव का रुप धारण कर लोगों को एक राक्षस से मुक्ति दिलाई और स्थानीय स्त्री सुनैना से विवाह किया। जिससे अठारह नाग उत्पन्न हुये जिन्हें भांदल (बड़े घड़े) में रखा गया। इन नागों की माता

प्रतिदिन पूजा करती थी। एक दिन माता के स्थान पर अन्य स्त्री ने पूजा की। सांपों को देख स्त्री घबराई और उससे आग घड़े में गिर गई। जिससे नाग भागे और भिन्न भिन्न स्थानों में स्थापित हुये। आग से धुमल का मुंह जल गया। वह भाग कर बड़ा गढ़ चला गया। फाहल नाग का बाजू जल गया वह प्रीणी चला गया। सिरघन नाग के सिर पर घाव हुआ। गोशाली नाग की एक आंख चली गई। शिरढ़ और हरकण्ढी के नाग काले हो गये। काले नाग की डेहरी सोलंग में है जो जीर्ण शीर्ण अवस्था में हैं। नागों के मन्दिर प्रायः जल के निकट हैं। भांदल अभी तक गोशाल में लाउची परिवार के पास है और सामान्य घड़ों से बहुत बड़ा है। इसे 'कार्मा' कुम्हार ने बनाया था। कुल्लू में नाग और उनके स्थान इस प्रकार हैं:—

1.	शिरघनी नाग	भनारा
2.	फाहल नाग	प्रीणी
3.	काना नाग	गोशाल
4.	काली नाग	शिरढ़
5.	पियुंला नाग	बटाहर
6.	धुमल नाग	हलाण (कटराई)
7.	बाहुड़ नाग	नगर
8.	भलोगी नाग	भलोगी
9.	कूमर नाग	व्यासर
10.	टकरासी नाग	टकरासी (सिराज)
11.	कुई कण्ढा नाग	सिरीगढ़
12.	शंखुनाग	रुपा (सिराज)
13.	चमांडू नाग	भूंगा
14.	शरशाई नाग	शरशा
15.	बालू नाग	बालू
16.	पुनन नाग	पुनन
17.	सागु नाग	सागु खौल (रोहतांग)
18.	मांहरा नाग	काईस
19.	रामणु नाग	राऊगी
20.	सरगण नाग	सौर
21.	शुकली नाग	तंदला

ऐसा अनुमान है कि नाग वास्तव में सांप न थे। ये ऋषि कश्यप के वंशज थे। भांदल का कथानक प्रतीकात्मक है। अनुमान है कि वासुकी नाग के सभी पुत्र एक ही स्थान पर रहते थे। अग्नि की घटना से वे अलग—अलग

स्थानों को चले गये। कुछ घायल भी हुये। ये नाग अपने दिव्यगुणों के कारण पूज्य हुये। ये इच्छाधारी सांप भी न थे। इनका इस क्षेत्र में अधिपत्य रहा। इन नागों की माता प्रजापति की बेटी कद्रु थी। प्रजापति ब्रह्मा का पुत्र था।

प्रमुख नारायण देवता

कुल्लू जिला में देवता नारायण भी हैं। कुछ देवताओं के स्थान एक से अधिक है। इसलिये समय के साथ उनके रथ तथा मन्दिर ओर भी बना लिये गये। तथा नारायण देवताओं की संख्या तीस हो गई। कुल्लू में इनके मन्दिर इस प्रकार हैं:—

1.	लक्ष्मी नारायण	रायला
2.	बूढ़ा नारायण	दलिहार(सैंज)
3.	काला नारायण	बनोगी
4.	जाडा नारायण	धोगी
5.	कतरूसी नारायण	भल्याणी (तारापुर)
6.	छमाहण नारायण	छमाहण
7.	ईशवरी नारायण	सोईल
8.	जीव नारायण	जाणा
9.	शुभ नारायण	रुमसू
10.	होरगू नारायण	हलाण
11.	सृष्टि नारायण	अलेऊ
12.	फलाणी नारायण	फलाण
13.	शंखू नारायण	नसोगी
14.	कोशु नारायण	बनोगी
15.	मेहा नारायण	बड़ागढ़
16.	त्रिजुगी नारायण	दियार
17.	पंचाली नारायण	ग्रामंग
18.	सूर्य नारायण	जरी
19.	नारायण	पुथला
20.	नारायण	बुआई
21.	थानी नारायण(तक्षपाल)	भुठी
22.	कशू नारायण	नलहाच
23.	हरगू नारायण	जोंगा
24.	कसोली नारायण	कसोल
25.	सारी नारायण	सारी
26.	भालठा नारायण	भालठा

27.	खलाड़ी नारायण	खलाड़ा
28.	रणाई नारायण	ग्रामंग
29.	चेहणी नारायण	चेहणी

अठारह करडू

आरम्भ में देवताओं के रथ न होकर करण्डु हुआ करते थे। वीरनाथ ढालपुर तथा अन्य देवताओं के अभी भी करण्डु हैं। समय के साथ करण्डु शब्द करडू में बदल गया। 18 का अंक श्रेष्ठता तथा अमरता का सूचक है। इसलिये कुल्लू देवताओं के साथ 18 का अंक लगाया जाता है। यह संख्या उनके गुणों तथा भाव को प्रकट करती है। परन्तु इसका अर्थ यह कदापि नहीं कि कुल्लू के श्रेष्ठ देवता 18 ही हैं। जगती पॉट नगर 18 करडू का केन्द्रीय स्थान है। 1999 में वहां नव निर्मित मन्दिर की प्रतिष्ठा के समय 96 देवता रथों या प्रतीकों के साथ सम्मिलित हुये। इन सब तथ्यों के आधार पर कहा जा सकता है कि 18 करडू संख्या के अनुसार 18 नहीं हैं इसका अर्थ कुल्लू के समस्त देवता ही है।

ढालपुर को भी अठारह करडू की सोह (क्रीड़ा स्थल) कहा जाता है। इसका पहला नाम कोटा अगली शाड़ था। अठारह करडू की सोह डोभी के पास खराहल में भी है। जहां अभी भी दशहरा के समय कुछ विशिष्ठ देवता इकट्ठे होते हैं। इन देवताओं की रघुनाथ जी की आरती के समय आरती होती है। परन्तु मुहल्ले वाले दिन इनके गूर तथा कारदार घण्टी तथा धड़च्छ (धूपदान) लिये उपस्थिति देते हैं इस से भी पता चलता है कि अठारह करडू केवल 18 देवता नहीं हैं। देवताओं के स्थापित होने के पीछे कई दन्त कथायें प्रचलित हैं। एक कथा अनुसार ऋषि जमदग्नि एक टोकरी (करडू) में अठारह देवता लिये हाम्टा से कुल्लू घाटी में प्रविष्ट हुआ। चन्द्रखणी जोत पर तेज हवा से वह टोकरी उड़ गई। उसमें रखे देवता भिन्न–भिन्न स्थानों पर जा गिरे और वहीं स्थापित हुये। वही देवता आगे 18 करडू कहलाये। चचोगी के देवता अमल की फागली में तिम्बर पिशाचिका द्वारा बताये गये नामों के आधार पर कुछ विद्वानों ने 18 देवताओं की सूची बनाई है जिन्हें वे 18 करडू कहते हैं। सूची नीचे दी जा रही है:–

1. जमलू	मलाणा
2. सिंहमल	गाहर
3. गिरमल	बनोगी (काईस)
4. आम्बल खारोल	चचोगी
5. आजिमल	सोईल
6. हारसू नारायण	हलाण
7. मनू	मनाली
8. शमशरी महादेव	शमशर
9. त्रिजुगी नारायण	दियार
10. जगथम	वरशैणी
11. थिरमल	धारा
12. जीव नारायण	जाणा
13. शुभ नारायण	रुमसू
14. शांडिल	शालीण
15. गौतम	गौशाल
16. संकीर्ण	बन्जार
17. भागा सिद्ध	पीणी
18. कसोल नारायण	कसोल

जमलू देवता

मलाणा के स्थानीय लोग जमदग्नि के बारे कुछ नहीं जानते। किसी ऋषि के मन्दिर में बलि नहीं दी जाती परन्तु मलाणा में दी जाती है। जमदग्नि की पत्नी रेणूका थी परन्तु जमलू मलाणा की पत्नी नैरोई है। भाई धेपन देवता सिसु (लाहुल) तथा जगथम (वरशैणी) हैं। परीणी की देवी बहिन हैं। जमदग्नि का इनसे कोई सम्बन्ध न रहा। 18 करडू की सूची में जमलू का भी नाम है। यदि 18 करडू देवताओं को ऋषि जमदग्नि ने स्थापित किया मान लें तो जमलू ऋषि जमदग्नि से भिन्न है। कुल्लू क्षेत्र के लोग इसे भोट देवता कहते हैं। भोट साहित्य में जमलूंग देवता का वर्णन आता है। कुछ विद्वान मानते हैं कि जमलूंग ही जमलू है। परन्तु जमलूंग सतारहवीं शताब्दी का देवता है। जबकि जमलू घाटी का आदि देवता है। जमलू के बारे नवीनतम जानकारी यह मिली है कि हंसा (स्पिति) गांव के ऊपर टिब्बे पर भी जमलू का मन्दिर हैं। जहां से (वहां के लोगों अनुसार) वह हाम्टा, चन्द्रखणी होते हुये मलाणा पहूंचा और वही मलाणा का देवता जमलू है। इसकी पुष्टि कई विद्वानों ने की है। अन्य इसे जम्बू प्रदेश का देवता जम्बूला मानते हैं। परन्तु घाटी में यह सबसे अधिक पूजित देवता है इन सबके आधार पर कहा जा सकता है कि जमलू

ऋषि जमदग्नि नहीं। उससे कोई भिन्न देवता है। एक अन्य कथानक के आधार पर इन्द्र को जमलू भी बताया है। दानवों के राजा बलि ने विश्वजीत यज्ञ के पश्चात जब इन्द्र को परास्त किया तो वह अन्य देवताओं के साथ त्रिविष्टप (तिब्बत) से भाग कर कुल्लू की पहाड़ियों में छिप गया। इन्द्र देवताओं का राजा था। जो बाद में जमलू बना। इसी लिये उसे बड़ा देऊ कहा जाता है। परन्तु इस तथ्य की पुष्टि के लिये कोई प्रमाण नहीं। यह केवल अनुमान है।

जमलू (मलाणा) दशहरा में नहीं आता तथा कुल्लू के देवाधिदेव रघुनाथ जी के पास उपस्थिति नहीं देता। जमलू के कुल्लू में मलाणा के अतिरिक्त तीस स्थान इस प्रकार हैं:—

1. हाम्टा	2. कोटाधार
3. जाणा	4. डोभी
5. रुमसू	6. पुलगा
7. सोईल	8. करजां
9. जगतसुख	10. सीस
11. प्रीणी	12. शेगली
13. पलाईच	14. बुरूआ
15. शांगचर	16. पूजन
17. रियाड़ा	17. बड़ाग्रां
19. सोखनी	20. छानी
21. दुआड़ा	22. बंदल
23. हवाई	24. श्याह
25. पीज	26. उड़सू
27. वशकोला	28. फोजल
29. दर्पाइन	30. कुलबाड़ी
31. चौकी	

देवी फुंगणी

देवी फुंगणियों का वास ऊंचे स्थानों पर हैं जहां श्रद्धालुओं का पंहुचना कठिन होता है। श्रद्धालु फुंगणियों को दुर्गा रूप मानते हैं। ये सात फुंगणियां, सात बहिनें हैं। कुछ इन्हें स्वर्ग से उतरी परियां भी मानते हैं। फुंगणियों के स्थान इस प्रकार हैं:—

लगघाटी में :त्यून, शोझागढ़, पद्धारंग (भूमतीर), लिमाणी (फलाणा क्षेत्र) महाराजा—शुगरा, सारी सारी—थाच तथा कशाम्पटी। फुंगणिया वर्षा देने वाली देवियां मानी जाती हैं। इन द्वारा प्रार्थना स्वीकार करने पर वर्षा अवश्य

ाती है। कहते हैं कि राजा कुल्लू अपना प्रतिनिधि भेजकर सालु तथा डोरी यून देवी को जब प्रस्तुत कर वर्षा के लिये प्रार्थना करता था, शालंग तक ापस उसके पहुंचने पर वर्षा अवश्य हो जाती थी। लगघाटी के सात देवता न फुंगणियों के भाई हैं। जो एक वर्ष इन्हें मिलने त्यून और दूसरे वर्ष धर्म ोह शालंग जाते हैं। उस समय सब मिलकर भविष्य वाणियां करते हैं। जो ाय: सच निकलती हैं। धर्म सोह शालंग के खेतों में हैं।

फुंगनियां विशिष्ठ नाम से भी जानी जाती है:–

1. नाऊनी	:	फुंगनी कशाम्पटी
2. लाहड़ी अच्छरी	:	फुंगनी लियाणी
3. होरंग जोणी	:	फुंगनी फलाण क्षेत्र
4. कुहड़ी–कुपड़ी	:	फुंगनी तारापुर
5. कुहड़ी महाजन	:	फुंगनी महाराजा

ऐसी धारणा है कि फुंगनी झुणी कुण्डा स्थान पर जाकर बादलों को ाती है और वर्षा करती है। फुंगनियों के कई और स्थान भी हैं। जैसे ल्हणी धारा, गोहीधार, गठगाजनधार, सारी धार, इत्यादि। त्यून देवी के तिरिक्त अन्य के मन्दिर नहीं हैं। शिखरों पर भी न ही इनकी प्रतिमायें होती और न ही मन्दिर। केवल पत्थर के चिन्ह (ओड़) होते हैं। इनका मान्यता त्र काफी विस्तृत है। फुगंनी का एक मन्दिर व्यासर में भी है। फुंगनी उत्सव ाल्गुन मास में मनाया जाता है।

ीर नाथ या गौहरी देवता

गौहरी देवताओं के भी पन्द्रह स्थान तथा मन्दिर कुल्लू में है। कुछ हें ब्रह्मा का अवतार मानते हैं। अधिकतर इन्हें स्थानीय देवता मानते हैं। न्होंने जन कल्याण के कार्य किये, लोगों की श्रद्धा तथा आदर के पात्र बने ौर पूजे जाने लगे। कुछ इन्हें नाथ पंथ के सिद्ध बाबा विरूप नाथ के नुयायी मानते हैं। कुछ इसे हरिद्वार से आया साधु मानते हैं। जो माशना के क परिवार का इष्ट था। गौहरी देवता के स्थान इस प्रकार हैं :–

बलोहणी, ढालपुर, बन्द्रोल, पंनगां, कराल, कटराई, दचाणी, फोजल, लाण, न्यूल, दियार, बड़ाग्रां, थाच तथा व्यासर।

एक स्थानीय देवता की कहानी

अग्न पाल एक स्थानीय नायक'

'अग्न पाल' देवता का मन्दिर पाथला गांव में है। यह गांव पार्वती घाटी में जरी के पास है। देव भारथा (वार्ता) अनुसार वह कभी सागर तट का वासी था। अभद्र लोगों के दुर्व्यवहार से प्रभावित हो शान्त स्थान की तलाश में वह पाथला आया। परन्तु यहां उस समय एक अत्याचारी राणा का राज्य था। सभी लोग उससे दुखी थे। अग्न पाल भी उसकी दुष्टता से न बच सका। जनता की सहायता से अग्न पाल ने राणा का विरोध किया। एक संघर्ष में उसने राणा के उस गढ़ को समाप्त कर दिया जहां लोगों को यातनायें दी जाती थी। परन्तु राणा को समाप्त न किया जा सका। लम्बे संघर्ष के कारण लोग निराश होने लगे। अतः अग्न पाल ने अपनी देवीय शक्ति का प्रयोग किया। उसने अपने आप को उस स्थान पर पत्थर में परिवर्तित किया जहां राणा के आदमी काम कर रहे थे। ज्यों ही उनकी कुदाली उस पत्थर से टकराई चार ज्वालायें निकलीं और राणा के सभी आदमी भस्म हो गये। इस पर राणा ने अग्न पाल को चुनौती दी कि वह उसका सामना प्रकट रुप में करे। देवता ने मानव देह धारण कर राणा से अत्याचार बन्द करने के लिये कहा। राणा ने शर्त रखी कि वे दोनों द्युत क्रीड़ा करेंगें। जो हारेगा, वह स्थान छोड़कर चला जायेगा। देवता मान गया। सात दिन तक द्युत क्रीड़ा के पश्चात राणा हार गया और वह स्थान छोड़ कर चला गया। लोगों ने चैन की सांस ली। अभार स्वरुप लोग अग्न पाल की पूजा करनें लगे तथा उसे इष्ट देव बनाया। अग्नि बर्षा करने से तथा अग्नि रुप में प्रकट होने के कारण देवता अग्न पाल कहलाया।

कुल्लू देवताओं तथा मन्दिरों की व्यवस्था

राजा बहादुर सिंह ने सर्व प्रथम मन्दिरों का प्रबन्ध सुव्यवस्थित किया। न केवल उसने देवताओं के रथों के आकार तथा प्रकार निश्चित किया अपितु जागीरें प्रदान कर उनकी यात्राओं तथा अन्य खर्चों के लिये साधन जुटाया। प्रबन्ध के लिये कारदार तथा पुजारियों की नियुक्ति की। इन जागीरों भूमियों का प्रयोग देवता के कार्य निभाने वाले ही करते थे। समय तथा आवश्यकता अनुसार कुछ अन्य सेवादारों के पद सृजित हुये। ये पद भण्डारी, कठयाली, बजन्तरी, हेसी, खोलीदार, धामी, जठेरा आदि के हैं। कुछ पद पैतृक बन गये। कुछ पदों पर नियुक्ति हारियान के हाथ चली गई। देवता के अधिकार क्षेत्र के लोग हारियान कहलाते हैं। परन्तु गूर का चुनाव हर देवता स्वयं करता हैं। कुछ विशिष्ठ पदाधिकारियों का संक्षिप्त वर्णन नीचे दिया जाता है :

कारदार

कारदार फारसी का शब्द है। कुल्लू में इस शब्द का प्रयोग देवता के प्रबन्धक के लिये किया जाता है। ऐसा प्रतीत होता है कि कारदार का अस्तित्व मुगल शासन के समय आया। जो प्रशासनिक प्रबन्धकों को कारदार कहते थे। कारदार देवता के सारे प्रबन्ध का उतरदायी माना जाता था। कई देवता के कारदार कामदार कहलाते हैं।

मलाणा में इसे करमिष्ठ कहा जाता है। करमिष्ठ शब्द अति प्राचीन माना जाता है। इससे प्रतीत होता है कि राजा बहादुर सिंह के समय इस पद को नया नाम मिला। कारदार होना बड़े सम्मान की बात मानी जाती है। देवता ग्राम्य जीवन की धूरी हैं जिस कारण कारदार को भी महत्व तथा आदर मिलता है। जिन देवताओं के भण्डारी नहीं होते वहां कारदार ही देवता की अचल सम्पति तथा आय व्यय का विवरण रखतें हैं। जब बेगार का प्रचलन कुल्लू में था तो कारदार को बेगार से छुट दी जाती थी। कारदार का स्थान उतराधिकारी के रुप में मिलता है।

गूर

गूर देवता का प्रवक्ता होता है। देवता अपनी बात गूर द्वारा ही कहता है। जिस समय देव आत्मा गूर में प्रवेश करती है तो वह कांपता हैं। गूर का चयन स्वयं देवता करता है। चयन की विधि प्रत्येक देवता की अपनी होती है। जमलू देवता (मलाणा) द्वारा गूर की चयन विधि सम्बन्धित अध्याय में दी जा चुकी है। प्रत्येक गूर को सिर के बाल रखने पड़ते हैं। कई गूर जूते नहीं पहन सकते हैं। उन्हें शराब सिगरेट भोजन आदि में परहेज रखना पड़ता है। पहले गूर को निर्वाह के लिये देवता की भूमि दी जाती थी। परन्तु अब देवता की आय का कुछ भाग दिया जाता है।

जठेरा

इसकी नियुक्ति गांव वासी करते हैं। यह चन्दा ग्राही करता है तथा देवता के प्रबन्ध करता है।

कठियाली

कठियाली या कोठी द्वारा बरतन, भोजन पकाने और खिलाने का कार्य करता है।

पुजारी

देव पूजा करना, आरती उतारना, देवता सजाना, चरणामृत, केसर इत्यादि श्रद्धालुओं में बांटना पुजारी का कार्य है। पुजारी का पद प्रायः पैतृक ही होता है। उसे परम्परागत पूजा विधि की जानकारी परिवार से ही मिलती है।

पुजारियों को श्रद्धालुओं से प्राप्त भेंट का भाग ही मिलता है। यदि देवता बलि में भेड़ या बकरी स्वीकार करे और पुजारी मांसाहारी हो तो उसे सिर दिया जाता है। जहां गूर नहीं होता पुजारी गूर का भी कार्य निभाता है। अपने राज्य के समय राजा स्वयं पुजारी की नियुक्ति किया करते थे। कई देवता अपने पुजारी स्वयं चुनतें हैं। पुजारी निशिद्ध कार्य करने पर निकाल दिया जाता है। कुछ देवता के दो पुजारी होते हैं। जिनमें एक अवश्य ब्राह्मण कुल से होता है। पुजारी को देवता के प्रतिबन्धित क्षेत्र में जाने की आज्ञा होती है। इसे देवता या लोग नियुक्त करते हैं।

भण्डारी

देवता की सारी अचल सम्पति भण्डारी की देख रेख में रहती है। वह इसे प्रयोग के लिये देता तथा वापस लेता हैं। देव भण्डार की चाबी उसके पास होने के कारण ही उसे भण्डारी कहा जाता है। भण्डारी का चुनाव प्रायः हारियान ही करते हैं। वह देवता के आय व्यय का लेखा भी रखते हैं। कई देवताओं के भण्डारी कुठयाली कहलाते हैं।

ढौंसी

देवता की सारी कार्यवाही वाद्य यन्त्रों के ताल पर की जाती है। प्रत्येक देवता के अपने वादक तथा वाद्य यन्त्र होते हैं। इन वादकों का नेतृत्व ढौंसी करता है। जो अवसर अनुसार ताल बजाता तथा बदलता हैं वादकों के निश्चित परिवार होते हैं। जो इस कार्य को पीढ़ी दर पीढ़ी निभाते चले आ रहें हैं। परन्तु ढौंसी को कई देवता स्वयं चुनते है। ढौंसी के कार्य के लिये अनुभव तथा प्रवीणता की आवश्यकता होती है। अतः उसकी नियुक्ति इन योग्यताओं को सामने रखकर ही की जाती है। जहां ढौंसी न हो वहां इस कार्य को ढोल वाला निभाता है। कुछ ताल 'वार' के नाम से जाने जाते हैं जैसे देववार, राक्षस वार, जोगनी वार इत्यादि। कई अवसरों पर ढौंसी की पूजा भी की जाती है।

जगाली

इसकी नियुक्ति लोगों द्वारा की जाती है। देवता के सम्मान में होने वाले उत्सव, समारोह, यात्राओं तथा भोजों की सूचना लोगों को देता है। भोजों के लिये अन्न तथा धन भी यही इकट्ठा करता है।

विशिष्ठ मूर्तियां

कुल्लू के मन्दिरों की अन्य सुन्दर मूर्तियों का विवरण नीचे दिया जा रहा है:-

सूर्य मूर्तियां

खुदाई में बजौरा में दो सूर्य मूर्तियां मिली हैं। इनमें से एक 50.4 से. मी. की थी जो क्लीवलैंड अमेरिका म्यूजियम में है। दूसरे भूरे रंग के पत्थर की है। जो हिमाचल राज्य संग्राहलय शिमला में रखी है। दोचा मोचा मन्दिर में भी सूर्य मूर्तियां हैं।

माता दुर्गा

एक मीटर अष्ट भुजा दुर्गा की पत्थर की मूर्ति बजौरा मन्दिर के पास मिली है। नवीं शताब्दी में बनी हैं।

कार्तिक स्वामी की मूर्ति

यह नथान के मन्दिर में स्थापित हैं तथा अति उत्तम हैं। मन्दिर के आंगन में लगभग 40 अन्य विभिन्न मूर्तियां हैं।

शिवपार्वती मूर्ति

चौकी गांव पार्वती घाटी में नन्दी बैल पर शिव पार्वती की पत्थर की मूर्ति है। सजला में भी शिव पार्वती की मूर्तियां हैं।

दुर्गा मूर्तियां

खेकसू बाहरी सिराज में कांसे की दुर्गा प्रतिमा अति सुन्दर है। जगत सुख के संध्या मन्दिर में दुर्गा की महिषासुर बध करती हुई मुद्रा में मूर्ति है जो अति सुन्दर तथा कलात्मक हैं। सराहन मन्दिर मे दुर्गा की काले पत्थर की मूर्ति हैं।

ब्रह्मा की मूर्ति

तीन मुख की ब्रह्मा की मूर्ति खोखन (भून्तर) के मन्दिर में हैं। मन्दिर मेरु शैली का हैं जिसे राजा टेढ़ी सिंह ने 1753 ई. में बनवाया था। आंगन में अन्य कई मूर्तियां रखी हुई हैं।

त्रिजुगी नारायण दियार

विष्णु की काले रंग के पत्थर की विशाल मूर्ति है। सजला में भी विष्णु की मूर्ति है।

बिरमण्ड में विशिष्ठ मूर्तियां

ठाकुर द्वारा में 10वीं शताब्दी की विष्णु तथा लक्ष्मी की काले रंग की पत्थर की मूर्तियां है। पास गरुड़ की मूर्ति भी है।

2. वरुण वरुणी की दो बहु मूल्य मूर्तियां हैं। इन मूर्तियों के शरीर मछली के आकार के हैं।

3. महादेव मन्दिर की पांच पांडवों की मूर्तियां शिमला राज्य संग्राहलय में रखी गई हैं।

4. जाहर पीर के मन्दिर में महाभारत की कथा दीवारों पर तराशी गई हैं।

राम मूर्तियां

कुल्लू क्षेत्र के अधिदेव रघुनाथ जी की तीन अन्य वैसी ही मूर्तियां कुल्लू में है। एक राम मन्दिर मणीकर्ण में, दूसरे अयोध्या से आये राज पुरोहितों के वंशजों के पास डोभी चौकी में तथा तीसरी राजभवन सुलतानपुर के अन्दर स्थापित है।

मूर्तियां जो चोरी हुई

कुल्लू के मन्दिरों से कुछ मूर्तिया चोरी भी हुई है। जिनका अभी तक पता न चला।

राम मन्दिर विशिष्ठ से सीता तथा लक्ष्मण की मूर्तियां, राम मन्दिर मणीकर्ण से लक्ष्मण की मूर्ति। त्रिपुरा सुन्दरी मन्दिर से बुशैहरी देवी की धातु की मूर्ति।

शिमला संग्राहलय में रखी बजौरा की कलाकृतियां

1. अरुण तथा विटन
2. चक्र पुरुष
3. प्रजापति सूर्य
4. भैरव
5. कृष्ण काली नाग दमन रुप
6. शिव पार्वती

बजौरा राजकीय फलोद्यान में भी कई मूर्तिया मिली है।

मुखौटे

मुखौटे दो प्रकार के होते हैं। दोनों प्रकार के मुखौटों का प्रयोग कुल्लू में होता है। 1. देवता के मुखौटे, 2. नृत्य के मुखौटे।

1. देवताओं के मुखौटों को मोहरा कहा जाता है। सोना चांदी पीतल आदि धातुयें मोहरे बनाने में प्रयोग की जाती हैं। कुल्लू राजाओं ने कुछ देवताओं को अपनी विजयों या अन्य कारणों से मोहरे समर्पित किये जिसकी सूची नीचे दी जा रही है:—

1. भागा सिद्ध	पीणी	राजा पर्वत सिंह	1575
2. बिरमल	नजां	राजा पृथ्वी सिंह	1618–1635
3. गुमल	शाट	राजा पृथ्वी सिंह	1618–1635
4. नारायण	छमाहण	राजा विधि सिंह	1668
5. जुआणी महादेव	जुआणी	राजा मान सिंह	1717
6. कपिल मुनि	बशौणा	राजा मान सिंह	1717
7. देवी कुढ़ली	सोईल	राजा राज सिंह	1729
8. दरवासा	पालगी	राजा राज सिंह	1729
9. नारायण	छमाहण	राजा जय सिंह	1735
10. आदि ब्रह्मा	खोखन	राजा टेढ़ी सिंह	1745
11. श्रृंगी ऋषि	बन्जार	राजा टेढ़ी सिंह	1745
12. दरवासा	पालगी धारा	राजा जगत सिंह	1637–1652
13. हरदासा	मणीकर्ण	राजा विक्रम सिंह	1806–1816
14. हडिम्बा	मनाली	राजा उर्धनपाल	1418
15. विष्णु	सजला	राजा विधि सिंह	1672

नृत्य के मुखौटे

इन्हें मटियाले या रिशी भी कहा जाता है। इनके बनाने में अखरोट, शीशम, तोश, वरा, खनोर की लकड़ी का प्रयोग किया जाता है। मुखौटों का प्रयोग विशेष नृत्य या स्वांग के लिये किया जाता है। ये मरे हुये पशुओं के खाल के भी बनाये जातें हैं। ऐसे मुखौटे बूढ़े पुरुष, स्त्री, बूढ़ा राक्षस या पशु के मुख की आकृतियां होते हैं। जिन्हें व्यंग या विनोद के लिये प्रयोग किया जाता हैं। इनमें आंख में काला, दांत में सफेद, होंठ पर लाल रंग प्रयोग किया जाता है। जिसे तेल या सुरेश के साथ मिश्रित कर तैयार किया जाता है। भेखल और कद्दू (कांशी फल) के मुखौटे भी बनाये जाते हें।

देव रथ

कुल्लू के ग्रांम देवता रथों में सांकार होते हैं। रथों की तीन शैलियां हैं:—

1. ढलवां छत शैली 2. छत्र रथ शैली 3. कंरडू शैली

ढलवां रथ शैली

अधिकतर देवता इसी रथ शैली के चार फीट से पांच फीट के होते हैं। रथ पर उपरी भाग पीछे की ओर थोड़ मुड़ा होता है। जिस पर सोने, चांदी तथा कहीं—कहीं पीतल के मोहरे लगाये जाते हैं। मोहरे आठ से बारह तक होते हैं। इन मोहरों के किनारों को चांदी की पटिकाओं से ढांपा होता है। सजावट के लिये रंग बिरंगी चादरें लटकाई होती हैं। इन रथों के उठाने के

लिये अरगल (डण्डे) छः फुट से बारह फुट तक लम्बे होते हैं। ऐसे रथ उठाने में अधिक भारी होते हैं।

छत्र रथ शैली

इन रथों की ऊंचाई 6.5 फुट से अधिक होती हैं। इनके शिखर पर सोने या चांदी का छत्र होता है। मण्डप में कटाव होता है। मुखोटों को कटाव वाले भाग में लगाया जाता है। नीचलें भाग में चादरें लटकाईं जाती है। इनकी अरगलें लचीली तथा लम्बी होती है। जिनके सहारे ताल पर इन्हें नचाया भी जा सकता है।

करंडू रथ शैली

एक बड़ी टोकरी में मोहरे सजाये जाते हैं और रंग बिरंगे कपड़ों से टोकरी को भी सजाया जाता है। टोकरी को एक व्यक्ति सिर पर उठाता है। कुछ देवताओं के रथ नरगाल से बनाये गये हें। देवता अमल (राजा बलि) तथा वासुकी नाग हलाण के रथ नरगाल के बनाये गये हैं।

देवताओं के सांझे रथ

कई स्थान के दो देवता एक ही रथ पर जाते है। दोनों के मोहरे एक ही रथ पर लगाये जाते हैं। जैसे गौतम तथा गोशाली नाग का एक ही रथ है। बाजा और मुआफी भी सांझी है। अजिमल तथा सरगन नाग और हरशु नारायण तथा वासुकी नाग के भी एक ही रथ हैं।

38. धार्मिक संस्थायें

आर्य समाज भवन

कुल्लू आर्य समाज की स्थापना 1889 ई. में हुई। उस समय मुख्य बस्ती सुलतानपुर में ही थी। इसलिये सुलतानपुर में ही इसका भवन बनाया गया। अब वह भवन किराया पर दे दिया गया है।

1942 ई. में अखाड़ा बाजार में खजाना राम सूद से भूमि मोल ले कर यहां भी भवन का निर्माण किया गया। सारे आर्य समाजी परिवार अखाड़ा में ही रहते थे निर्माण जन साधारण के चन्दा से किया गया जिनमें 2000 रुपये की राशि राये बहादुर जोधामल ने दी तथा एक कुंआ खुदवाया। कुछ भूमि राये भगवन्त सिंह जागीरदार ने दान में दी। हाल और चौदह कमरे बनाये गये। 1982 ई. में शौचालय का निर्माण रोशनलाल सूद ने 12000 रुपये के दान से कराया। इसी समय तीन स्नानागार भी बनवाये गये। 1990 ई. में माध्यमिक विद्यालय के लिये चार कमरों का निर्माण किया गया। 1995–96 में तीन कमरे एक हाल बनाया गया। 2002 ई. में वाशिंग में 1.5 वीघा भूमि खरीदी गई तथा 2003 में भवन बनाया। जिसमें 4 कमरे तथा शौचालय था। श्री महेश्वर सिंह ने विद्यालय को 2004 ई. में 2 लाख की राशि सांसद निधि से दी। जिससे 3 कमरे और बनाये गये। स्कूल निर्माण तथा भूमि के लिये स्कूल से 20 लाख की रशि दी गई। हाल बाद में स्कूल राशि से ही बनाया गया। इस सबका श्रेय श्री सत्यपाल भटनागर प्राचार्य को जाता है। 2004 ई से विद्यालय में 10+2 तक की कला श्रेणियां चल रही हैं। 2006 ई. से नवीं तथा दसवीं श्रेणियों की मान्यता भी मिली।

1908 ई. में भी एक माध्यमिक पाठशाला खोली गई थी। शिक्षा माध्यम हिन्दी था तथा अंग्रेजी अनिवार्य विषय था। यह पाठशाला 1918 ई. में सरकारी स्कूल खुलने पर बन्द कर दी गई। एक कन्या प्राथमिक पाठशाला सुलतानपुर में 1915 ई. में आरम्भ की गई। जिसके लिये भूमि स्वामी दयाल जी ने दान दी और उसकी पत्नी हरदेई ने अध्यापन कार्य किया। उस समय किसी स्त्री द्वारा नौकरी करना सामाजिक नियमों के विरुद्ध था। बाद में उन्होंने प्रशिक्षण प्राप्त कर जिला कांगड़ा में सरकारी स्कूल की पहली अध्यापिका होने का सम्मान प्राप्त किया। प्राथमिक पाठशाला 1948 ई. में बन्द कर दी गई।

1946 से 1948 ई. तक लड़कियों के लिये सिलाई तथा कढ़ाई का स्कूल आर्य समाज द्वारा चलाया गया। 1981 ई. में एक बालवाड़ी आर्य समाज द्वारा आरम्भ की गई। जिसे 1985 ई. में प्राथमिक पाठशाला बना दिया गया। 1992 ई. में इस पाठशाला को माध्यमिक स्तर तक कर दिया गया।

1995 ई. से उच्च विद्यालय संचालन हो रहा है। नये भवन का निर्माण 1990 ई. में किया गया। एक भवन 1996 में बन कर तैयार हुआ। श्री सत्य पाल भटनागर की देख रेख में विद्यालय की रूप रेखा बनी। 1992 ई. मे वह सेवा निवृत होने पर विद्यालय प्राचार्य बने। इसके पश्चात विद्यालय की अभूतपूर्व उन्नति हुई।

धार्मिक कार्य

कुल्लू आर्य समाज आर्य प्रतिनिधि सभा पंजाब से सम्बन्धित था। 1966 ई. के पश्चात आर्य प्रतिनिधि सभा हिमाचल से सम्बन्धित हो गय है। प्रतिनिधि सभी की ओर से हर बर्ष भजनोपदेशक तथा उपदेशक भेजे जाते हैं। बार्षिक उत्सव होते हैं जिसमें नगर कीर्तन शोभा यात्रा निकाली जाती हैं तथा व्याख्यान तथा भजन सुनायें जाते हैं। साप्ताहिक सत्संग भी होता हैं।

आर्य समाज कुल्लू के शुद्धि कार्य द्वारा कई धर्म परिवर्तित व्यक्तियों को वापस हिन्दु धारा में लाया गया। कुछ परिवारों को धर्म परिवर्तन से भी बचाया गया।

वेद प्रचार

वेद प्रचार के लिये वैदिक साहित्य बांटा जाता हैं। विद्वानों के व्याख्यान कराये जाते हैं।

विशिष्ठ अतिथि

आर्य समाज कुल्लू को इन विशिष्ठ व्यक्तियों का अतिथ्य करने का गौरव प्राप्त हैं।

1. श्री भीमसेन सच्चर भूतपूर्व मुख्यमंत्री पंजाब तथा राज्यपाल (1976) पंजाब
2. महाशय खुशहाल चन्द सम्पादक तथा मालिक मिलाप समाचार पत्र (1948)
3. रामेश्वरा नन्द महाराज प्रधान हिन्दु सुरक्षा समिति (1967)

आर्य समाज कुल्लू के भूतपूर्व सदस्य

सर्व श्री नानक चन्द खजाना राम, ज्वालादास, स्वामी दयाल, पं. गोविन्द राम, मेला राम सूद, प्राणनाथ सूद, पन्ना लाल सूद, महाशय आत्मा राम, राम सरन दास, देव राज विग।

वर्तमान सदस्य

सर्व श्री विनोद विग, रोशन लाल, मित्रभूषण, सत्यपाल, चन्दुराम, अशोक कुमार, मन्सा राम।

सुविधायें

आर्य समाज में आवास सुविधा है। कमरा नाम मात्र शुल्क पर दिया जाता है। बिस्तरों का भी प्रबन्ध है।

सनातन धर्म सभा

सुलतानपुर (कुल्लू)

1908 ई. के लगभग सनातन धर्म सभा सुलतानपुर का गठन हुआ। पण्डित राम कृष्ण कांगड़ा निवासी धार्मिक प्रवचन देने कुल्लू आया करते थे। उनकी प्रेरणा से सभा बनाई गई। यद्यपि इस सभा का पंजाब सनातन धर्म प्रतिनिधि सभा से सम्बन्ध रहा। परन्तु इसने अपना स्वतन्त्र अस्तित्व बनाये रखा। 1982 ई. में सभा का पंजीकरण 1860 के समिति नियमावली अधीन किया गया हैं। सभा को राये मेघ सिंह, राये भगवन्त सिंह, (रुपी) तथा राजा हरि सिंह (शांगरी) का संरक्षण मिलता रहा। नया भवन 1998 ई. में बन कर तैयार हुआ।

भवन निर्माण

सभा भवन के लिये भूमि पोहलो मल ने दान में दी। भवन निर्माण सार्वजनिक चन्दा से किया गया। जिसकी देख रेख लाला बसन्ता मल ने की। यह कार्य 1912 ई. में पूर्ण हुआ। भून्तर में भी सभा के पास पांच बिघा जमीन हैं। श्री नन्द लाल ने भवन निर्माण के लिये दिया है। परन्तु इसका उपयोग सभा द्वारा न किया गया। एक भवन अखाड़ा बाजार में है। जो दान में मिला था। उसके स्थान पर नया भवन 2004 मे बनाया गया। जिसमें सांसद निधि से महेशवर सिंह से सहायता मिली। सुलतानपुर का भवन भी नया बना। इसके लिये महेशवर सिंह ने सांसद निधि से धन दिया।

धार्मिक कार्य

सभा द्वारा धार्मिक सम्मेलन 1915 ई. से किये जाते रहे। यह सम्मेलन एक दिन के लिये भून्तर भी किया जाता रहा। कई धार्मिक पर्व भी धूमधाम से सभा द्वारा मनाये गये। सनातन धर्म सभा को कृपात्री महाराज का आतिथ्य करने तथा उनका प्रवचन सुनने का गौरव प्राप्त है।

शैक्षणिक तथा समाजिक कार्य

1909 ई. में सभा ने लड़के तथा लड़कियों के लिये माध्यमिक पाठशाला चलाई। जिसे सरकारी सहायता भी मिलती रहीं। 1918 ई. में पाठशाला बन्द हो गई फिर प्राज्ञ और विशार्द की संस्कृत श्रेणियां आरम्भ की जो कुछ बर्षों के पश्चात बन्द कर दी गई। 1935 ई. से 1940 ई. तक इन श्रेणियों को पुनः चलाया गया। 1942 ई. में रत्न तथा प्रभाकर की श्रेणियां आरम्भ की गई जो पांच बर्ष तक चलीं।

1942 ई. से 1948 ई. तक एक निशुल्क औषध्यालय चलाया। जिसके लिये अनुदान नगर पालिका कुल्लू देती रही।

सभा के विशिष्ठ सेवक

सभा को गति देने के लिये इन महानुभावों ने विशेष योगदान दिया। सुलतानपुर से सर्व श्री पोहलोमल, लाला पूर्ण चन्द, केसरीदास, लाला राम कृष्ण गोयल, पं. रामनाथ, पं बाला राम, यज्ञानन्द शास्त्री, लाला बसन्तामल, पूर्णचन्द, विष्णुदत उपाध्याय। अखाड़ा बाजार से पं फकीर चन्द्र, लाला गंगा राम। ढालपुर से पं चन्द्र शेखर, पं राम रत्न, ज्योतिस्वरुप। इस समय सभा गतिहीन है।

गुरुद्वारा सिंह सभा कुल्लू

कुल्लू जिला में सिक्ख समुदाय संख्या की दृष्टि से बहुत कम हैं। 1966 ई. से पूर्व जिला पंजाब का एक भाग था। सरकारी नौकरियों में पंजाब से कई अधिकारी तथा कर्मचारी यहां नियुक्त हुये। उन लोगों के प्रवास से कुल्लू में गुरुद्वारा अस्तित्व में आया तथा सिंह सभा का गठन 1936–37 किया गया।

पहले प्रधान भगत सिंह रैंज आफिसर, सचिव श्री गंगा सिंह अध्यापक तथा उप प्रधान श्री सोहन सिंह नाजम पटियाला निवासी थे। गुरुद्वारा के लिये भूमि राये भगवन्त सिंह राजा रुपी ने दी और रानी उमा देवी के हाथों गुरुद्वारा की नींव रखी गई। निर्माण कार्य सार्वजनिक चन्दा द्वारा किया गया जिसमें मुख्य राशि 500 रुपये राये बहादुर जोधामल ने दी। भवन का निर्माण लाल चन्द मिस्त्री ने किया। 1984 ई. के पश्चात भवन में विशेष विस्तार तथा परिवर्तन सरदार हरवंस सिंह अखाड़ा की देख रेख में किया गया। 1999 ई. में नया भवन बनने लगा जो 2003 ई. में बन कर तैयार हुआ।

धार्मिक कार्य

सिंह सभा द्वारा सभी गुरु पर्व उत्साह से मनाये जाते हैं। इस दिन लंगर लगाये जाते हैं।बार्षिक सम्मेलन भी किये जाते हैं। शोभा यात्रा निकाली जाती है। रागी तथा उपदेशक विशेष रुप से बुलाये जाते हैं। गुरुपर्व से पूर्व प्रभात फेरी अभी भी की जाती है।

सुविधायें

गूरुद्वारा में यात्रियों के ठहरने के लिये 8 कमरें तथा दो हाल हैं। जहां तीन दिन तक निशुल्क रह सकते हैं। उनके लिये लंगर सुविधा भी है। सिंह सभा कुल्लू के विशिष्ट सेवक :– सर्व श्री गोविन्द सहाय, हुक्म चन्द, नानक सिंह, हरवंस सिंह, अनूप चन्द्र आदि।

भुन्तर, गदाऊरी तथा मनाली गूरुद्वारा

मनाली गूरुद्वारा 1941 ई. में बना। यहां भी आवासीय तथा लंगर सुविधायें हैं। सभी गुरु पर्व मनाये जाते है। 1984 ई. में यह गुरुद्वारा जल गया था परन्तु इसका पुनः निर्माण कर दिया गया है। दोनों गुरुद्वारे समिति नियमावली 1860 ई. के अधीन रजिस्टर्ड है। भून्तर गुरूद्वारा की भूमि दान में मिली है। भवन 2006 ई. में तैयार हुआ। इसी समय गदाऊरी (शमशी) में गुरूद्वारा बना।

जामा मस्जिद

यह मस्जिद अखाड़ा बाजार में, शहर के मध्य गली में स्थित है। इसका निर्माण विभाजन से पूर्व हुआ था। हिमाचल वक्फ बोर्ड से सम्बन्धित है। दुकानों के रूप में इससे जुड़ी काफी सम्पति है। यहां स्थाई रूप में मौलवी नियुक्त है तथा नियमित रूप से नमाज होती है। इस्लाम से सम्बन्धित सभी समारोह होते हैं। अन्य मस्जिद जगतसुख के निकट है।

ईसाई चर्च (गिरजाघर)

ईसाई धर्म का चर्च ढालपुर महाविद्यालय के निकट स्थित है। इसके आस पास अंग्रेजों की कब्रें हैं। यहां पर पादरी नियुक्त है। रविवार के दिन प्रार्थना होती है। मनाली तथा आनी में भी चर्च हैं।

महादेवी तीर्थ (वैष्णों देवी)

कुल्लू मनाली मार्ग पर कुल्लू से दो मील दूर महादेवी तीर्थ है। परन्तु जन साधारण इसे वैष्णों देवी पुकारता है। इस तीर्थ की स्थापना एक साधू ने की। जिसका नाम तथा धाम के बारे अधिक जानकारी नहीं। परन्तु इन्हें महाराज जी कहकर सम्बोधित किया जाता था। वर्तमान तीर्थ स्थान 1964 ई. तक निर्जन भूमि था। यहां एक नाला चलता था जिसे 'जोजूनाला' कहते थे। यहां महाराज जी ने अपना स्थान बनाया। नाला को मोड़ दिया और अपने पुरुषार्थ के बल से ही तीर्थ का निर्माण आरम्भ कर दिया। सर्व प्रथम गुफा का निर्माण किया गया भूमि समतल कर 1965 ई. की शिवरात्री के दिन गुफा में महादेवी की मूर्ति स्थपित कर दी और इसी से वैष्णो देवी स्थान का नाम पड़ा।

महाराज जी निस्वार्थ भाव से इस तीर्थ के निर्माण कार्य करते रहे। जो धन उन्हें मिलता इस तीर्थ पर लगाते रहे। वह त्यागमय थे। उनमें एक ही धुन थी कि यह एक उतम तीर्थ स्थल बने जिसके लिये उन्होंने अपना आगामी जीवन लगा दिया। 1970 ई. में उनकी देख रेख में 'शारदा मां' सेवासंघ की स्थापना की गई जिसकी अध्यक्षा कुमारी गीता बनीं। यह एक कुल्लू के सभ्रान्त परिवार से सम्बन्धित हैं। स्वयं उच्च शिक्षा प्राप्त हैं तथा सरकारी नौकरी पर कार्यरत थीं। मन में विरक्तता तथा सेवाभाव ऐसे समाये कि सब छोड़ तीर्थ स्थल पर आ गई। 1974 ई. में सन्यास धारण कर लिया और जीवन जन सेवा के लिये समर्पित कर दिया। शारदा मां सेवा संघ तीर्थ की व्यवस्था सम्भाले हुये हैं। संघ की देख रेख में तीर्थ परिसर में कई जन कल्याण एवं मानव उत्थान के कार्य चल रहें हैं।

विभिन्न देवी देवताओं के मन्दिर परिसर में स्थापित किये गये हैं। एक निशुल्क चिकित्सालय, एक शिशु शिक्षा केन्द्र तथा सर्व सुलभ लंगर संघ चला रहा है। परन्तु इस तीर्थ की उन्नति और प्रगति के वास्तविक स्रोत तथा स्तम्भ दो अन्य विभूतियां भी रहीं। 1983 ई. में शिवरात्री के दिन नरेन्द्र, जो वशौणा (भून्तर) के एक कृषक परिवार से था सन्यास धारण कर मन्दिर में आ गये। यह भी स्नातक था। इसी बर्ष ठाकुर दास बिलासपुर निवासी राम नवमी के दिन सब कुछ छोड़ मन्दिर से जुड़ गये। महाराज जी ने 1987 ई. में समाधि ग्रहण कर ली। उनकी मृत्यु के पश्चात यह तीर्थ त्याग की त्रिमूर्ति, श्रीमति गीता, विवेक (नरेन्द्र) तथा कमालदास (ठाकुरदास) की श्रद्धा तपस्या समर्पण तथा चिन्तन से पग पग प्रगति की सीढ़ियां चढ़ता रहा। 2002 ई में विवेक ने जल समाधि ले ली। मन्दिर में निर्माण कार्य चल रहा है। परिसर मे बड़ी सुन्दर आवास सुविधा का निर्माण कराया गया है। शिप गुफा [illegible] गई।

राधा कृष्ण मन्दिर बना। वैष्णव देवी गुफा में नया रास्ता बना। लंगर स्थान का पुनः निर्माण कराया गया और गौशाला के लिये अलग स्थान खरीदा गया है।

मणीकर्ण

स्थिति

मणीकर्ण पार्वती नदी के दाहिने तट पर भून्तर से 35 कि. मी. तथा कुल्लू से 45 कि. मी. दूर है। भून्तर पुल पार करने के पश्चात सारा रास्ता पार्वती नदी के बायें किनारे के साथ–साथ जाता है। इसकी समुद्रतल से ऊंचाई 1655 मी. (5500फीट) है। मणीकर्ण चारों ओर से ऊंची पहाड़ियों से घिरा है। जिन पर ऊंचे उगे देवदार के वृक्ष इस स्थान को सौन्दर्य प्रदान करते हैं। पास तेज धार की नदी बहती है। नदी का निर्मल बर्फ का ठण्डा जल और किनारों पर उबलते गर्म पानी के चश्मों को देखकर कोई भी व्यक्ति उस प्रभू की अद्‌भुत माया का लोहा माने बिना नहीं रह सकता।

धार्मिक पहलू तथा नामकरण

ब्रहमाण्ड पुराण अनुसार एक दिन माता पार्वती इस स्थान पर जल क्रीड़ा कर रही थी।इस क्रीड़ा में उसके कान की मणी गिर गई।अपने तेज प्रभाव के कारण वह पृथ्वी पर न टिकी तथा पाताल अधिपति शेषनाग मणियों का स्वामी के पास पंहुची।जिसे शेष नाग ने अपने पास रख लिया।शिवजी के गणों ने मणी की सब ओर तलाश किया परन्तु मणी उन्हें न मिली।इससे क्रोधित हो शिवजी ने तीसरा नेत्र खोला जिससे प्रलय आने लगी।इससे घबरा कर शेष नाग ने फुंकार के साथ मणी को उपर की ओर छोड़ा।मणि उपर आ गई।इसीलिये इस स्थान का नाम मणीकर्ण पड़ा।इसे शिव तथा पार्वती का तप स्थली होने के कारण अर्धनारी क्षेत्र भी कहते हैं।ब्रहमाण्ड पुराण में वर्णित हरिहर तीर्थ भी यही है। जल को विष्णु तथा शिव को अग्नि रुप माना गया है।अतः यहां का स्नान परम सिद्धि अथवा मुक्ति दायक माना गया है।इसी स्थान पर किरात रुप में शंकर ने अर्जुन से युद्ध किया तथा अर्जुन की परीक्षा ली तथा पशुपति अस्त्र अर्जून को यहीं दिया।यहां पहले नौं शिव मन्दिर थे जहां श्री राम चन्द्र जी ने भी शिव अराधना की थी।श्री राम के विशिष्ठ मुनि आश्रम में शिक्षा दीक्षा ली थी। क्योंकि यहां शिव ने तीसरा नेत्र खोला था जिससे नयना देवी प्रकट हुई। इसलिये इसे नयना देवी का जन्म स्थल भी कहा जाता है।

वैज्ञानिक दृष्टिकोण

इस घाटी में गर्म पानी के चश्में कसोल से रुप गंगा तक सात कि. मी. के क्षेत्र में पार्वती नदी के दाहिने किनारे पर पाये जाते हैं। रुप गंगा

मणीकर्ण से चार कि. मी. आगे है। मणीकर्ण के स्रोत इसमें प्रमुख है। जो अधिक गर्म हैं तथा इनमें जल प्रवाह भी अधिक है। पानी गर्म चट्टानों के बीच से निकलता है तथा भारी दबाव के कारण उपर आता है। यहां पानी का तापमान 88 डिगरी से 94 डिगरी सैलसियस है। जर्मन वैज्ञानिक के अनुसार यहां रेडियम की उपस्थिति है। जल पीने के लिये अच्छे स्वाद वाला है तथा इसमें अन्य स्थानों की तरह गन्धक की गन्ध नहीं आती। जल के प्रवाह स्थल पर कुछ कठोर पपड़ी समय के साथ जम जाती है जो जल में कैल्शियम कार्बोनेट की उपस्थिति का प्रमाण है।

जल की उपयोगिता

यह जल स्वास्थ्य लाभ देने वाला है। इसमें स्नान से गठिया, जोड़ों के दर्द तथा पेट में गैस के रोगों को लाभ मिलता है।

मणीकर्ण के चश्मों में भोजन पक जाता है। चावल को पोटलियों में बांध कर पकाया जाता है। जो 20 मिनट में पक जाते हैं। श्रद्धालू इस तरह पके चावलों को प्रसाद के रुप में अपने घरों को ले जाते हैं। चपाती बना कर पानी में डाल दी जाये तो पकने पर उपर आ जाती है। दाल बर्तनों में डाल कर पकाई जाती है। रोटी का स्वाद खाने के लिये पुडिंग की तरह होता है। रोटी आधे घण्टे में तैयार होती है।

श्री राम मन्दिर

मणीकर्ण का राम मन्दिर शिखर शैली का है। मन्दिर के उपर स्लेट की छत भी है जो शिखर शैली में खश शैली के समायोजन का द्योतक है। दो शिव मन्दिरों के स्थान पर राजा जगत सिंह ने इस मन्दिर का निर्माण 1653 ई. में कराया था। ऐसा अनुमान है कि यहां अर्धनारीश्वर मन्दिर था। अयोध्या से त्रेतनाथ के मन्दिर से लाई गई श्री राम की मूर्ति 1660 ई. तक यहीं रखी गई। 1661 ई. में वह मूर्ति कुल्लू रघुनाथ मन्दिर में स्थापित की गई। राजा जगत सिंह ने इस मन्दिर के खर्च की पूर्ति के लिये छः गांव का राजस्व जो छः सौ रुपये के लगभग मन्दिर के नाम लगाया था। राजा मान सिंह ने मन्दिर की मुरम्मत कर छत को चांदी की चादरों से मढ़ दिया था। यह चांदी उसे बुशैहर और स्पिति की जीत से मिली थी। राजा प्रीतम सिंह ने इन चांदी की चादरों से सिक्के बनवाये। 1889 ई. में इस मन्दिर का जीर्णोद्वार राजा दलीप सिंह ने भी कराया था। राम मन्दिर के सामने हनुमान नन्दिर है। जिसमें राजा जगत सिंह की मूरत स्मृति स्वरुप रखी हैं क्योंकि उसका देहान्त 1672 ई. में नणीकर्ण में हुआ था।

मन्दिर की देख रेख इस समय एक ट्रस्ट कर रहा है जो 1981 ई. में बना। ट्रस्ट ने मन्दिर का जीर्णोद्धार किया तथा श्रद्धालुओं के लिये लंगर तथा आवासीय सुविधायें जुटाईं। इस समय 40 कमरे तथा तीन हाल रहने के लिये तथा 500 बिस्तर निशुल्क उपलब्ध हैं। परिसर में सीता तथा राम कुण्ड नहाने के लिये उपलब्ध हैं। यहां पहले 12 फीट ऊपर उठने वाला गर्म जल स्रोत भी था जो 1905 ई. के भूंचाल में समाप्त हो गया। मणीकर्ण में भी दशहरा मनाया जाता है। जिसमें दस स्थानीय देवता शामिल होते हैं। कुल्लू की तरह रथ यात्रा भी निकाली जाती है।

अन्य मन्दिर

यहां नयना देवी भगवती तथा बैरागियों का कृष्ण मन्दिर भी हैं। कृष्ण मन्दिर के पास ही सूरज कुण्ड है। एक रघुनाथ मन्दिर भी है। जिस में पद्मासन में भगवान विष्णु की मूर्ति स्थापित है। यह मन्दिर कुछ सीढ़ियां उतरने के पशचात नीचे तल पर स्थित है।

श्री नारायण हरि गुरुद्वारा

सन्त श्री नारायण हरि जी कैमल पुर (पाकिस्तान) के रहने वाले थे। इन्होंने अपना काफी समय लाहौर में बिताया था। सन्त जी 1948 ई. में कुल्लू आये। मणीकर्ण में यह स्थान उस समय बिल्कुल वीरान था। सन्त जी परिवार सहित निर्माण तथा सेवा कार्य में निरन्तर लगे रहे। 50 बर्ष के तप तथा श्रम का प्रभाव उभर कर सामने आया। इस समय निशुल्क लंगर व्यवस्था और 4000 लोगों के आवास की सुविधा गुरुद्वारा में हैं। मोटर सड़क से इसे सीधा जोड़ने के लिये नदी पर पहले रस्से का और 1990ई. में लोहे का पुल बना दिया गया है। सन्त जी इसे इच्छापूर्णी तीर्थ तथा हरिहर घाट भी कहते थे। गुरुद्वारा से थोड़ी दूरी पर एक कृत्रिम गुफा है जिसका निर्माण भी सन्त जी ने किया था। वह यहां बर्ष में 40 दिन पाठ और तप करते थे। सन्त हरिहर नारायण जी ने 22 फरवरी 1991 को जल समाधि ले ली थी। अब गद्दी पर उनकी बड़ी बेटी 'देवा जी' बैठीं हैं तथा 'श्री राम' सन्त जी की छोटी बेटी के पति प्रबन्धक का दायित्व निभा रहे हैं।

39. फलोद्यान का इतिहास

1880 ई. तक फलोद्यान का महत्व न था। न ही इनकी स्थानीय खपत थी और न ही कोई विक्रय केंद्र निकट था। फिर भी शौकिया तौर पर कुछ जंगली फल इस पहाड़ी क्षेत्र में उगाये जाते थे। ये जंगली फल थे जंगली अंजीर बीदाना, सियारा, अखरोट, खनोर, आड़ू, शाड़ा (खुबानी), आलूचा, आलू बुखारा आदि।1846 ई. में कुल्लू अंग्रेजों के अधीन आया। पहला उपायुक्त मेजर 'हे' बना। उस समय कुल्लू एक सुन्दर शिकार गाह थी।अंग्रेज यहां शिकार खेलने आते थे। वे कुल्लू की जलवायू तथा सौन्दर्य से आकर्षित होते गये।

चाय उगाने का प्रयास

मेजर 'हे' के प्रोत्साहन से सर्वप्रथम कुछ अंग्रेजों ने 1862ई. में एक चाय कम्पनी "कुल्लू टी कम्पनी" बनाई और बजौरा रायसन और नगर में चाय के बाग लगाये।इस कम्पनी का प्रबन्धक आयसलैंड निवासी मिनिकिन बना।यह चाय कम्पनी असफल रही।चाय के लिये जलवायु कुछ अधिक ठण्डा था। तथा माल की खपत के लिये मण्डी दूर थी।कुल्लू राजा ने भी दियार सड़क पर एक स्थान मे चाय का बाग लगाया जो अब भी बगीचा कहलाता है।

फलोद्यान का आरम्भ

अंग्रेजों ने अनुभव किया कि कुल्लू घाटी फलोद्यान के लिये अति उतम है। इसकी ऊंचाई 4000 से 7500फीट तक है। ओलावृष्टि से मुक्त क्षेत्र तापमान फलोद्यान के लिये उपयुक्त तथा बर्षा 2500 मि. मी. है। अत: उन्होंने यहां बसने और फल उगाने का निश्चय किया। सर्वप्रथम कैप्टन आर. सी. ली. ने सेब लगाने का श्रीगणेश किया। उसने अपनी सेना की सेवा समाप्ति के पश्चात 1860ई. में 38 एकड़ भूमि बन्दरोल में ली तथा इंगलैंड में अपने पिता से सेब, पलम, नाश्पाती तथा चेयरी के पौधे मंगवाये। उसने सेब की सात किस्में अपने बाग में लगाई। वे थी—वाल्डवीन, स्टैफेड, पिपिन, वाईन ऐपल, उर्थेलो, न्यूटन, ग्रीनी स्मिथ, विन्टर। कुल्लू वालों ने इनके रंग आकार आदि के अनुसार इनको अपने नाम दिये। जैसे चित्रु सेऊ, शेगलू सेऊ, शाढ़ी सेऊ आदि। नाश्पाती में विलियम फेवरिट, वार्टलेट, इस्टर वेवेर, डैनी ड्यू, कोमिस इत्यादि किस्में लगाई गई। क्योंकि नाश्पाती अधिक देर तक न रह सकती थी। इसलिये नाश्पाती को बढ़ावा न मिला। 1912 ई. में आर. सी. ली. का देहान्त हो गया। उसके पश्चात ए. एच. सी. बागीचा लगाते एवं देख रेख करते रहे।

1866 ई. में आर. सी. ली. का मित्र कैप्टन ए. टी. वैनन अपनी सैनिक सेवा त्याग कर कुल्लू आया। वह आयरलैंड निवासी था। उसने मनाली में 60 बीघे भूमि खरीदी। डेवनशायर से 200 सेब के पौधे मंगवाये और लगाये। इसके पश्चात मिनिकिन ने आराम गढ़ (रायसन) मेकी ने मनाली, हेनरी डोनाल्ड ने कूटबाई (नगर) तथा कर्नल रैनिक ने बजौरा तथा नगर में फलोद्यान लगाये। कर्नल रैनिक ने नगर में हाल स्टेट 198 बीघे खरीदी तथा 1880 ई. में बागीचा लगाया। इसके बाद में उसने 1912 ई. में मण्डी राजा को बेच दिया। राजा ने उस बगीचा को बाद में निकोलॉईस रोरिक को बेचा। 1886 ई. में रैनिक ने चाय कम्पनी से बजौरा में भूमि खरीदी और अमरीका और आस्ट्रेलिया से सेब के पौधे मंगवा कर लगाये।

बजौरा उद्यान गढ़ स्टेट के नाम से जाना जाता था। 1915 ई. तक कुल्लू में अंग्रेजों की दस के लगभग जागीरें थीं। जिनमें फलोद्यान थे। कुछ अन्य सेब की किस्में थी। न्यूटन पिपन, रस पिपन, आरेंज पिपन, ब्लेहम, मेरी लुई तथा मेकनटाश। ये सभी सेब स्वाद में कुछ खट्टे थे तथा रंग भी अधिक लाल न था। डिलिशियस किस्मों के बारे में अभी जानकारी न थी। स्थानीय लोग अभी तक सेब उगाने के प्रति उदासीन ही रहे।

फलों का निर्यात

जब सेब के बाग तैयार हो गये तो फल भेजने के लिये पेटियां या किलटों का प्रयोग किया जाता था और इन्हें घोड़े या कुली ले जाते थे। माल भू-भू जोत से जोगिन्दर नगर या जलोड़ी जोत से हो कर शिमला पंहुचाया जाता था। 1902 ई. में डाकघर सुविधा कुल्लू में आई। कुल्लू में डाकघर अंग्रेजों की सुविधा के लिये खोले गये। मनाली डाकघर का नाम ही डफडम्बर डाकघर था जो वहां रह रहे अंग्रेज के नाम से था। 1936 ई. में इस डाकघर का नाम बदल कर मनाली डाकघर रखा गया। अब सेब पांच किलो की टोकरियों में बन्द कर पार्सल द्वारा भेजे जाने लगे। मोटर सड़क तक भेजने के लिये कुली रखे जाते थे। एक कुली 40 पौंड भार उठाता था। उसे 6 मील चलना पड़ता था। छः मील पर पड़ाव होता था। हर पड़ाव पर दो सौ कुली नियुक्त होते थे। तथा 24 घण्टे में 90 मील की यात्रा पूर्ण होती थी। 1926 ई. में मोटर सड़क बनने पर भी सेब भेजने का यह प्रबन्ध काफी समय तक चलता रहा क्योंकि यह तरीका सस्ता तथा माल खरीददार तक सुरक्षित पंहुच जाता था।

बागवानी के लिये सरकारी प्रयास

1950 ई. में पंजाब के बागवानी विभाग ने इस क्षेत्र में फलोद्यान लगाने के लिये लोगों को उत्साहित किया। पहला फल संतती तथा प्रदर्शनी उद्यान सेऊबाग (काईस) में लगाया गया। इसमें डिलिशियस सेब की किस्में तैयार की गई। सरकार ने पौधें को रियायती दाम देना आरम्भ किया। बागवानी सम्बन्धी यन्त्रों दवाईयों तथा खाद पर भी छूट दी। लोगों में प्रचार प्रसार के लिये पंचायत स्तर पर जानकारी दी गई। लोगों ने अपनी बंजर भूमि में पहले सेब लगाये। पौधें की मांग बढ़ गई।

सरकार ने 1956–57 ई. में चवाई, 1961–62 ई. में बन्जार तथा लुगड़ भट्टी, 1969–70 ई. में बजौरा तथा 1977–78 ई. में बड़ागढ़ संतती एवं प्रदर्शनी उद्यान लगाये। जहां रोग रहित पौधे उगाये जाते और लोगों को दिये जाते थे। 1957 ई. में माली प्रशिक्षण केन्द्र खोला गया। जहां क्रियात्मक रुप में पौधें का रख रखाव, पौधे लगाना, फल तोड़ने इत्यादि के बारे में जानकारी दी जाती थी। प्रशिक्षण अवधि पहले एक मास थी जो आगे चल कर छः मास कर दी गई। इन प्रशिक्षित मालियों ने निजी क्षेत्र में भी पौध शालायें लगाई और इस समय 93 पंजीकृत पौध शालायें कुल्लू में हैं। इन सब सुविधाओं और प्रयासों के कारण धीरे–धीरे यह सेब क्षेत्र के रुप में विकसित होने लगा। यातायात के साधन बढ़ने तथा डिलिशियस सेब की मण्डी में मांग और अच्छे दाम मिलने पर लोगों ने अच्छे खेतों में भी सेब के पौधे लगाये। यही नही थापर, टाटा बिरला जैसे धनी तथा व्यापारिक घरानों ने भी अपने बगीचे इस क्षेत्र में खरीदे।

कुल्लू प्रमुख फल उत्पादक

इस समय कुल्लू हिमाचल प्रदेश का प्रमुख सेब उत्पादक क्षेत्र है। 21459 हे. क्षेत्र इसके अधीन है। 1991–92 में 264101 टन सेब इस क्षेत्र में उत्पन्न हुआ। निचले क्षेत्र जैसे रायसन, बजौरा पलम के लिये अति उपयुक्त पाया जाता है। इसमें सैटांरोजा बहुत उपयोगी है। इसका पौधा तीसरे साल फल दे देता है और खूब फल लगता है। सेब नीचले क्षेत्रों में लाभकारी नही। इसमें रंग भी नहीं आता तथा कुछ समय पश्चात इसका रुप भी बदल जाता है। पलम के अतिरिक्त बादाम तथा नाश्पाती भी उगाई जाती है। वार्टलैट नाशपाती अधिक लाभकारी है। इसमें अधिक कार्य भी नही करना पड़ता तथा सेब से अधिक भाव पर बिकती है। खराहल का क्षेत्र वार्टलैट नाश्पाती के लिये प्रसिद्धि प्राप्त करता जा रहा है। अन्य फल अखरोट तथा

नींबू हैं। पलम इत्यादि 3793 हे. में उगाये जाते हैं। 1991–92 में ये फल 13617 टन पैदा हुआ।

अनुसंधान तथा फलों की नई किस्में

22 मार्च 1986 को बजौरा में एक अनुसंधान केन्द्र की स्थापना भी की गई है। इसके अधीन सेऊबाग, कटराई, मनाली तथा राहला उपकेन्द्र कार्यरत हैं। यहां फलों, सुगन्धित वृक्षों, औषधियों तथा सब्जियों पर अनुसन्धान किया जा रहा है। 285 फलों की किस्में अनुसन्धान अधीन हैं। कुछ स्कैव अवरोधक किस्में तथा डिलिशियस की सुधरी किस्में तैयार हो गई हैं। निचले पहाड़ी क्षेत्रों के लिये उपयुक्त वास डिलिशियस टौप रैड, रैडसार, सकाई लाईन, सुप्रीम डिलिशियस, हाईमैन, रैडचीफ व आरगिन स्पर किस्में हैं जिनमें अधिक फल और रंग आता है।

पलम की नई किस्में फरंटीयर, क्वीन एन, फ्रायर हैं। ये आकार में बड़े मीठे तथा खराब न होने वाली किस्में हैं। इन पौधों के लगाये जाने से फलोद्यान अधिक लाभकारी सिद्ध होंगें।

कंधारी, गणेश और चावला किस्म के अनार के पौधे भी तैयार किये गये। बेल के आकार का पौधा कीवी भी लगाया गया। यह फल पकने पर खट्टा मीठा होता है। इसमें नर के साथ चार मादा पौधे लगाने पड़ते हैं। इसमें हेवर्ड किस्म अति उतम है। वरुनों, एवौट तथा एलिसन अन्य किस्में हैं। इसका फल देखने को भूरा तथा छोटा होता है। परम्परागत फसलों नकद फसलें अधिक लाभप्रद हुई।

40. यातायात तथा संचार साधन

पुराने रास्ते

1926 ई. से पूर्व कुल्लू को मैदानों से जोड़ने के लिये दो रास्ते थे। बजौरा–कण्ढी कटौला सड़क जो कण्ढी (दूलची जोत) के 9000 फीट ऊंचे दर्रे को पार करके जाती हैं। इस रास्ते से बजौरा से मण्डी 58 कि. मी. है। यह खच्चर सड़क थी जो सारा साल खूली रहती हैं। इस सड़क को 1881 ई. में डब्ल्यू पंरकिस ने बनाया था। दूसरी सड़क ढालपूर कड़ोन भू–भू घटासनी सड़क हैं। यह 12000 फीट ऊंचे भू–भू दर्रे से गुजरती हैं जो सर्दियों में बन्द हो जाती है। इस सड़क की लम्बाई 72 कि. मी. है।घटासनी से जोगिन्द्र नगर कुछ कि. मी. दूर रह जाता है। कांगड़ा की ओर से कुल्लू पर आक्रमण इसी रास्तों से हुआ था। सिक्खों के आक्रमण कण्ढी के रास्ते हुये। शिमला जाने के लिये जलोड़ी नारकण्डा का रास्ता था।कुल्लू से लाहुल के लिए सड़क रोहतांग दर्रे से गुजरती है जो स्पिति से तिब्बत जाती है। लाहुल से ही बारालाचा पार कर लद्दाख जाते हैं। जहां से मध्य एशिया को जा सकते हैं। 1820 ई. में मूरक्राफ्ट इसी रास्ते बलख गया था। तीसरा रास्ता लाहुल से किशतवाढ़ जाता हैं अफगानीस्तान का अमीर शाहशूजा किशतवाड़ से होता हुआ कुल्लू आया था। पुराने समय में अधिक लोग टोलियों में चलते थे। घोड़े और खच्चरो तथा भेड़ों का भी प्रयोग सवारी और सामान ढोने के लिये किया जाता था। तिब्बत से सुहागा, ऊन और नमक भेड़ों पर आता था और अनाज गुड़ चाय इत्यादि उसके बदले ले जाया जाता था। चम्बा, भरमौर, लद्दाख तथा कश्मीर की सेनाओं ने लाहुल के रास्ते से ही आक्रमण किया था।

वर्तमान सड़क का निर्माण

वर्तमान कुल्लू मण्डी सड़क पहले पगडण्डी थी। उपायुक्त कुल्लू लुई विलियम डेन ने इस रास्ते का निरीक्षण किया तथा इसे घोड़ा खच्चर योग्य बनाने की आज्ञा दी। सड़क का निर्माण हो ही रहा था कि उपायुक्त महोदय का स्थानान्तरण हो गया।सड़क बनने तक वह ले गर्वनर पंजाब बन गये थे। उन्हें ही सड़क उद्घाटन के लिये आमन्त्रित किया गया। लारजी में एक जलसा हुआ। जिसमें कुल्लू के सारे नम्बरदार तथा नेगी सम्मिलित हुये। यह 1875 ई. के लगभग की बात है। इसे जार्ज सड़क कहा गया।

लाहुल स्पिति तथा बन्जार सड़क

जलोड़ी लूहरी सड़कों का निर्माण विल्ली डोनाल्ड, स्कॉटलैंड निवासी ने 1913 ई. में किया था जो 1873 ई. में रैनिक स्टैट के प्रबन्धक के रुप में

कुल्लू आया।उसे सड़कों के निर्माण का कोई प्रशिक्षण नहीं था परन्तु फिर भी उसे सरकार ने कुल्लू मण्डल का इंजीनियर नियुक्त किया। वह 25 बर्ष तक कार्यरत रहा।. उसकी सहायता थियोडोर करता था जो छद्म नाम से यहां रहता था।ऐसा कहा जाता है कि यह ड्यूक आफ हेप्सवर्ग (जर्मन) था।

बसों का चलन– कुछ रोचक तथ्य

1926 ई. में मण्डी कुल्लू सड़क तैयार हुई। 1927 ई. में डोनाल्ड इस सड़क से कार लाया। कार लाते समय उसके आगे एक मजदूरों की टोली होती थी जो आवश्यकता अनुसार रास्ते की कांट छांट करती थी। 1928 ई. तक 16 सीटों की बस कुल्लू मण्डी के मध्य चलने लगी। छोटे–छोटे ट्रक माल ढोने के लिये चलाये जाने लगे। परन्तु सड़क बहुत खराब थी। तीखे मोड़, तंग और कच्चा रास्ता जो थोड़ी सी बर्षा होने से बन्द हो जाता था। बदाह के पास सीधी चढ़ाई थी। कई बार वाहनों को चढ़ाई में धक्का लगाना पड़ता था।। वाहन की गति इतनी धीमी होती थी कि चोर आसानी से माल उतार लेते थे। बस में आगे की सीटों का किराया अधिक तथा पीछे की सीटों का किराया कम होता था। पिछली सीटें लम्बी तथा खिड़कियों के साथ होती थीं। जिन पर सवारियां आमने सामने बैठती थीं। बीच में सामान होता था। टिकट चालक काटता था। परिचालक का काम सामान चढ़ाना उतारना तथा गाड़ी का रख रखाव करना था। चढ़ने उतरने के लिये मध्य में खिड़की होती थी। मोटर हैंडल लगा कर स्टार्ट की जाती थी। बहुत कम बसें चलतीं थीं। लोग बसों में बैठने से डरते थे। पैट्रौल से बसें चलती थीं। पैट्रोल पांच गैलन के कनस्तर में आता था। जब 35 सीटों की बसे चलने लगीं तो पण्डोह के पुल पर मोटर के आगे कुली चलता था जिसकी पीठ पर बोर्ड लटका होता था "इस व्यक्ति को पुल पर चार मील प्रति घण्टा वाहन की गति रखने के लिये आगे चलाया जा रहा है"।

कुल्लू वैली तथा मण्डी कुल्लू ट्रांसपोर्ट कम्पनी की बसें चलती रहीं। पंडोह डैम बनने से पूर्व 45 सीटों की बसें चलती थी। डैम के उळपर से रास्ता बनने पर उससे बड़ी बसें चलने लगीं। बाहरी सिराज मणीकर्ण तथा लाहुल के लिये छोटी जीपें 1970 तक चलाई जाती रहीं। सबसे पहले कुल्लू में क्लाईव कम्पनी की बसें चलीं। फिर बसें जैमल सिंह कम्पनी की चलीं।बसों का अड्डा ऊपर के अखाड़ा में था। बस्ती भी उसी ओर थी। कुल्लू वैली ट्रांसपोर्ट कम्पनी का अड्डा नीचे के अखाड़ा में था।

नया बस अड्डा

1992 ई. में बस अड्डा सरवरी ले जाया गया। इस समय हर आधे घण्टे के पश्चात अड्डा से बसें उपलब्ध हो जाती हैं। इनके पश्चात टैक्सी तथा तीपहिया वाहन सेवा भी उपलब्ध है। नया अड्डा अक्तूबर 1994 को बन कर तैयार हुआ। 2500 वर्ग मी. क्षेत्र में बना है।

अन्य सड़कें

बजौरा कण्ढी सड़क पर अब बस चलती है। भू–भू सड़क का भी काफी काम किया जा चुका है। इसके पूर्ण होने पर कुल्लू से जोगिन्द्रनगर के मध्य 56 कि.मी. की दूरी कम होगी। कुल्लू में अब सड़कों का जाल बिछ गया है। हर कोने तक बसें पहुंच रही है जिससे आर्थिक स्मृद्धि बढ़ी है तथा जीवन सुखमय हुआ हैं।

बस सड़कों के दोनों ओर सुरंगे

यह जानना रोचक होगा कि कुल्लू के राष्ट्रीय मार्ग 21 के दोनों ओर भविष्य में सुरंग्रे होंगी। लारजी परियोजना के कारण दक्षिण दिशा में 2.83 कि. मी. सुरंग से नवम्बर 2000 से वाहन गुजर रहे हैं। दूसरी ओर रोहतांग के नीचे से 8.84 कि. मी. सुरंग निकाली जा रही हैं जो 13000 करोड़ से बनेगी। इससे लाहुल के लिये 46 कि. मी. दूरी कम होगी तथा लाहुल के लिये सारा वर्ष रास्ता खुला रहेगा।

कुल्लू-मनाली हवाई पट्टी (भून्तर)

प्रदेश की पहली हवाई पट्टी

एक समय था जब भून्तर हिमाचल प्रदेश की एक मात्र हवाई पट्टी थी। यह पट्टी भून्तर नगर के साथ व्यास के किनारे स्थित है। जिसका उपयोग पहले खेल के मैदान तथा चारागाह के रुप में किया जाता था। सर्वप्रथम एक अंग्रेज ग्रांट गोविन ने 1929 ई. में यहां जहाज उतारा। जिसका चालक एक अंग्रेज तथा सहचालक एक सिख युवक था। इसके पश्चात समय समय पर यहां छोटे जहाज उतारे जाने लगे। भून्तर चारों ओर से ऊंचे पर्वत शिखरों से घिरा हुआ है। परन्तु नदी कि किनारे स्थित होने से दक्षिण दिशा से यह प्राकृतिक हवाई पट्टी बन गई है। इस ओर से आसानी से वायुयान उतारे तथा उड़ाये जा सकते हैं।

1966 ई. से पूर्व कुल्लू पंजाब का भाग था। पंजाब के निवासियों को गर्मी में राहत पाने के लिये कुल्लू अति सुविधा जनक स्थान है चण्डीगढ़

से कुछ मिनटों में वायुयान द्वारा यहां पंहुचा जा सकता है। अब सप्ताह में दो बार जहाज आता है।अतः 1959 ई. में पंजाब सरकार के प्रयासों से नियमित हवाई सर्विस आरम्भ हुई।इस सेवा को प्रोत्साहित करने के लिये पंजाब सरकार 50 प्रतिशत किराया में छूट देती थी। उस समय हवाई पट्टी पर एक छोटी सी वैधशाला थी जो ऋतु के बारे में जानकारी देती थी।न प्रतीक्षालय था और न ही कार्यालय। कुल्लू से भून्तर यात्रियों को ले जाने वाली बस में ही कुर्सी मेज के साथ इन्चार्ज भी जाता था। अपना कार्य समाप्त कर कार्यालय सहित वापस लौट आता था। धीरे–धीरे स्थिति में सुधार आया।अब हवाई पट्टी पक्की बन गई है। प्रतीक्षालय तथा कार्यालय बन गया है।दिन में चार उड़ानों की सुविधा यात्रियों को उपलब्ध है। छूट 1969 ई. तक जारी रही।मई 2001 में इसका नाम बदल कर कुल्लू मनाली हवाई पट्टी रखा गया।हवाई पट्टी का विस्तार 2002 ई. में 32 करोड़ से किया गया।

संचार साधनों का विस्तार

पुराने साधन

कागज तथा शिक्षा के अभाव में पुराने समय में सन्देश मानव द्वारा लाये तथा ले जाये जाते थे। किसी डाक व्यवस्था का प्रश्न ही उत्पन्न नहीं होता था। राजाओं के समय में राजपत्रों तथा आज्ञाओं को लाने तथा ले जाने वाले बतौगडू (हरकारे) तथा बटवाल (चपरासी) हुआ करते थे। दिल्ली दरबार से फरमान विशेष दूतों द्वारा लाये जाते थे। राजा की प्रार्थना भी ऐसे व्यक्तियों द्वारा भिजवाई जाती थी जो दरबारी नियमों से परिचित तथा बातचीत में चतुर होते थे।

अंग्रेजों के समय संचार सुविधा

अंग्रेजों द्वारा 1846 ई. में कुल्लू पर अधिकार करने के पश्चात इसे शिमला जिला में रखा। सरकारी डाक हरकारे द्वारा जलोड़ी जोत नारकण्डा से भेजी जाती थी। कुछ समय पश्चात इसे कांगड़ा जिला से जोड़ दिया गया और डाक कड़ाउन भूभू घटासनी के रास्ता जाने लगी। सर्दियों में डाक बजौरा कण्डी के रास्ता जाती थी। 1860 ई. के पश्चात कई अंग्रेज घाटी में आ बसे। शिक्षा के लिये भी कई स्कूल खोले गये। अतः जहां जहां अंग्रेज रहते थे उनकी सुविधा के लिये 1902 ई. में शाखा डाकघर खोले गये। जिनमें डाक बाबू का कार्य अध्यापक निभाते थे। जिन्हें कार्य के लिये पृथक परिश्रमिक दिया जाता था। पत्र इत्यादि लोग स्वयं डाकघर में दे जाते थे तथा पत्र ले जाते थे। डाक के बन्द थैले हरकारे एक पड़ाव से दूसरे पड़ाव तक ले

जाते थे। उसे हिंसक पशुओं से बचाव तथा आत्म रक्षा के लिये एक बरछा भी मिला होता था। जिसके डण्डे के नीचे बड़े-बड़े घुंघरु लगे होते थे। जिनकी आवाज से साधारण जनता को पता लग जाता था कि सरकारी डाक हरकारा जा रहा है। कलवर्ट अनुसार 1875 ई. में सुलतानपुर में डाकघर था। जिसकी ऊपर की मंजिल में डाक बाबू रहता था। टिकटें तहसीलदार से मिलती थीं। 1918 ई. में कुल्लू में प्रथम उप डाक घर बना। जिसके लिये 1919 ई. में ढालपुर में भवन बनाया गया। 1922 ई. में डाकघर में तार सुविधा उपलब्ध करा दी गई। यह तार सुविधा 1930 ई. तक मनाली पंहुचा दी गई। 1927 ई. में डाक बस द्वारा भेजी जाने लगी।

स्वतन्त्रता पश्चात विस्तार

प्रथम अप्रैल 1970 से कुल्लू जिला का मुख्य डाकघर बना दिया गया जिसके अधीन इस समय 13 उप डाक घर तथा 110 शाखा डाकघर हैं। प्रथम जनवरी 1971 ई. से तार विभाग अलग हो गया। पृथक तार घर अखाड़ा बाजार में किराये के भवन में स्थित है। 1992 ई. से फैक्स सुविधा भी उक्त तार घर में उपलब्ध कर दी गई है। कुल्लू के नया डाकघर का उदघाटन 15.1.98 को हुआ। इस समय डाक घरों की जिला में संख्या 157 है।

दूरभाष सेवा

कुल्लू में 1960 ई. में दूरभाष सेवा डाकखाना कार्य के लिये उपलब्ध हुई। 1962 ई. से साधारण जनता के लिये निजी काल सुविधा आरम्भ कर दी गई। इन्हीं दिनों एक्सचैंज स्थापित करने का कार्य आरम्भ हुआ। परिणाम स्वरुप 1967 ई. में निजी कनेक्शन दे दिये गये। 1987 ई. में सीधी डायलिंग प्रणाली आरम्भ हुई। नया भवन तथा एक्सचैंज बनाया गया जिसमें 1000 कनैक्शन की सुविधा है। इसके बाद जिला में एक संचार क्रान्ति आई। दूरभाष सेवा घर-घर तक पहुंची। मोबाईल सेवा के पदार्पण करने पर संचार सेवा और भी सुलभ हो गई। आते जाते किसी भी कोणे से संदेश दिये तथा सुने जा सकते हैं। यह सुविधा दोनों सरकारी और गैर सरकारी कम्पनियों द्वारा दी जा रही है।

दूरदर्शन सेवा

सशक्त प्रभावशाली एवं आधुनिकतम संचार माध्यम दूरदर्शन सेवा कुल्लू में 1984 ई. में उपलब्ध कराई गई। जब इसका टावर ढालपूर में स्थापित हुआ। दो बर्ष के पश्चात इस टावर को स्थाई रुप से बदाह के निकट पहाड़ी पर स्थापित किया गया। जिससे लाभान्वित क्षेत्र विस्तृत हुआ। अब

सैटालाईट द्वारा यह सेवा जिला के हर कोने में उपलब्ध है। कुछ लोगों ने स्वयं डिश एन्टीना लगा कर सीधा ही दूरदर्शन केन्द्र से सैटलाईट द्वारा कार्यक्रम देखना एवं दिखाना आरम्भ किया है। स्टार टी. वी., जी. टी. वी. इत्यादि ने तो अब मंनोरंजन की दुनिया में तहलका मचा रखा है। दूरदर्शन एक प्रभावशाली मनोरंजन एवं ज्ञान का साधन है।

डफ-डम्बर पुल (भून्तर)

सबसे पुराना

पार्वती घाटी में प्रवेश के लिये भूईन के पास तर (तौर) होता था जहां फुलाई हुई खालों पर व्यास नदी पार की जाती थी। इसी तर ने शहर को भून्तर का नाम दिया जिसका आस्तित्व 1880 ई. से पूर्व न था। इस क्षेत्र का लोहे के रस्सों पर बना सब से पुराना पुल अपने समय का स्थानीय लोगों के लिये एक आश्चर्य तथा वरदान से कम न था। इस पुल का पुराना नाम डफ डम्बर पुल था। गार्डन डफ डम्बर स्काटलैंड निवासी कुल्लू का वन मण्डल अधिकारी था। उसे पार्वती घाटी जाने के लिये कठिनाई आती थी। उसने अपने साधनों से भून्तर में पुल बनाने की ठानी। उसने इंग्लैंड से पुल की सामग्री मंगवाई। सामग्री समुद्र जहाज द्वारा बम्बई पंहुची। वहां से मोटर द्वारा जोगिन्द्रनगर तक पंहुचाई गई। इससे आगे भारी सामान घसीट कर तथा शेष सामान पीठ पर उठा कर लाया गया। सामान कण्ढी जोत के रास्ता से पंहुचा। सामान एक गांव के लोग दूसरे गांव तक पंहुचाते थे। जिसके लिये कोई मजदूरी नहीं दी जाती थी। इस पुल पर डफ डम्बर ने अपनी निजी साधनों से रुपये 50000 की राशि लगाई। इतने ही रुपये सरकार ने पब्लिक फंड से इसे पूरा करने के लिये दिया। पुल के दाहिने द्वार के उपर डफ डम्बर के नाम का पत्थर लगा था।

क्षति तथा पुनर्निर्माण

डफ डम्बर मनाली रहता था और पहले मनाली डाक घर भी डफ डम्बर डाकघर कहलाता था। 1905 ई. में भूंचाल के कारण यह पुल टूट गया। रस्से पानी में डूब गये। इन रस्सों को अंग्रेज सेना मेरनिर की एक टुकड़ी जो भूंचाल पीड़ितों को सहायता के लिये आई थी, ने नदी से निकाला। पुल का पुनः निर्माण 1911 ई. में तीस हजार आठ सौ रुपये से किया गया। 1947 ई. में भी यह पुल बाढ़ की चपेट में आकर टूट गया जिसका निर्माण फिर किया गया। सेवा तथा समर्पण का प्रतीक यह पुल एक शताब्दी से भी अधिक समय से नदी के दोनों किनारों को जोड़े हुये हैं।

42. बिजली परियोजनायें

कुल्लू के पहाड़ों से व्यास नदी निकलती है और इसके मध्य से गुजरती है। परन्तु पहाड़ी क्षेत्र होने के कारण नहरों का लाभ इससे नही उठाया जा सकता है। इसी लिये कुछ लेखकों ने व्यास नदी को बे—आस नाम दिया। परन्तु परियोजनाओं की दृष्टि से यह नदी आशा से अधिक दे सकती है। कुल्लू नदियों की बिजली क्षमता 2582 मै. वाट है। इस पर जिला कुल्लू में बनाये जाने वाली विद्युत परियोजनायें इस प्रकार है:—

पार्वती हाइडल प्रोजेक्ट

यह बहुत बड़ा प्रोजैक्ट है। इस परियोजना अनुसार पार्वती तथा अन्य व्यास की सहायक नदियों के जल का उपयोग कर तीन बिजली घर बनेंगे। पहला नकथान बिजली घर से 750 मेगावाट, सैंज बिजली घर से तथा लारजी बिजली घर से 1251 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी। अर्थात 2051 मेगावाट बिजली का उत्पादन इस परियोजना का लक्ष्य हैं। इस परियोजना से संसार में सबसे सस्ती बिजली उपलब्ध होगी। सर्व प्रथम डिब्बी बोकरी नाला तथा पार्वती नदी के जल से झील बनाई जायेगी जिसमें सदियों के लिये ग्यारह हजार नौ सौ पचास है. मी. पानी इकट्ठा किया जायेगा।1420 मीटर की ऊंचाई से पानी गिरा कर नकथान के स्थान पर जमीन के अन्दर बिजली घर बनाया जायेगा। इसके पशचात सुरंग द्वारा पानी सैंज ले जाया जायेगा। पुलगा में पानी का बहाव जोड़ने के लिये एक बांध बनेगा। सैंज के बिजली घर से 800 मेगावाट बिजली पैदा होगी। सैंज बिजली घर में हुरला तथा जीवा नाला का पानी भी सैंज पावर हाउस में पंहुचेगा। जल को इकट्ठा करने के लिये 56 कि. मी. सुरंगें बनाई जायेगी। आरम्भ में परियोजना पर 750 करोड़ रुपये व्यय का अनुमान था जो मंहगाई के कारण 2400 करोड़ रुपये हो गया है। जो अब और अधिक हो गया है।

इतना धन जुटाना हिमाचल सरकार के लिये सम्भव न था। अतः अन्य चार राज्यों हरियाणा, दिल्ली, गुजरात तथा राजस्थान की सहायता से इस योजना को पूरा किया जायेगा। 20 अक्तुबर 1992 को एक समझौता अनुसार हिमाचल प्रदेश की 5 प्रतिशत तथा हरियाणा की 25 प्रतिशत भागीदारी होगी। हिमाचल प्रदेश 5 प्रतिशत धन लगायेगा। उसे 5 प्रतिशत बिजली बदले में तथा 12 प्रतिशत बिजली मुफ्त मिलेगी। अर्थात 678 लाख यूनिट बिजली निशुल्क उपलब्ध होगी जिस पर से 170 करोड़ रुपये बार्षिक आय होगी। परियोजना के निष्पादन के 33.5 प्रतिशत कर्मचारी हिमाचल प्रदेश के होगें। इसके अतिरिक्त जमा किये गये पानी को मछली पालन, पर्यटक तथा अन्य

आर्थिक कार्यों के लिये प्रयोग करने का अधिकार हिमाचल सरकार को प्राप्त होगा। बिजली ले जाने के लिये ग्रिड तथा ट्रांसमिशन का कार्य पांचों राज्य में भागीदारी के अनुपात में बांटा जायेगा। इस परियोजना का अंतिम यूनिट थलौट के पास कुल्लू मंडी सड़क के साथ भूमि के भीतर स्थापित किया गया है। व्यास नदी के जल को 45.3 मी. ऊंचे बांध के द्वारा रोक कर जल आश्य बनाया गया है। इस कारण सड़क जल मग्न हो जायेगी। यातायात बाधित न हो इसलिये 2.83 कि.मी. की एक सुरंग बनाई गई जो आऊट से आरम्भ हो जाती हैं। यहां 42–42 मै. उत्पादन के तीन यूनिट हैं। 126 मै. बिजली उत्पंन्न हो रही है। बिजली घर भूमिगत है। दूसरे चरण का कार्य भी आरम्भ है।

मलाणा हाइडल चैनल

यह परियोजना मलाणा नाले (मणीकर्ण घाटी) के जल पर बनाई गई है।यह पानी तेजी से पहाड़ी से नीचे उतरता है। घाटी तंग और गहरी है। यहां पानी एक झील में इकट्ठा किया गया।जिसे 485 मीटर की ऊंचाई से गिराया गया है। इससे 86 मेगावाट बिजली उत्पन्न हो रही है।इस पर 385 करोड़ रुपये व्यय हुआ।चौकी से आगे 9 कि. मी. सड़क बनाई गई। इससे 12 साल तक हिमाचल को 54 हजार यूनिट मुफ्त बिजली मिलेगी।इसके बाद 73 मिलियन यूनिट बिजली मिलेगी और 20 प्रतिशत बिजली मुफ्त मिलेगी। पानी तीन कि. मीटर लम्बी सुरंग 860 मी. लम्बे पाईप द्वारा पावर हाऊस तक लाया गया। मलाणा परियोजना का पहला चरण 2.5 बर्षों में पूर्ण हुआ।जलाशय 15 मी. ऊंचा 1000 घन मी. है। सुरंग 102 मी. व्यास 3.65 मी.. है।अब मलाणा परियोजना का दूसरा चरण भी आरम्भ हो गया है।

अलीणी दुहांगन जल विद्युत परियोजना

यह परियोजना अलीणी तथा दुहांगन नदियों के सांझे जल पर जगत सुख के पास बनाई गई है। दोनों नदियों के पीछे अलीणी ग्लेशियर है जो इस परियोजना के लिये स्थाई जल का स्रोत है। इस परियोजना पर 900 करोड़ खर्च आने का अनुमान है। जिसके पूर्ण होने पर 192 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी। इससे हिमाचल सरकार को 12 वर्ष तक 12 प्रतिशत मुफ्त बिजली उत्पन्न होगी। इसके बाद हिमाचल का भाग 18 प्रतिशत होगा। यह परियोजना 105 महीनों में पूरी होगी।राज्य सरकार प्रथम 12 सालों में 32 करोड़ तथा अगले 28 सालों में 60 करोड़ का राजस्व प्राप्त होगा।यहां भूमिगत पावर हाऊस होगा।जिसमें स्वचलित संयंत्र लगेगा।तकनीकी डाटा प्राप्ति के लिये स्क्रीन होगी। 96 मेगावाट के दो टरबाईन होंगे जिन पर 1.5 कि.मी. से पानी

गिरेगा। 40000 क्योसिक मी. की खुदाई करके पावर हाऊस बनेगा। 40 मीट्रिक टन की सात सिंगल ट्रांसफारमर लगाये जायेंगे इनके अतिरिक्त कुल्लू जिला की अन्य परियोजनायें इस प्रकार हैं:—

मणिकर्ण घाटी

1. रासकड़ बिजली परियोजना-

यह परियोजना रासकड़ नाले पर जो मणिकर्ण से 4 कि. मी. दूरी पर है बनाई गई है। इससे 0.8 मैगावाट बिजली उत्पन्न हो रही है।

2. ब्रहम गंगा बिजली परियोजना –

यह परियोजना मणिकर्ण से .5 कि.मी. दूरी पर ब्रहम गांगानदी पर बनाई गई है। पानी का स्रोत स्थाई है। इस पर कार्य पूर्ण होने वाला है। इससे 5 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी। इसमें दो टरवाइन लगेंगे। पानी का प्रवाह इतना अधिक है कि इसके लिये बांध बनाने की आवश्यकता नहीं है। 1मीटर व्यास की पाईप से जल 229 मी. की ऊंचाई से गिराया गया। इस पर 5 करोड़ 30 लाख रूपये की लागत आयेगी। 15 वर्ष के पश्चात इस परियोजना से सरकार को सालाना 90 लाख की आय होगी।

बाहरी सिराज घाटी

1. आनी विद्युत परियोजना-

यह परियोजना आनी नदी पर बनाई जायेगी जो जलोड़ी जोत की ढलानों से निकलती है। इसमें स्थाई पानी बहता है जो विभिन्न चश्मों का संग्रह है। इससे 3 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी।

2. शमशर विद्युत परियोजना –

यह शमशर नदी की परियोजना है। शमशर आनी से 4 कि.मी. जलोड़ी जोत की ओर है। पानी का स्रोत स्थाई है। इससे 1 मैगावाट बिजली उत्पन्न होगी।

3. कुर्पण नदी विद्युत परियोजना –

निरमंड के निकट कुर्पण नदी पर बनाये जाने वाली परियोजना है। इससे 3 मेगावाट बिजली उत्पन्न होगी।

4. सराहन विद्युत परियोजना –

यह बशलेऊ जोत की ढलानों से बहने वाली सराहन नदी पर बनाई गई परियोजना है। इससे बिजली उत्पादन 1.5 मैगावाट होगा।

भीतरी सिराज

तीर्थन जल विद्युत परियोजना –

यह तीर्थन नदी के जल पर बनाई गई परियोजना है। तीर्थन नदी हंसा नाम की दो झीलों से जो (गुशैणी के निकट) से निकलती हैं। पानी का स्थाई स्रोत है। इस परियोजना से 1.10 मैगावाट बिजली उत्पन्न होगी।

मनाली तथा कुल्लू में परियोजनायें

कोठी विद्युत परियोजना

यह व्यास नदी पर कोठी (रोहतांग के रास्ते में) के पास बनाई गई परियोजना है। यह बनकर तैयार हो गई है। 0.20 मैगावाट इससे बिजली उत्पन्न की जा रही है।

सोलंग जल विद्युत परियोजना

यह सोलंग नाला पर बनी जल विद्युत परियोजना है। इसकी क्षमता एक मैगावाट की है। पानी स्थाई रूप से व्यास रिखी झील से आता है जिसे हिमनद से पानी मिलता है।

मनालसु जल विद्युत परियोजना

मनालसु नदी पर बनी जल विद्युत परियोजना है। इसमें मनाली जोत की ढलानों का पानी मिलता है। जहां हिम के भंडार हैं। यह नदी मनाली गांव के निकट से गुजरती है। तीन मैगावाट बिजली उत्पन्न करने की क्षमता है।

छाकी जल विद्युत परियोजना

छाकी नदी के जल की परियोजना है। पानी सीधा टरवाईन पर गिराकर बिजली का उत्पादन किया जाता है।यह कुल्लू की पहली परियोजना है।जिस से बिजली पैदा की गई। यह दो चरणों में पूर्ण होगी। दूसरे चरण का कार्य आरम्भ हो गया है। कुल क्षमता 2 मैगावाट है।

खखनाल परियोजना

व्यास के बाईं ओर खखनाल नदी पर बनाई परियोजना हैं। पानी स्रोत स्थाई है। उत्पादन क्षमता 0.60 मैगावाट हैं।

प्रीणी जल विद्युत परियोजना

यह भी व्यास के बाईं ओर प्रीणी नदी के जल पर बनी परियोजना है। उत्पादन क्षमता 0.50 मैगावाट है।

बड़ाग्रां विद्युत परियोजना

यह बड़ा ग्रां (निकट पतली कुहल) नदी के जल की परियोजना है। इस का पावर हाऊस बड़ाग्रां गांव के पास बनाया गया है। इसकी उत्पादन क्षमता 3 मैगावाट है। यह परियोजना पूर्ण हो चुकी है।

फोजल जल विद्युत परियोजना

फोजल नदी की परियोजना है। उत्पादन क्षमता 6 मैगावाट है। पानी का स्रोत स्थाई तथा पर्याप्त है।

शिरढ़जल विद्युत परियोजना

परियोजना शिरढ़ नदी के जल पर बनी हैं। उत्पादन क्षमता एक मैगावाट है।

बन्दरोल जल विद्युत परियोजना

बन्दरोल नाला पर बनाई गई परियोजना है। जल प्रवाह स्थाई है। उत्पादन क्षमता तीन मैगावाट है।

सरवरी जल विद्युत परियोजना

सरवरी नदी के जल पर तीन जल विद्युत परियोजनायें बनाई गई हैं :—

1. गधेरणा विद्युत परियोजना — यह गधेरणा गांव के पास बनेगी।
2. खोरी रोपा परियोजना
3. सरवरी परियोजना— उत्पादन क्षमता 1.70 मैगावाट है। सरवरी को रोक कर 4 से 6कि.मी. की दूरी पर बांध द्वारा झीले बनेंगी और ऊंचाई से पानी सुरंग द्वारा लाकर गिरा कर बिजली का उत्पादन किया जायेगा। इनमें से केवल सरवरी परियोजना की रिपोर्ट तैयार की गई है। इनके अतिरिक्त

1. जीवा —कुठारी जल विद्युत परियोजना है। उत्पादन क्षमता एक मैगावाट है।
2. क्लाथ जल विद्युत परियोजना जिसकी क्षमता 1.10 मैगावाट है।

43. निकोलोई रोरिख (1874 – 1947)

जब भी कोई पर्यटक नगर जाता है। वह रोरिख आर्ट गेलरी देखना नहीं भूलता। निकोलोई रोरिख 1928 ई. में नगर आवास के लिये रुके थे और यहां के हो कर रह गये। इसका कारण यहां का सुन्दर तथा स्वच्छ जलवायु आकर्षक तथा स्थल ही नहीं अपितु भाग्य का भी हाथ था। वह अपने देश लौटना चाहते थे कि दूसरा विश्व युद्ध आरम्भ हो गया। रोरिख महान यात्री, उत्कृष्ट कवि, विद्वान एवं चित्रकार तथा समर्थ पुरातत्व वेता थे।

घुमन्तु कलाकार का नगर वसेरा

इनका जन्म 1874 ई. में पीटसबर्ग (रुस) में हुआ था। वह एक सुशिक्षित तथा सम्पन्न घराने से सम्बन्ध रखते थे। बचपन से ही कला और इतिहास में रुचि रखते थे। वह 1923 ई. में भारत आये और भारत के ऐतिहासिक स्थानों का भ्रमण किया। फिर दार्जिलिंग के रास्ते सिक्किम गये और वहां कुछ समय बिताया। वहां के बौद्ध धर्म से आकृष्ट हुये। दस मास आवास के पश्चात यूरोप लौट गये। 1925 ई. में पुनः भारत आये। इस बार भ्रमण करते लद्दाख तथा मंगोलिया गये। फिर नगर आ गये। नगर में हाल स्टेट मण्डी के राजा से खरीदी।

रोरिख पैक्ट

नगर से ही उन्होंने 'उरु स्वाति' हिमालय अध्ययन संस्थान की स्थापना की। जिसका उद्देशय भारत तथा हिमालय के देशों का अध्ययन करना था। रोरिख ने युद्धों के विनाश से प्राचीन कलाकृतियों तथा सांस्कृतिक संपदा को बचाये रखने के लिये एक सर्व सम्मत समझौता की परिकल्पना की। जिससे युद्ध के मध्य सांस्कृतिक महत्व के हर स्थान तथा वस्तु की सुरक्षा निश्चित हो सके। कालान्तर में उसे रोरिख पैकट के नाम से मान्यता मिली। वह दो दर्जन भाषाओं के ज्ञाता थे। 12500 पुस्तकों तथा पत्रिकायें उनके यहां के पुस्तकालय में हैं।

1942 ई. में पंडित जवाहर लाल नेहरु उनके निमन्त्रण पर अपनी पुत्री इन्दिरा के साथ आये। पंडित नेहरु तथा रोरिख के कुल्लू आगमन से इस घाटी को अन्तर राष्ट्रीय ख्याती मिली। 1947 ई. में रोरिख का स्वास्थ्य बिगड़ गया। तीन मास की बिमारी के पश्चात 13 दिसम्बर 1947 ई. को उनका देहावसान हो गया। तीन दिन के पश्चात उनके घर के सामने इनकी चिता जलाई गई। उसी स्थान पर एक स्मारक बना है जिस पर पत्थर पर खुदा है :

"भारत के महान मित्र महर्षि निकोलोई रोरिख के पार्थिव शरीर का 15 दिसम्बर 1947 (30 माघ 2004 विक्रमी सम्वत) को यहां अन्तिम संस्कार किया गया। ओम राम।"

रोरिख आर्ट गैलरी

नगर में श्री रोरिख का घर आज भी रोरिख आर्ट गैलरी के रुप में खुला रहता है। इसमें लगे चित्र हिमाच्छादित शिखर हैं। जो मनुष्य में शूचिता तथा पवित्रता की भावना पैदा करते हैं। दो चित्र वहां से दिखने वाली घेपन चोटियों के हैं। यह चोटियां लाहुल में हैं तथा ऊंचाई 19000 फीट है। इसके अतिरिक्त गैलरी में मुखौटे, लकड़ी तथा पत्थर पर की गई खुदाई के नमूने रखे गये है। यहां केवल 45 पेटिंग्सं हैं। शिव पार्वती, गूगापीर, गणेश, विष्णू, दुर्गा आदि की प्रतिमायें भी हैं। श्री रोरिख ने अपने समय में 7000 तैल चित्र तथा टैम्पर बनाये थे। अब रोरिख म्यूजियम तथा रिबर साईड म्यूजियम न्यूयार्क में प्रदर्शित हैं।

रोरिख

रोरिख दीर्घा तथा अन्य कला कृतियों की देख रेख अब एक ट्रस्ट कर रहा है नगर में ही 1997 में एक अन्य भवन जिसे स्थानीय लोग भूत बंगला कहते थे, की मुरम्मत कर एक कला दीर्घा बनाई गई। जहां हिमाचली पहनावे प्रदर्शित किये गये है। कई प्रकार के प्राचीन पात्र, लकड़ी बांस, मिट्टी से बनी वस्तुएं भी रखी गई है। कुछ प्राचीन मूर्तियों का संग्रह भी है। 2004 ई. में इस ट्रस्ट को भारत के प्रधानमंत्री श्री अटल बिहारी वाजपेयी ने एक करोड़ का अनुदान दीर्घा के उत्थान के लिये दिया। ट्रस्ट ने कला को बढ़ावा देने के लिये कई पग उठाये हैं। चित्रकारों को प्रोत्साहन दिया जा रहा है। यहां भारतीय संगीत नृत्य सिखाया जाता है। चित्रकारों की प्रदर्शिनियां लगाई जाती है। कवि सम्मेलन किये जाते तथा नाटकों का मंचन किया जाता है। दीर्घा में प्रवेश के लिये शुल्क है।

44. प्राकृतिक आपदायें

भूंचाल

कुल्लू में 4 अप्रैल 1905 ई. को भयानक भूंचाल आया। बड़े जोर से आवाज आई। भूंचाल के तीन बड़े जोर के झटके हुये। पहाड़ियों के टूटने से इतनी धूल उड़ी कि सब ओर अंधेरा छा गया। पहाड़ियां इतनी कच्ची हो गई कि जब भी बर्षा होती पत्थर खिसकने लगते। दो बर्ष तक ऐसी हालत रही। भून्तर पुल टूट गया। सैंज नदी रुक गई और झील बन गई। तीर्थन नदी में भी छोटी–छोटी झीलें बनीं। एक झील लारजी के पास बनी। झीलें टूटने से बिना बरसात बाढ़े आईं। जिससे किनारे के खेत पशु मकान बह गये। भलान और शैंशर में सर्वाधिक हानि हुई।

जिला कुल्लू में 17058 मकान गिर गये। इसके अतिरिक्त 16058 मकान मुरम्मत के पश्चात फिर रहने योग्य बने। सुलतानपुर कुल्लू में ही एक बस्ती थी जहां 12.5 प्रतिशत मकान गिरे अर्थात हर आठवां मकान गिर गया। 1115 व्यक्ति दबने या घायल होने से मर गये। 4501 गाय, बैल, 12191 भेड़ बकरियां, मुर्गियां भूंचाल के कारण मारी गई। सभी सड़कें टूट गई। ठावा मन्दिर के शिखर, रघुनाथ मन्दिर तथा राजभवन की डयोढी को भी क्षति हुई। मणीकर्ण के चश्में सूख गये। परन्तु कुछ समय के पश्चात फिर फुट पड़े। राम मन्दिर के पास चार फुट तक उठने वाले गरम पानी के स्रोत लुप्त हो गये। लोग घरों को छोड़ कर खुले में सोने लगे। हर ओर भय का वातावरण था।

सहायता कार्य

भूंचाल के समय कुल्लू के उपायुक्त बाहरी सिराज दौरे पर गये थे। उनकी अनुपस्थिति में कर्नल रैनिक ने सहायता कार्य आरम्भ किया गया। जिसमें सभी ने सहयोग दिया। 623000 वृक्ष घर निर्माण के लिये बिना मूल्य दिये। बीस हजार रुपये पशु क्रय के लिये तथा 30000 रुपये मकान बनाने के लिये ऋण के रुप में दिये गये। 38344 रुपये राजस्व तथा 685 रुपये आय कर मुआफ किया गया। अंग्रेज सेना टुकड़ी 'सैम्पर्ज एण्ड माइनर्ज' सहायता कार्य के लिये कुल्लू आई। भून्तर पुल के लोहे के रस्से उन सैनिकों द्वारा ही नदी से निकाले गये।

अखाड़ा में बड़े पीपल के नीचे एक तेली का मकान था। बाहर निकलते समय छत गिरने लगी। उसने उसे अपनी भुजाओं पर तब तक उठाये रखा जब तक कि आस पास के लोग उसकी सहायता को न आये। इस भूंचाल के पश्चात अधिकतर घर काठकूणी बनाये गये या दीवारों में कुछ–कुछ दूरी पर कड़ियां दृढ़ता के लिये लगाई जाती रहीं।

बाढ़े

कुल्लू जिला की नदियों में समय समय पर बाढ़ें आती रहती है। इस पहाड़ी क्षेत्र में बाढ़ों के आने के तीन मुख्य कारण हैं।

1. निरन्तर वर्षा के साथ हिम खण्डों का तेजी से पिघलना।
2. किसी नदी या नाले का रास्ता अबरूद्ध हो जाना। फिर इस तरह बनी अस्थाई झील का एकदम टूट जाना।
3. बादल का फटना

कुछ बाढों का वर्णन यहां किया जाता है:-

बजौरा खड की बाढ़

1400 ई. में बजौरा खड में भयानक बाढ़ आई। कई दिन तक वहां मुसलाधार बर्षा होती रही। आस पास के पशु, मकान तथा खेत बह गये। नाला नें अपना रास्ता बदला। कई मन्दिर और मकान बहा कर ले गया। वह बस्तियां बजौरा तथा हाट की थीं। नदी के किनारे कई शिव लिंग मिले हैं। ये सभी उन मन्दिर के अवशेष हैं जो इस बाढ में नष्ट हुए। एक शिवलिंग मणीकर्ण और एक बजौरा में सड़क के साथ स्थापित किये गये। 1900 ई. में बजौरा में बाढ़ फिर आई और बडी हानि हुई।

दुआड़ा बाढ़

1894 ई. में फोजल नाले में भयानक बाढ़ आई। उस बर्ष बहुत हिमपात हुआ था। बर्फ टूटने और खिसकने से नाले में एक बड़ी झील बन गई। एक दिन साफ मौसम में जब कि सब ओर धूप खिली हुई थी, झील टूट गई। और अचानक बड़ी भारी बाढ़ आ गई। इस बाढ़ से दुआड़ा डोभी तथा फोजल में भारी हानि हुई। पेड़, पशु, मकान और आदमी सब बह गये। बाढ़ का जोर इतना था कि पेड़ धरती के साथ खड़े खड़े ही चलने लगे। यह काथी कुकड़ी से आरम्भ हुई। फोजल दुआड़ा डोभी को पूर्ण नष्ट कर दिया तथा अपने प्रवाह से व्यास नदी को भी रोक दिया। इसके बाद ही ये दोनों गांव ऊंचे स्थान पर बसे। यह बाढ़ काली हियांटी के नाम से जानी जाती है। जिसकी याद एक लोकगीत में जीवित है:-

बीझे न चुटी काली हियांटी ए, कणादला हुआ थियाड़ा।।
काथी चुटी कुकड़ी बोला, सारा ढोसू डोभी-दुआड़ा।

इसी गीत का रचयिता कसालू ब्राहमण था। (काली हियांटी खिले धूप वाले दिन में आई जिससे दिन में अन्धेरा हो गया। काथी तथा कुकड़ी गांवों को नष्ट करने के पश्चात सारे डोभी दुआड़ा को बहा कर ले गई)।

व्यास नदी की बाढ़ें

1947 ई.की बाढ

सितम्बर 1947 में निरन्तर दस दिन बर्षा होती रही। जिस कारण जिले के सभी नदी नालों में बाढ़ आ गई। हर जगह पानी सीमायें तोड़ कर बहने लगा। मनाली से आउट तक के सभी पुल टूट गये। कलाथ में गरम पानी का चश्मा और उस पर बना कमरा बाढ़ से बह गया। पतली कूहल में बड़ाग्रां नाला का पानी ट्राउट फार्म में घुस गया। सभी मछलियां बाढ़ की नजर हो गई। पानी पतली कूहल बाजार से हो कर गुजरा। कलाथ के नीचले भाग में भी पानी आ गया। सभी बिहालों के सेंकड़ों पेड़ बह गये। अखाड़ा बाजार से पानी बहने लगा। अखाड़ा पेट्रौल पम्प झील बन गई सरवरी नदी ने अपना रास्ता बदल लिया और व्यासा मोड़ के पास से चलने लगी। रास्ता बदलने के कारण सरवरी के कई मकान पानी में बह गये। भून्तर बाजार में नाला का पानी आ गया। भून्तर पुल टूट गया। मौहल तथा बजौरा नालों ने तबाही मचाई।फोजल नाले की बाढ़ के कारण डोभी में अंग्रेजों की कब्रें भी पानी में बह गई। सारी सड़कें इतनी खराब हो गई कि मुरम्मत करने में महीनों लगे। ढालपुर से अखाड़ा को बस लोअर ढालपुर के रास्ते से आती रही। मणीकर्ण के नीचले भाग में भी पानी आया। सैंज नाला ने भी तबाही मचाई। आनी, तीर्थन तथा कुर्पन नदियों में भी बाढ़ आई इन्होंने भी हानि पहुंचाई। वस्तुओं का अभाव हो गया। जीवन अस्त–व्यस्त हो गया।

1951 ई. की बाढ़

1951 ई. में व्यास नदी में बाढ़ फिर आई। सड़कों और पुलों को फिर हानि हुई। सरवरी बाढ़ से फिर अपने पुराने रास्ते पर बहने लगीं। यह बाढ़ भी निरन्तर बर्षा के कारण आई थी। मोहल नालों में 1947 ई. से 1951 ई. तक थोड़ी सी बर्षा से ही बाढ़ आ जाती थी। व्यास ने फिर अपना रास्ता कई स्थानों पर बदला। सब बिहालों को फिर हानि हुई। सैंकड़ों पेड़ बह गये। अखाड़ा बाजार में फिर पानी आया। कई नये नाले बने।

1993 तथा 1995 की बाढ़ें

13 जुलाई 1993 को व्यास नदी में एक बार फिर भीषण बाढ़ आई। इस बार नदी ने मनाली से ही अपना रास्ता बदलना आरम्भ किया। उसने मनाली से पतली कूहल तक दाहिनी ओर बहाव बढ़ाया। जिससे मोटर सड़क स्थान–स्थान पर बह गई। दो मास तक सभी बाहन नगर के रास्ते मनाली जाते रहे। राम शिला का पुल टूट गया। नदी की मुख्य धारा टापू के बीच से बहने लगी। वहां 35 के लगभग दुकानें और मकान बह गये। हनुमान

मन्दिर गिर गया। खराहल घाटी कई दिन अलग–थलग पड़ गई। भून्तर के नीचले क्षेत्र में पानी भर गया। इस बाढ़ में 50 करोड़ की हानि हुई। सात व्यक्ति बह गये। 2000 से अधिक पशु इसकी चपेट में आये। 600 मकान ढह गये। 250 मकानों को क्षति हुई। 325 पशु शालायें और 500 घराट बह गये। 3418 हे. भूमि बंजर हो गई। सरकार ने 154 परिवारों को 6 लाख रुपये राहत के रुप में दिये। 1995 ई. में फिर भंयकर बाढ़ आई। जिससे जन धन की बड़ी हानि गोशाल, शनाग, बुरूआ, पलचान, सोलंग, वाहंग, पतलीकूहल, चौरी बिहाल में हुई। दुकाने मकान भूमि सब बह गये। रिवरबैंक, होटल, सरस्वती विद्या मन्दिर, 10 पुल आदि बह गये। एक पशु चिकित्सालय, स्कूल बस, ट्रैक्टर कई दो पहिया वाहन एक ट्रक एम. ई. एस. तथा सासे के भवन सब समाप्त हो गये। यह बाढ़ बड़ी विनाशकारी थी। मनाली पतलीकूहल के मध्य 4 किमी सड़क बची।

शाट नाला की बाढ़

शाट भुन्तर से 25 किमी दूर है। 11 जुलाई, 1994 को शाट नाला में बाढ़ आई। शाट के पीछे 12 किमी दूरी पर बादल फटा। नाला में पानी 400 फुट की चौड़ाई और 30 फीट की ऊंचाई मे बहने लगा जिससे 15 मिनट में पुल, सड़क पर खड़ी बस, एक कार, एक मोटर साईकिल बह गये। आस पास के 15 परिवारों के मकान जिनके साथ 11 पुरूष, 7 महिलायें तथा 9 बच्चे भी बह गये। 3 व्यक्ति ऐसे थे जिन्हें जल धारा ने कनारे पटक दिया। तीन करोड़ की हानि हुई। हवा का इतना जोर था कि कुछ लोग उड़ते हुये देखे गये। 12 आदमी घायल हुये।

बाहरी सिराज की बाढ़ें

आनी की बाढ़

1976 ई. में आनी में भीषण बाढ़ आई। दयोहरी खड के जल स्रोत के निकट पुनन गांव के ऊपर बादल फटा। पानी तेजी से ढलानों से नीचे उतरा और लकड़ी पत्थर मिट्टी साथ लाया जिससे आनी से थोड़ी उळपर एक झील बन गई। जब झील टूटी तो पानी अपने साथ सब कुछ बहा कर ले गया। आठ दुकानें और मकान बह गये जिनसे सामान निकालने का भी अवसर न मिला। एक आरा मशीन इसकी चपेट में आई। स्कूल, पुल और सड़क भी बह गये। इसके पश्चात हर बर्ष खड में 1980 तक बाढ़ें आती रहीं।

सरगा-कुशवा की बाढ़

1978 ई. में कुशवा पहाड़ी पर बादल फटा। रात के दो बजे भयानक बाढ़ आई। कुशवा गांव में 14 परिवार रहते थे। उनमें केवल एक महिला जो अपने मायके गई हुई थी ही बची। गांव में केवल मन्दिर तथा स्कूल भवन बचे। पानी के रास्ते में पेड़ भूमि इत्यादि जो कुछ भी आया बह गया और सतलुज में जा मिले। सब पशु भी बह गये।

आग

लकड़ी के मकान होने के कारण अग्नि की दुर्घटनायें इक्का दुक्का होती रहती हैं। ऐसे भी भीषण अग्नि कांड हुये जिनमें सारा का सारा गांव भस्म हो गया। ऐसे गांव नीचे दिये गए हैं:

गांव तन्दला, सोईल, जाणा, मनिहार (गड़सा घाटी), घियागी, कोठी सारी, टील (बन्जार), शहरी क्षेत्र में अखाड़ा बाजार की दो और मनाली बाजार की दो दुर्घटनायें काफी गम्भीर थी। अखाड़ा बाजार की पहली दुर्घटना में दस दुकानें और मकान और एक ट्रक जला था। दूसरी दुर्घटना में आठ दुकानें और मकान जले थे। मनाली में मनु मार्किट दो बार जल चुकी है।

जंगल की आग

1921–22 ई. में कुल्लू के लगभग सभी जंगलों में भयानक आग लगी थी। जिसमें सरकार की ओर से निकाली जा रही लकड़ी भी जल गई। अंग्रेज सरकार ने गांवों पर सामूहिक जुर्माना किया और उन्हें अपने प्रयोग की लकड़ी देनी बन्द कर दी। इस आग से बहुत से परिवर्तन आये।बर्षा न हुई। बहुत से जंगली पशु–पक्षी मर गये। बहुत पेड़ सूख गये।1967–68 में कर्मचारी हड़ताल के मध्य भी जंगलों को फिर आग लगी। सभी जंगल इससे प्रभावित हुये। पेड़ों पशु पक्षियों की भारी हानि हुई।

दुर्भिक्ष

1923 ई. के पश्चात कई सालों तक सूखा पड़ता रहा। फसलें न होने के कारण दुर्भिक्ष फैल गया। मोटर सड़क का अभी निर्माण हो रहा था। इसलिये अन्न बाहर से नहीं लाया जा सकता था। लोगों की क्रय शक्ति भी ठीक न थी। इस कारण सैंकड़ों लोग दूर्भिक्ष के शिकार हुये। 1949 ई. में सिराज के क्षेत्र में दुर्भिक्ष पड़ा। परन्तु अपनी सरकार ने सहायता पंहुचाई। एक शमशर के डिपो लूटे जाने के अतिरिक्त कोई घटना न हुई।

महामारियां

हैजा

1928 ई. में कुल्लू में भीषण हैजा फैला। हर गांव में मौतें हुई। कई बार एक मुर्दा पंहुचाने के पश्चात दूसरे को ले जाना पड़ता था। मुर्दा उठाने से लोग कतराने लगे। कई गांव में नेगी या पुलिस को हस्तक्षेप करना पड़ा। इसके पूर्व 1890 ई. में भी कुल्लू में हैजा फैल चुका था।

चेचक

1929 ई. में इसका प्रकोप अधिक रहा। लोग चेचक का टीका लगाने से भी कतराते थे। इसके लिये सरकारी अधिकारियों की सहायता ली जाती थी।

जंगी बुखार

1919 ई. में जंगी बुखार बड़ी तेजी से फैला जिससे सैंकड़ों मौतें हुई।

पशु महामारी

1924 से 1927 ई. में पशु महामारी 'रैंडर पैस्ट' फैली जिस कारण हजारों पशु मर गये। लोग पशुओं को दूर जंगलों में छोड़ आये। दूध घी की बहुत कमी हो गई। किसानों के पास खेत जोतने के लिये बैल तक न रहे। रैंडर पैस्ट 1930 ई. में भी फैली परन्तु इस बार इसका प्रकोप रायसन शरची तथा तुंग कोठियों तक सीमित रहा।

टिड्डी दल आक्रमण

1949 में टिड्डी दल का आक्रमण कुल्लू पर भी हुआ। जलोड़ी कोठी का इलाका इससे अधिक प्रभावित हुआ। टिड्डी दल का एक भाग कुल्लू से होता हुआ जगतसूख मनाली तक भी पंहुचा। इस टिड्डी दल को जल्दी ही मार दिया गया। उन दिनों बर्षा हुई। जलोड़ी तथा मनाली जगतसुख में बर्फ पड़ी। टिड्डियों को इकटठा कर गड्ढे में दवा दिया।टिड्डियां सर्दी से अधमरी हो गई थीं।

45. कुल्लू के गौरव

डा. तेज प्रताप सिंह

डा. तेज प्रताप का जन्म 2 जुलाई, 1952 को पड़ेई गांव (जरी के निकट) पार्वती घाटी में कृषि परिवार में हुआ। 1983 ई. में इन्होंने हिमाचल प्रदेश विश्वविद्यालय शिमला से डा. की उपाधि प्राप्त की। पहाड़ी खेतों से अधिकतम आय प्राप्त करने पर शोध किया है तथा कृषि विशेषज्ञ हैं। हिमाचल प्रदेश चौधरी सरवण कुमार कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर (कांगड़ा) के उप कुलपति रहे। इससे पूर्व 13 वर्ष तक नेपाल में अन्तर राष्ट्रीय कृषि विकास संस्थान मे कार्यरत रहे, जिसमें 7 वर्ष वह इसी संस्थान के मुख्य रहे। उप कुलपति का कार्यकाल 2004 ई. में समाप्त होने पर वह पुनः नेपाल चले गये। इन्होंने 15 पुस्तकें पहाड़ी कृषि पर लिखी हैं और 5 बीडीओ फिल्में भी बनाईं हैं। उन्होंने खूब भ्रमण किया है तथा 25 देशों की यात्रायें की हैं।जून 2007 से कृषि विश्वविद्यालय पालमपुर (कांगड़ा) में उप कुलपति पुनः नियुक्त हुए।

श्री भुपेन्द्र सिंह ठाकुर

इनका जन्म सितम्बर 1948 में बटाहर गांव (डा. हरिपुर) में हुआ। इनके पिता श्री खीमी राम ठाकुर सहकारिता विभाग से रजिस्ट्रार के पद से सेवा निवृत हुये थे। इनकी शिक्षा–दीक्षा शिमला में ही हुई। इनके दो भाई और दो बहिनें हैं। इनका विवाह नगर में हुआ था। इन्हें बचपन से ही सैना का शौक था। इन्होंने खडक वासला, एनडीए में सैनिक प्रशिक्षण लिया। यह 1965 ई. बैच के कमीशंड अधिकारी हैं। इन्होंने प्रथम बटालियन की कमान का भी उतरदायित्व निभाया। यह सैना में विभिन्न पदों पर रहे। 56 वर्ष की आयु में 5.1.2005 को सह सैनाध्यक्ष नियुक्त हुये ओर इसी पद से 30.9.05 को सेवानिवृत हुये। 2006 ई. में इन्हें हिमाचल राज्य लोक सेवा आयोग के अध्यक्ष के रूप में 6 वर्ष के लिये नियुक्त किया गया।

विनोद सूरी

श्री विनोद सूरी का जन्म 13.1.1955 को हुआ। यह सुलतानपुर निवासी श्री वासुदेव सूरी के सुपुत्र हैं। श्री वासुदेव सूरी वन विभाग कार्यालय में कार्यरत रहे और कुल्लू नगर के पार्षद भी रहे। इनके पांच भाई और तीन बहिनें हैं। ये बड़े मेधावी विद्यार्थी थे तथा हर श्रेणी में छात्रवृति प्राप्त करते रहे। इन्होंने अन्तरराष्ट्रीय स्तर की 100 से अधिक वैज्ञानिक तथा तकनीकी रचनायें

विभिन्न सम्मेलनों में पढ़ी तथा प्रशंसा प्राप्त की। यह 2006 ई. में चन्द्रशेखर आजाद कृषि विश्व विद्यालय कानपुर (यूपी) के उप कुलपति नियुक्त हुये।

कुल्लू की शैल पुत्रियां

एवरेस्ट विजय पर्वतारोहियों की एक अभिलाषा होती है। क्योंकि एवरेस्ट संसार की सबसे ऊंची 8848 मीटर ऊंची चोटी है। कुल्लू की तीन किशोरियों डिक्की डोलमा, राधा देवी तथा दीपू शर्मा ने मई, 1993 में यह अद्‌भुत शौर्यपूर्ण कार्य कर दिखाया। डिक्की डोलमा (19 वर्ष) पलचान गांव की रहने वाली है। राधा देवी (20 वर्ष) कोठी गांव से है तथा दीपू शर्मा (22 वर्ष) मनाली से सम्बन्ध रखती है। वह उस समय एम ए अंग्रेजी अन्तिम वर्ष की छात्रा थी। इस सफल अभियान की नेता श्रीमती विछेन्द्री पाल (हरियाना) थीं। तीनों लड़कियों को 1994 ई. में राष्ट्रीय एंडवेंचर सम्मान दिया गया जिसमें प्रत्येक को 50000/– रू. और एक सम्मान पटिका मिली। दीपू शर्मा को भारत सरकार के मानव संसाधन मंत्रालय द्वारा नबम्वर 1995 में साहसिक क्रीड़ा क्षेत्र का राष्ट्रीय शौर्य पुरस्कार दिया गया। डिक्की डोलमा तथा राधा देवी को पर्वतारोहन संस्थान में मनाली में तृतीय श्रेणी की नियुक्ति दी गई। राज्य सरकार ने तीनों लड़कियों को एक–एक लाख रूपये ईनाम में दिये।

विशिष्ट स्कीईग खिलाड़ी

पलचान, बुरूआ और कोठी गांव ने विशिष्ट स्कीइंग खिलाड़ी दिये हैं। जिनके नाम नीचे दिये जाते हैं:–

मुरलीधर, चुनी लाल, नानक चन्द, रोशन लाल, डिक्की डोलमा, लुदर चन्द, राधा देवी, निर्मला देवी, जगदीश तथा किरण देवी। पलचान गांव के चुनी लाल ने तीन बार टाटा मेमोरियल अल्पाईन रनिंग ट्रॉफी जीती। जिसके साथ 10000 रू. का ईनाम था। पलचान की ही किरणदेवी आयु 14 वर्ष ने फुकुशिमा जापान में हुई स्कीइंग छठी जूनियर प्रतियोगिता में छठा स्थान प्राप्त किया। सोलंग मे वर्ष 2000 ई. मे हिम खेलों का मिनी ओलम्पिक हुआ। जिसमें उपरोक्त खिलाड़ियों की भूमिका तथा प्रदर्शन अति उतम रहा। इन्होंने कुल्लू और भारत को गौरव प्रदान किया। ये सभी मनाली, पलचान, बुरूआ तथा इनके निकट के गांव से सम्बन्धित है।

कुल्लू के कौतुक

दुर्लभ वृक्ष

मनाली में मनालसू नदी के समीप रामबाग क्लब हाऊस मार्ग पर एक दुलर्भ वृक्ष 'गिन्नो वाईलेवा' हैं। यह पेड़ प्राचीन जीवित जीवाशम कहलाता है। यह मुख्य रुप से चीनी पौधा माना जाता है। जिसकी विश्व में संख्या बहुत ही कम है। यह जिम्बो स्वमर्ज जाति से है। इसके पते केशों के गुच्छे के समान होते हैं। यह कई रोगों के उपचार के काम आता हैं।

उल्टी केलो

कुम्हारटी (हलाण) में ऐसा देवदार का वृक्ष है। जिसे देखने से लगता है कि यह उल्टा उगा है। इसे टुण्डी राक्षस की केलो कहते है। क्योंकि इस वृक्ष के नीचे फागली मेला भी होता है। जिसमें टुण्डी राक्षस का एक पात्र होता है। कुछ व्यक्ति इसे वहां के देवता हरशु नारायण का चमत्कार मानते हैं।

जमलू केलो

मनाली तथा कलाथ के मध्य जंगल के टुकड़ा संख्या तीन की बूरजी संख्या चार के निकट एक चट्टान के उपर एक केलो का वृक्ष है जिसे 'जमलू केलो' कहते हैं। इसकी परिधि 21 फुट, छत्र 112 फुट और ऊंचाई 75 फुट हैं। इसकी आयु 1200 साल से भी अधिक है।

विचित्रा देवदार वृक्ष

हलाण (नगर) के देवता हर–हरशु नारायण के स्थान पर लगभग 5000 बर्ष पुराना देवदार वृक्ष है। जिसका तना अन्दर से खोखला हो गया था और हिमपात के कारण टूट गया। श्रद्धालुओं ने इस बीस फुट ऊंचे खड़े खोखले तने में मिट्टी भरी ओर तने के अन्दर एक और देवदार पौधा लगा दिया। यह देवदार बढ़ कर वृक्ष बन गया है। जब कि खोखले तनें से भी चार शाखायें फूट गई तथा इन चारों शाखाओं ने भी विशाल वृक्ष का रुप धारण कर लिया हैं। बड़ा भव्य दृश्य मिलता है। स्थानीय लोगों का कहना है कि यह वृक्ष अब भी मूल वृक्ष का एक चौथाई है। इस वृक्ष के पास फागली मेले में राजा के बैठने तथा घोड़ा बांधने का स्थान हैं।

पत्थर के नीचे हवा

राहला और कोठी के मध्य एक पत्थर है जिसके नीचे से तेज हवा निकलती है। इस हवा के निकलने के रहस्य का पता नही चलता।

सांप के दर्शन

राहला से मढ़ी की ओर पैदल जाते हुये रास्ते में एक पत्थर के नीचे सांप ओर छिपकली रहते हैं। यात्री उन्हें भेंट चढ़ाते हैं और दर्शन करते हैं। ये सांप काटते नहीं। यही अन्तिम छोर है जहां तक सांप पाये जाते हैं।

बिन बादल बिजली

छियोंर (भून्तर) से लगभग आठ कि. मी. दूर गांव में मंगलेश्वर महादेव का मन्दिर है। यहीं शिव लिंग पर साफ आकाश से बिजली गिरती है जिससे पिण्डी के टुकड़े हो जाते हैं। जिन्हें मक्खन से जोड़ा जाता है। इस बिजली गिरने के रहस्य के बारे में कुछ पता नहीं चलता।

एक चमत्कार

थरास का देवता मारकण्डा वैशाख संक्रान्ति को मकराहड़ स्नान के लिये जाता है। स्नान के पशचात इसके रथ को एक खेत में रख दिया जाता है। जहां इसका स्थान है। रथ वहां स्वयं धरती पर लेट जाता है तथा एक समय पश्चात स्वयं खड़ा हो जाता है। इस देवी चमत्कार को देखने के लिये बहुत लोग इकट्ठे हो जाते हैं।

बिजली महादेव

कुल्लू के सामने व्यास नदी के वायें किनारे 12 कि. मी. दूरी पर बिजली महादेव का मन्दिर है। यहां की ऊंचाई 7000 फीट है। यहां से कुल्लू घाटी का बड़ा मनोरम दृश्य दिखाई देता है। मन्दिर के बाहर 70 फीट ऊंची ध्वजा लगी है। मन्दिर में शिवलिंग हैं। जो मक्खन से जुड़ा है। इस शिवलिंग पर ध्वजा से हो कर बिजली गिरती है।जिससे शिवलिंग के टुकड़े–टुकड़े हो जाते हैं। उन टुकड़ों को इकट्ठा कर मक्खन से जोड़ा जाता है। और पुनः विधि पूर्वक लिंग की स्थापना की जाती है। यहां बिजली बर्षा के दिन ही गिरती है।

देवता का स्नान (आंखो देखी घटना)

जलोड़ी जोत 10000 फीट के निकट एक पवित्र झील है। जिसका नाम सिरयोलसर हैं इस स्थान को तीर्थ माना जाता है। यहां स्नान करते है। भेंटें चढ़ाते हैं तथा घी की धार डालते हुये परिक्रमा करते हैं। झील का पानी अति निर्मल है। जन श्रुति अनुसार पानी में यदि पता भी गिरे तो चिड़ियां उठा ले जाती है। यहां देव रथ भी स्नान के लिये आते हैं।

हमारे यहां पंहुचने के समय झील के साथ ऊंचे स्थान पर देव रथ रखा था और श्रद्धालू स्नान की तैयारी कर रहे थे। थोड़ी देर में बाजा बजने लगा। श्रद्धालू देव रथ को कन्धे पर उठाते तेजी से आये और पानी में घुसते चले गये। देव रथ स्वयं दाई और वाई ओर झुक कर पानी में बड़ी तेज डुबकी लगाता और खड़ा हो जाता। पानी से वह इतनी तेजी से टकराता था कि छपाक की ध्वनि होती। इतने में रथ को उठाने वाला अगला आदमी पानी में डूब गया। रथ की अगली अरगलें भी पानी में डुब गईं। परन्तु अगले क्षण वह अरगलें ऊंची उठी और उस व्यक्ति को कम गहरे स्थान पर ला खड़ा किया। यह अदभूत रोमांचकारी दृश्य था।

देवताओं के आवास का वन

हलाण नगर से पूर्व छोर में चारों ओर लगभग 500 मीटर दीवार से घिरा एक नगौणी वन है। इसके मध्य में एक सरोवर है। सरोवर का पानी सीमा रेखा से बाहर चश्में के रुप मे गिरता है। वहां एक अन्य दीवार है। चश्में के आगे देवता के गूर और पुजारी नंगे पांव जाते हैं। अन्य के लिये प्रवेश निषिध है। यह स्थान वासुकी नाग का मुख्य स्थान तथा अन्य देवताओं का आवास माना जाता है।

हिम लिंग

सोलंग घाटी में हिम लिंग प्राकृतिक रूप में बनता है। जिसका नाम अंजनी महादेव है। सोलंग घाटी में पानी के जमने से हिम लिंग वैसे ही बनता है जैसे काश्मीर में अमर नाथ के स्थान पर। यह नबम्बर मध्य से अप्रैल मध्य तक देखा जा सकता है।

वायु से हिलती चट्टान

वास्तव में बिड़ंग में (डांगधार) त्यून से आगे लग घाटी में एक पत्थर है, जो वायु के चलने के वेग से हिलता है। चट्टानों के उळपर एक ऐसी चट्टान है। जो ऐसी टिकी है कि जोर से वायु चले तो वह हिलती है परन्तु गिरती नहीं।

46. सन्दर्भ ग्रन्थ

सहायक ग्रन्थ एवं पत्र पत्रिकायें

क. हिन्दी

1.	हिमाचल इतिहास	डा. सी. एल. मल्होत्रा
2.	पहाड़ी भाषा कुलूई के विशेष संदर्भ में	श्री मोलू राम ठाकुर
3.	हिमाचल के पूजित देवी देवता	श्री मोलू राम ठाकुर
4.	कलूत देश की कहानी	श्री लाल चन्द प्रार्थी
5.	पत्रिकायें	हिम भारती, हिम प्रस्थ, भृगु तुंग, सोमसी, विपाशा, गिरीराज

ख. अंग्रेजी

1.	हिस्ट्री आफ पंजाब हिल स्टैटस	जे. हेचिसन एण्ड जे. बोगल
2.	एनशयन्ट हिस्ट्री आफ इण्डिया	दुग्गल
3.	कुल्लू, दी एण्ड आफ हेविटेबल वर्ल्ड	चेटवोड पीनलोप
4.	ट्रारइबल कस्टमज आफ कुल्लू सब–डिबीजन एण्ड कस्टोमरी ला मेनयूल	सरकारी रिकॉर्ड
5.	अरथ क्वेक रिपोर्ट	13 अक्तुबर 1905
6.	आई. सी. ईरसकिन, सुपरिन्टिन्डन्ट आफ हिल स्टेटस रिपोर्ट	(8 फरवरी 1946)
7.	हिमाचल प्रदेश आर्ट एण्ड आर्किटेक्चर	मियां गोवर्धन सिंह
8.	न्यू मिजमैटिक हिस्ट्री आफ हिमाचल	परमेश्वरी लाल गुप्ता

ग. उर्दू

1.	रेहन्माये कुल्लू	सर्वजीत गौड़
2.	हस्तलिखित इतिहास कुल्लू	नाथूराम सुपरिन्टैन्डेन्ट
3.	हस्तलिखित इतिहास कुल्लू	दीवान हरदयाल तहसीलदार
4.	सियासी रिपोर्ट	सरकारी रिकॉर्ड

छायाकंन

मुख आवरण चित्र :-

हिडिम्बा मन्दिर, मनाली

भीतरी पृष्ठ :-

1 कुल्लू नाटी
2 चैणी ग्राम
3 डाढ़िया कोट
4 हारचा (मलाणा)

अन्तिम आवरण :-

कुल्लू दशहरा

छाया चित्र :- अशोका स्टुडियो, आ० बा० कुल्लू (हि०प्र०)
भारत स्टुडियो, सरवरी बाजार, कुल्लू (हि०प्र०)
के सौजन्य से

राय ज्ञान सिंह के पक्ष में राज पुरोहित कुल्लू द्वारा लिखित कुल्लू के बुद्धि जीवीयों को पत्र

श्री ऐसा देव पाण्मीक कुल्लू राजे मालुम रहे
सौलमानी मानुं और नेगियान और भाईवरादरी
न और कुलभोहनान कुल्लू के महंत बेरागियान
कोमेके हनाहं तो मे श्री राजे ठाकुर सींघ का पुत्र
वंस कंदर का हुं आ तुम को मालुम है सो तुम सर
कार कंपनी को लिखदे और जवाब पंचान का है
श्री राजा ठाकुर सींघ राजे जीत सींघ के वखत मी
यांथा उन दिनों में सकीम था संवत् १८८८ के
बीच लडकी कमेदास सी वेस्यालेर जप्रन कीसें
सादी राजे ठाकुर सींघ ने अपने घर में ल्याके कोई
इसके बाद राजा जीत सींघ हगामे सिखों के मुल
ख कुलु में के प्रजा के सर्वनास ... और अमल
दो रो सिखों की मुलख कुलु मे हुई तो महाराजे
मेरसीह ने मारफत सिरदार लेहणा सिंह मजीठि
ऐ की ठाकुर सीह को कीपोना टेढो सीह राजे कुल्लु
वाले का था बुलाई के राजटीका चकसा उस साल
मे अपर जपुत्र क मेदास की लडकी सो पैदा हुए
तुम असल है इत्ना है मारे को खबर है सो लिख दिया